

# सिंघी जैन ग्रन्थ माला

\*\*\*\*\*[ ग्रन्थांक ४२ ]\*\*\*\*\*

श्री जिनपालोपाध्याय-सङ्कलित

## खरतरगच्छ बृहद्गुर्वावलि



**SINGHI JAIN SERIES**

\*\*\*\*\*[ NUMBER 42 ]\*\*\*\*\*

**KHARATARA GACCHA BRIHAD GURVAVALI**

(A COLLECTION OF WORKS OF JINAPALA UPADHYAYA AND OTHERS  
RELATING TO THE SPIRITUAL LINEAGE OF THE EMINENT  
ACARYAS OF THE KHARATARA GACCHA)

# SINGHI JAIN SERIES

A COLLECTION OF CRITICAL EDITIONS OF IMPORTANT JAIN CANONICAL,  
PHILOSOPHICAL HISTORICAL LITERARY, NARRATIVE AND OTHER WORKS  
IN PRAKRIT, SANSKRIT, APABHRAMŚA AND OLD RAJASTHANI  
GUJARATI LANGUAGES, AND OF NEW STUDIES BY COMPETENT  
RESEARCH SCHOLARS

ESTABLISHED

IN THE SACRED MEMORY OF THE SAINT LIKE LATE SETH

ŚRĪ DĀLCHANDJĪ SINGHĪ  
OF CALCUTTA

BY

HIS LATE DEVOTED SON

DANASILA-SAHITYARASIKA-SANSKRITIPRIYA  
SRI BAHADUR SINGH SINGHĪ

DIRECTOR AND GENERAL EDITOR

ACHĀRYA JINA VIJAYA MUNI

PUBLISHED

UNDER THE EXCLUSIVE PATRONAGE OF

SRI RAJENDRA SINGH SINGHĪ  
AND  
SRI NARENDRA SINGH SINGHĪ

BY THE DIRECTOR OF

SINGHI JAIN SHASTRA SHIKSHAPITH  
BHARATIYA VIDYA BHAVAN

**BOMBAY**



क ल क च्चा नि वा सी  
साधुचरित-श्रेष्ठिवर्य श्रीमद् डालचन्दजी सिंघी पुण्यस्मृतिनिमित्त  
प्रतिष्ठापित एवं प्रकाशित

## सिंघी जैन ग्रन्थ माला

[ जैन धार्मिक, दार्शनिक, साहित्यिक, ऐतिहासिक, वैज्ञानिक, कथात्मक-इत्यादि विविधविषयगुम्फित  
प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश, प्राचीनगूर्जर-राजस्थानी आदि ज्ञानाम्पानियक सार्वजनीन पुरातन  
वाक्य तथा नूतन संशोधनात्मक साहित्य प्रकाशिनी सर्वश्रेष्ठ जैन ग्रन्थामलि ]

प्रतिष्ठाता

श्रीमद्-डालचन्दजी-सिंघीसत्पुत्र

स्व० दानशील-साहित्यरसिक-संस्कृतिप्रिय

श्रीमद् वहादुर सिंहजी सिंघी



प्रधान सम्पादक तथा संचालक

आचार्य, जिन विजय मुनि

अधिष्ठाता-सिंघी जैन शास्त्र शिक्षापीठ

\*

संरक्षक

श्री राजेन्द्र सिंह सिंघी तथा श्री नरेन्द्र सिंह सिंघी

प्रकाशनकर्ता-अधिष्ठाता

सिंघी जैन शास्त्र शिक्षा पीठ

भारतीय विद्या भवन, वन्द्य ई

प्रकाशक-अयनाह्वय, इ. ए. वी. ओनररी कोंक्रेटर भारतीय विद्या भवन, कोंक्रेटी रोड, बम्बई, नं. ७  
मुद्रक-कर्मचारी मारामण चौपरी, निर्देशकालय प्रेस, २९-३८ कोन्क्रेट स्ट्रीट, बम्बई, नं. २

श्री जिनपालोपाध्यायादि-विद्वत्कर्तृक

# खरतरगच्छबृहद्गुर्वावल्लि

सङ्गाहक एवं संपादक

आचार्य, जिनविजय मुनि

ऑनररी मेंबर

जर्मन ओरिएण्टल सोसाइटी, जर्मनी; भाण्डारकर ओरिएण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट एता, (दक्षिण);  
गुजरात साहित्यसभा, नहमदावाद ( गुजरात ); विश्वेश्वरानन्द वैदिक  
शोध प्रतिष्ठान, होंसियारपुर (पंजाब)

ऑनररी डायरेक्टर

राजस्थान ओरिएण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, जयपुर ( राजस्थान )

निवृत्त सम्मान्य नियामक भारतीय विद्या भवन, बम्बई



प्रकाशनकर्ता-अधिष्ठाता

सिंघी जैनशास्त्रशिक्षापीठ

भारतीय विद्या भवन, बम्बई

विक्रमाब्द २०१२ ]

प्रथमावृत्ति

[ शिलाब्द १९५६

संख्यांक ४२ ]

सर्वाधिकार सुरक्षित

[ मूल्य रु. ७-०-०

## ॥ सिंधीजैनग्रन्थमालासम्पादकप्रशस्तिः ॥

स्वस्ति श्रीमेदापाठस्यो देवो भारतविश्रुतः । रूपाहेलीति सत्ताम्री पुरिका तत्र मुस्थिता ॥	१
सदाचार-विचाराभ्यां प्राचीननृपतेः समः । श्रीमच्चतुरसिंहोऽत्र राठोडान्वयभूमिपः ॥	२
तत्र श्रीवृद्धिसिंहोऽभूद् राजपुत्रः प्रसिद्धिभाक् । क्षात्रधर्मधनो यश्च परमराकुलाग्रणीः ॥	३
मुञ्ज-भोजमुखा भूषा जाता यस्मिन् महाकुले । किं वष्यति कुलीनत्वं तत्कुलजातजन्मनः ॥	४
पत्नी राजकुमारीति तस्याभूद् गुणसंहिता । चातुर्य-रूप-लावण्य-सुवाक् सौजन्यभूषिता ॥	५
द्वित्रियार्णां प्रभापूर्णां शौर्योद्दीप्तमुवाकृतिम् । यां द्रष्टुं व जनो मेने राजन्यकुलजा स्त्रियम् ॥	६
पुत्रः किसनसिंहाख्यो जातस्तयोरनिप्रियः । रणमहद् इति चान्यद् यक्षाम जननीकृतम् ॥	७
श्रीदेवीहंसनामाऽत्र राजपुत्र्यो यतीश्वरः । ज्योतिर्मैपत्र्यविद्यानां पारगामी जनप्रियः ॥	८
आगतो मरुदेनाद् यो भ्रमन् जनपदान् वहन् । जालः श्रीवृद्धिसिंहस्य प्रीति-श्रद्धास्पर्दं परम् ॥	९
तेनाद्याप्रतिभ्रमणा स तत्सुतुः स्वसन्नधौ । रक्षितः शिक्षितः सम्यक्, कृतो जैनमतानुगः ॥	१०
दीर्भाग्यात् तच्छिशोर्वासे गुरु-तातौ दिवंगतौ । विमूढः स्वगृहात् सोऽथ यदच्छया विनिर्गतः ॥	११

तथा च—

भ्रान्त्वा नैकेषु देवेषु संसेव्य च अहन् नरात् । दीक्षितो मुण्डितो भूय जातो जैनमुनिस्ततः ॥	१२
ज्ञातान्यनेकशाखाणि नानाधर्ममतानि च । मध्यस्थवृत्तिना तेन तत्स्वातत्त्वगद्येषिणा ॥	१३
अपीता विविधा भाषा भारतीया पुरोपजाः । अनेका लिपयोऽप्येवं प्रव-नूतनकालिकाः ॥	१४
येन प्रकाशिता नैके ग्रन्था विद्वत्प्रसंसिताः । लिखिता बहूनां लेखा गेतिहृतव्यगुम्फिताः ॥	१५
बहुनिः सुविद्वद्दिलान्मण्डलैश्च स संकृतः । जिनविजयनाम्नाऽयं विख्यात सर्वनाभयद् ॥	१६
तस्य तां विधुर्तं ज्ञात्वा श्रीमद्ग्रांथीमहात्मना । आहूतः सादरं पुण्यपत्तनात् स्वयमन्यदा ॥	१७
पुरे चाहम्प्रदाभादे राष्ट्रीयः शिक्षणालयः । विद्यापीठ इति ख्यात्या प्रतिष्ठितो यदाऽभयत् ॥	१८
आचार्यत्वेन तत्रोच्चैर्नियुक्तः स महात्मना । रत्न-मुनि-निधीन्द्रदेवे पुरा तत्त्वा ख्य मन्दिरे ॥	१९
वर्षाणामष्टकं यावत् सम्भूय तत् पदं ततः । गत्वा जमिनराष्ट्रे स तत्संस्कृतिसमीपतवान् ॥	२०
तत आगत्य सैहस्रो रात्रकार्यं च सक्रियम् । कारावातोऽपि सम्प्राप्तो येन स्वातन्त्र्यसङ्घरे ॥	२१
क्रमात् ततो विनिर्मुक्तः स्थितः दान्ति निकेतने । विश्वन्यकरन्द्रीश्वरीन्द्रनाथभूषिते ॥	२२
सिंघीपदयुते जैनज्ञानपीठं तदाधितम् । स्थापितं तत्र सिंघीश्रीडालचन्द्रस्य स्तुना ॥	२३
श्रीवहादुरसिंहेन दानवीरेण धीमता । स्मृत्यर्थं निजतालस्य जैनज्ञानप्रसारकम् ॥	२४
प्रतिष्ठितश्च तस्यासौ पदेऽधिष्ठातृसञ्ज्ञकः । अथापयन् वरान् सिंघ्यान् ग्रन्थयन् जैनवाङ्मयम् ॥	२५
तस्यैव प्रेरणां प्राप्य श्रीसिंघीकुलहेतुना । स्वपितृश्रेयसे ह्येषा प्रारब्धा ग्रन्थमालिका ॥	२६
अर्थवं विगतं तस्य वर्षाणामष्टकं पुनः । ग्रन्थमालात्रिसार्धिस्रष्टुत्तित्तु प्रयस्यतः ॥	२७
याणैर्बन्धेनैवेन्द्रदेवे सुवाङ्मनसि स्थितः । सुंदीति विरदपातः कन्दैयालालधीमन् ॥	२८
प्रयुक्तो भारतीयानां विद्यानां पीठनिर्मितौ । कर्मनिष्ठस्य तस्याभूत् प्रयत्नः सफलोऽपिरात् ॥	२९
विदुषां श्रीमतं योग्यान् पीठे जातः प्रतिष्ठितः । भारतीय पदेषु विद्या भवन सञ्ज्ञया ॥	३०
आहूतः सहकार्यार्थं स मुनिसेन सुहृदा । ततःप्रभृति तत्रापि तत्कार्यं सुप्रवृत्तान् ॥	३१
तद्वचनेऽन्यदा तस्य सेवाऽधिका ह्यपेक्षिता । स्वीकृता च सद्भावेन साऽप्युपाचार्यपदाधिता ॥	३२
मन्द-निर्णय-चन्द्रदेवे वैकमे विहिता पुनः । पृथग्ग्रन्थावलीस्यैर्विहृतं तेन नव्ययोजना ॥	३३
परामर्शात् तत्तन्स्य श्रीसिंघीकुलभास्वता । भाविद्या भयनायेयं ग्रन्थमाला समर्पिता ॥	३४
प्रदत्ता दत्तादाहरी पुनस्तपोपदेशतः । स्वपितृस्मृतिमन्दिरकरणाय मुनीर्निना ॥	३५
देवाद्भवे गते काले सिंघीयार्थं दिवंगतः । यन्स्य ज्ञाननेत्रायां साहाय्यमभ्योत् महत् ॥	३६
पितृकार्यप्रगत्यर्थं यत्तदाहं सदात्मनः । राजेन्द्रनिहमुन्यैश्च साकृतं तद्वचनम् ॥	३७
पुण्यश्लोकपितृनाम्ना ग्रन्थागाररुत्ने पुनः । बन्धुगणैश्च गुणश्रेष्ठो ह्यद्वैलक्षं धनं ददौ ॥	३८
ग्रन्थमालाप्रसिद्धार्थं पितृवत् तस्य वाक्षितम् । धीमिधीमत्सुधैः सर्वं तद्विनाशमुविधीयते ॥	३९
विद्वज्जनहताह्लादा सच्चिदानन्ददा सदा । चिरं नन्दारियं लोके जिनविजयभास्वता ॥	४०

# खरतरगच्छ-बृहद्गुर्वावलि-विषयानुक्रम



	प्राम्थारिकरक्तव्य	१-३
	खरतरगच्छपञ्चावलिग्रंथ - किञ्चिद्वक्तव्य	३-५
	खरतरगच्छगुर्वावलिका ऐतिहासिक महच्च	६-१२
१	वर्द्धमानाचार्यवर्णन	- १
२	जिनेश्वरसूरिवर्णन	१-६
३	जिनचन्द्रसूरि - अभयदेवसूरिवर्णन	६-८
४	जिनवल्लभसूरिवर्णन	८-१४
५	जिनदत्तसूरिवर्णन	१४-२०
६	जिनचन्द्रसूरिवर्णन	२०-२३
७	जिनपतिसूरिवर्णन	२३-४८
८	जिनेश्वरसूरिवर्णन	४८-५४
	जिनपालोपाध्यायप्रथितग्रन्थभागपूर्ण	(५०)
९	जिनप्रबोधसूरिवर्णन	५४-५८
१०	जिनचन्द्रसूरिवर्णन	५९-६९
११	जिनकुशलसूरिवर्णन	६९-८५
१२	जिनप्रभसूरिवर्णन	८५-८८

## बृह्दाचार्यप्रबन्धावलि

१	वर्द्धमानसूरिप्रबन्ध	८९
२	जिनेश्वरसूरिप्रबन्ध	९०
३	अभयदेवसूरिप्रबन्ध	९०
४	जिनवल्लभसूरिप्रबन्ध	९०
५	जिनदत्तसूरिप्रबन्ध	९१
६	जिनचन्द्रसूरिप्रबन्ध	९२
७	जिनपतिसूरिप्रबन्ध	९३
८	जिनेश्वरसूरिप्रबन्ध	९३
९	जिनसिंधसूरिप्रबन्ध	९३
१०	जिनप्रभसूरिप्रबन्ध	९३-९६
	खरतरगच्छ-गुर्वावलिगतविशेषनाम्नां सूचि :	९७-११२

सिंधी जैन ग्रन्थमालाके ४२ वें गुच्छकके रूपमें, प्रस्तुत होने वाली इस 'खरतर गच्छीय युगप्रधानाचार्य गुर्वावली' (संक्षेपमें - खरतर वृहद् गुर्वावली) की प्राचीन हस्तलिखित प्रति, मूलतः वीकानेर निवासी श्रीयुत अगरचन्दजी नाहटाको, वहकिं छुप्रसिद्ध क्षमाकल्याणजीके ग्रन्थभंडारमें उपलब्ध हुई थी। कोई १९-२० वर्ष पहले, इनने उस प्रतिको हमें देखनेके लिए मेजा। ग्रन्थको देखनेसे, हमें ऐतिहासिक दृष्टिसे यह बहुत महत्त्वका माद्दम दिया, अतः प्रस्तुत ग्रन्थमालामें इसे प्रकाशित करनेका हमने निश्चय किया। तदनुसार प्रेसमें देने योग्य ग्रन्थकी प्रतिलिपि (प्रेसक्रॉपी) करवाई गई। प्रतिलिपिके पढ़ने पर ज्ञात हुआ कि मूल प्रति बहुत ही अशुद्ध रूपमें लिखी गई है। प्रत्येक पंक्ति अशुद्धप्राय ज्ञात हुई। अतः इसका कोई प्रत्यन्तर कहींसे उपलब्ध हो तो उसे प्राप्त करनेका प्रयत्न किया गया पर उसमें हमें सफलता नहीं मिली। तब उसी प्रतिको वारंवार आद्योपान्त पढ़ पढ़ कर, उसकी अशुद्धियोंका तारण किया गया, तो ज्ञात हुआ कि, जिस लहिया (लिपिकारक) ने यह प्रति लिखी है, उसने अपने सममुखवाली मूलधार प्रतिके कुछ अक्षरोंको, भ्रमसे कुछ अन्य ही अक्षर समझ समझ कर, उनके स्थान पर, अपने अक्षर ज्ञानके मुताविक, अन्य अक्षर लिख डाले हैं; और इससे, ग्रन्थ बहुत ही अशुद्ध हो गया है। ग्रन्थगत विषय हमारे लिये सुपरिचित था और इस प्रकारकी अन्याय्य अनेक छोटी-बड़ी गुर्वावलियां - पद्यावलियां भी हमारे संग्रहमें उपलब्ध थीं; अतः तदनुसार हमने सारे ग्रन्थके पाठको शुद्ध करनेका यथाशक्य प्रयत्न किया। कई महिनोके परिश्रमके बाद हम इस ग्रन्थकी शुद्ध प्रतिलिपि करनेमें सफल हुए। बादमें हमें इस गुर्वावलीकी एक अन्य मुद्रित और अपूर्ण प्रति प्राप्त हुई, जिसके साथ मिलान करने पर हमें ज्ञात हुआ कि हमने जो पाठकी शुद्धि की है वह ठीक उस प्रतिमें उसी तरह मिल रहा है। उस अपूर्ण प्रतिमें, कुछ पाठभेद भी दृष्टिगोचर हुए, जिनको हमने इस मुद्रित पाठके नीचे, पाद-टिप्पणियोंमें दे दिये हैं। वह अपूर्ण प्रति केवल ५ पन्नेकी थी, जो प्रस्तुत ग्रन्थके २३ वें पृष्ठ पर छपी हुई १२ वीं पंक्तिके 'श्री जिनपतिसुरिरिति नाम कृतम्।' इस वाक्यके साथ खण्डित हो जाती है।

इस गुर्वावलीकी उक्त मूल प्रतिके दो पृष्ठोंका न्हाक बनवा कर, उनका प्रतिचित्र साय दिया जा रहा है, जिससे मूल प्रतिके आकार-प्रकारका एवं लिपिके स्वरूपका तादृश ज्ञान हो सकेगा।

इस ग्रन्थका मुद्रण कार्य बहुत समयसे समाप्त हुआ पडा है पर विधिके किसी अज्ञात संकेतानुसार हम अभी तक इसको प्रसिद्धिमें रख नहीं सके। हमारी इच्छा रही कि इस निशिष्ट प्रकारकी ऐतिहासिक गुर्वावलिसे संबद्ध, तत्कालीन जैन श्रेताम्बर संग्रहालयों और गच्छोंके वारोंमें भी, निस्तुत ऊहापोहात्मक निबन्ध लिखा जाय और यथाज्ञात सब प्रकारकी ऐतिहासिक सामग्रीय संकलन कर दिया जाय। इस विषयकी बहुत सी सामग्री हमने संचित कर रखी है; और इसी लिये कई वर्षों तक इसकी प्रसिद्धि रुकी रही। पर हमारे लिये यैसा करना अब संभव नहीं रहा, अतः इसको इसी मूल रूपमें ही प्रसिद्धिमें रख देना उचित समझा है।

प्रस्तुत 'गुर्वावलीका ऐतिहासिक महत्त्व' बनवाने वाला श्री अगरचन्दजी नाहटाका एक लेख, हमारी संपादित 'भारतीय विद्या' नामक त्रैमासिकी बोधपत्रिकाके, प्रथम वर्षके ४ वें अंकमें प्रकाशित हुआ है। इस लेखके प्रारम्भमें, गुर्वावलीकी परिचायक एक छोटी-सी नोंप (नोट) हमने लिखी थी जिसको यहाँ उद्धृत करते हैं। मार्गमें आगोंके पृष्ठोंमें नाहटाजीका यह लेख भी मुद्रित किया जाता है, जिसमें पाठकोंको प्रस्तुत ग्रन्थके ऐतिहासिक तथ्योंके वारोंमें योग्य जानकारी प्राप्त हो सकेगी।

[ "सिंधी जैन ग्रन्थमालामें खरतरगच्छ-युगप्रधानाचार्य-गुर्वावली नामक एक महत्त्व गूण ग्रन्थ छप रहा है जो प्राय ही प्रकाशित होगा। इस ग्रन्थमें निबन्धकी ११ थीं शताब्दीके प्रारम्भमें होने वाले आचार्य वर्द्धमान सूरिसे ले कर १४ वीं शताब्दीके अन्तमें होने वाले निबन्ध सूरि तकके खरतर गच्छके मुख्य आचार्योंका निस्तुत चरितवर्णन है। गुर्वावली

# खरतरगच्छ-पट्टावलि संग्रह

संग्राहक एवं संपादक मुनि जिनविजय, अधिष्ठाता-सिंधी जैन ज्ञानपीठ, शान्तिनिकेतन ।  
(प्रकाशक-यावूर्ण चन्द्रजी नाहार, इण्डियन मिरर स्ट्रीट, फलकता ।)

\*

## संपादकीय किञ्चित् वक्तव्य ।

लगभग ६१० वर्षों से खरतरगच्छीय पट्टावलियोंका यह छोटा सा संग्रह छप कर तैयार हुआ था, लेकिन विधिके किसी अत्येव संकेतानुसार आज तक यह यों ही पड़ा रहा और यदि बिद्वान् यावूर्ण चन्द्रजी नाहारकी उपालम्भ भरी हुई मीठी चुटकियोंकी लगातार भरमार न होती तो शायद कुछ समय बाद यह संग्रह साराका सारा ही बीमकके पेटमें जा कर गिरीन हो जाता ।

पूनामें रह कर जब हम 'जैनसाहित्य-संशोधक' का प्रकाशन करते थे उस समय अहमदाबाद-निवासी साहित्य-रसिक विद्वान् भ्रावक श्री.के.रावबाल प्रे० मोदी B. A. LL. B. ने खरतरगच्छ की एक पुरानी पट्टावलीकी लिखित प्रति हमें ला कर श्री-जिसमें इस संग्रहमें की प्रथम ही छपी 'खरतरगच्छ-सुदरिपरंपरा-प्रशाली' लिखी हुई थी । उस समय तक खरतरगच्छ की जितनी पट्टावलियाँ हमारे देखने आयना संग्रह करनेमें आईं उन सबमें यह प्रशाली हमें प्राचीन दिखाने पड़ी इसलिये हमने इसकी तुरंत नकल कर, 'जैन सा० सं०' के परिशिष्ट रूपमें छपवा देनेके विचारसे प्रेरितमें दे दी । कुछ समय बाद मोदीजीने एक और पट्टावली मेरी जो गद्यमें थी और साथमें उन्होंने यह भी इच्छा प्रदर्शित की कि इसे भी यदि उसी प्रशालिके साथ छपवा दिया जाय तो अच्छा होगा । हमने उनकी भी नकल कर प्रेषितमें छपानेके दे दी । जब ये प्रेषित केंचोत्र हो कर आईं तो पूरे फार्म होनेमें कुछ कुछ खाली रहते दिखाई दिये, तब हमने सोचा कि यदि इसके साथ ही साथ उपान्याय श्री क्षमाकरव्यापारी की बनाई हुई वृहत्पट्टावलि भी दे दी जाय तो खरतरगच्छके आचार्योंकी परंपराका १९ वीं शताब्दि पर्यंतका पुरातन्त्र, प्रषट हो जायगा और इतिहास प्रेमियोंकी उल्लेख अधिक लाभ होगा । इस पट्टावलीकी प्रेष कापी की हुई हमारे संग्रहमें बहुत प.ले ही से पढ़ी हुई थी; अतः हमने उसे भी प्रेषितमें दे दिया । इसी तरह की, लेकिन दूसरे प्राचीन एक और पट्टावली हमारे पास थी उसे भी, प्रसूततर होनेसे विशेष उपयोगी समझ कर, इसी संग्रहमें प्रकट करनेका हमें लोभ हो आया और उसे भी छपने दे दिया । इस प्रकार खरतर पट्टावलियोंका यह छोटा सा संग्रह जब तैयार हो गया, तब हमने इसे 'जैन सा० सं०' के परिशिष्ट रूपमें न दे कर स्वतंत्र पुस्तकाकार, प्रकट करनेका विचार किया और यह स्वतंत्र पुस्तकाकार विचार मनमें सुसते ही हमारे दिलमें एक नया भूत आ घूसा । हम सोचने लगे कि जब पुस्तक ही बनाना है तब फिर क्यों नहीं विशेष रूपसे एक संकलित ऐतिहासिक ग्रंथके आकारमें इसे तैयार कर दिया जाय और खरतर गच्छके इतिहासके जितने मुख्य मुख्य और महत्वके साधन हों उन्हें एकत्र रूपमें संग्रहीत कर दिया जाय। क्यों कि हमारे संग्रहमें इस विषयकी किताबी ही सामग्री-इन पट्टावलियोंके अतिरिक्त कई अन्य भाषाकी पट्टावलियाँ, ग्रंथप्रशालियाँ तथा ख्यात आदि विविध प्रकारकी ऐतिहासिक सामग्री-इकट्ठी हुई पढ़ी थी । उस सब सामग्रीको संकलित कर ऐतिहासिक रूढ़ापोह करनेवाली विस्तृत भूमिका और टीका टिप्पणी आदि साथमें लगा कर इस स्रष्टको परिपूर्ण बना दिया जाय तो श्रेताम्बर जैन संप्रके एक बड़े भारी शाखा-समुदायका अच्छा और प्रामाणिक इतिहास तैयार हो जाय । इस भूतके आवेशानुसार हमने उस सब सामग्रीका संकलन करना शुरु किया । ऐसा करनेमें हमें कुछ अधिक समय लगा गया और अहमदाबादके पुरातत्त्व मंदिरके आचार्यपदके भारने हमारी पूनकी विशेष स्थितिके अस्तिर बना दिया । इसलिये इस संग्रहके विस्तृत-संकलनका जो विचार हुआ था वह स्थिति होने लगा और विरहाल तक कुछ कार्य न हो सका । इधर जिस प्रेषितमें यह संग्रह छपा उसके मालिकने छापाईके खर्च आदिना तवाजा करना शुरु किया । जिस विस्तृत रूपमें इसे प्रकाशित करनेका सोचा था उसमें बहुत कुछ समय और अर्थव्ययकी आवश्यकता अनुभूत हुई और शीघ्र ही इस कार्यके परिपूर्ण करने जैसे संयोग दिखाई न दिये, अतः हमने उस विचारको स्मरित किया और यह संग्रह जो इस रूपमें छप गया था, इसे ही प्रकाशित कर देना उचित समझा ।

इसी बीचमें यावूर्ण श्री पूणचन्द्रजी नाहारके अवलोकनमें यह छपा हुआ संग्रह आया और आपने इसे अपने खर्चोंसे प्रकाशित कर अपनी धर्मपत्नी श्रीमती इंद्रप्रभातीजीके ज्ञान संवर्धनी धर्पके उद्यानप निमित्त निवेदन कर देनेका भूमिप्राय प्रकट किया । तदनुसार पूनासे यह छपा हुआ ग्रंथ-भाषा वलन्तरी संगवा लिया गया और प्रेषका मिल इत्यादि चुकता किया गया । इस संग्रहके सामने हम कुछ छोटे सान्द्र लिख दें तो इसे प्रकाशित कर दिया जाय ऐसी यावूर्णकी इच्छाके हमने सादर स्वीकार कर, हम इस विषयमें कुछ सोचते ही थे कि कुछ ऐसे संग्रह, एकके बाद एक, उपस्थित होते गये जिससे वर्षों तक हम जनकी उस आशावा पालन नहीं कर सके और २१४ पृष्ठके कामको २१४ वर्ष तक डेलते रहना पडा । .

\*

सन् १९२८ के प्रारम्भमें महात्माजीने गुजरात-विद्यापीठकी पुनर्भंडना की, और विद्यापीठका ध्येय 'विद्या' नहीं 'सिवा' निश्चित किया और सामने कई प्रतिशोधकोंका बन्धन भी लगाया ।-हमारा उसमें कुछ विशेष मतभेद रहा और हमने अपने विचारोंके स्थिर करनेके लिए कुछ समय तक, विद्यापीठके वातावरणसे दूर रहना चाहा । इन्हीं बाद तुरंत हमारा इरादा युरोप जानेका हुआ । युरोपमें सामाजिक और औद्योगिक संशोधका विशेषावलोकन करनेका हमें अधिक मौका मिला और उसमें हमें व्यापक रसिक उत्पन्न हुई । हमारा जो आजीवन अन्धकार-विषय संशोधनका है, उसमें तो हमें बड़ी कोई नवीन सीखनेकी बात नहीं दिखाई थी, क्यों कि जिस पद्धति और दृष्टिसे युरोपियन पण्डितगण संशोधन कार्य करते हैं, वह हमें यथेष्ट ज्ञात थी और उसी पद्धति तथा दृष्टिसे हम बहुत समयसे अपना संशोधन-कार्य करते भी आते थे ।

केवल बहाके विद्वानोंका उस्ताह और एकाग्रभाव विशेष अनुकरणीय माहम हुआ। हमें जो खास अध्ययन करनेके विशेष विचार माहम दिये, वे बहाके समाजवाद विषयक थे। इन विचारोंका अध्ययन करते हुए हमारी जीवनाभ्युत्थ जो सशोधन रचि है, वह शिथिल हो चली। समान-जीवनके साथ सम्बन्ध रखने वाली बातोंने मस्तिष्कमें अज्ञा जमाता शुरु किया। इन बातोंका विशिष्ट अध्ययन करनेके लिये हमारी इच्छा बहा पर कुछ अधिक काल तक ठहरनेकी थी, लेकिन सयोगवदा हमझे जल्दी ही भारत लौट आना पडा। इधर आने पर नाहारजने इस सप्रहकी सर्वप्रथम ही याद दिलाई, लेकिन सत्याग्रहके नूतन युद्धमें जुड जानेके कारण और फिर जेलखाने जैसे एकाग्रतावासके विरक्षण अनुभवानन्दमें निमग्न हो जानेके कारण इन, पुरानी बातोंका स्मरण करना भी कब अच्छा लगता था। एक तो यो ही मस्तिष्कमें समाज-जीवनके विचारोंका आन्दोलन बुद्धदौड कर रहा था, और उसमें फिर भारतीय इम नूतन राष्ट्रकान्तिके आदोलनने सहचार किया। ऐसी स्थितिमें हमारे जैसे नित्य परिवर्तनशील प्रकृति वाले और क्लान्तिमें ही जीवनका विकास अनुभव करने वाले मनुष्यके मनमें, वर्षों तक पुराने विचारोंका सप्रह कर रखना, और फिर जब चाहें तब उन्हें अपने सम्मुख एकदम उपस्थित हो जानेकी आदत बनाये रखना तु साध्य सा है।

जेलमुक्ति होने पर विषाता हमें शान्तिनिवृत्तन खींच लाया। विश्वभारतीके शानमय वातावरणमें हमारे मनको फिर शानोपपासनाकी तरफ खींचना शुरु किया और हमारी जो स्वाभाविक सशोधन रचि थी, उसको फिर सतेन बनाया। वर्षोंसे हमने २।४ ऐतिहासिक ग्रन्थोंके सम्पादन और सशोधनका स्रक्ष्य कर रहा था और उसका कुछ काम ही भी चुका था, इगलिये रह रह कर यह हममें आयाही करता था कि यदि इस स्रक्ष्यके पूरा करनेका कोई मन पूरा साधन सम्पन्न हो जाय, तो एक बार इनको पूरा कर लेना अच्छा है। बावू श्री बहादुरसिंहजी सिंधीके उल्हाह, औदार्य, सौजन्य और सौहार्दने हमारे इन स्रक्ष्यको एवदम मूर्तिमन्त बना दिया और हम 'मे सोचते थे, उससे भी बड़ी अधिक मन पूरा साधनकी संप्राप्ति देख कर, परिणाममें हमने सिंधी जैन ज्ञानपीठ और सिंधी जैन ग्रन्थमाला का कार्यभार उठाना खीकार कर लिया।

जबसे हम यहा आये, तभीसे इस सप्रहके लिये श्री नाहारजीका बराबर स्मरण दिगना चालू रहा। हम भी आप लिखते हैं, कल लिखते हैं, ऐसा जवाब दे कर उन्हें आशा दिलाते रहते थे। बहुत समय भीत जानेके कारण इस विषयमें जो कुछ हमारे पुराने विचार थे और जो कुछ हमने लिखना सोचा था, वह रश्मि पट परसे अस्थ सा हो गया। जिन प्रतियों परसे यह सप्रह सुदित हुआ था, वे भी पासमें नहीं रहनेसे, इस विषयमें क्या लिखें, कुछ सूझ नहीं पवती थी। 'विज्ञप्ति निवेण', 'इपास कोप', 'शुभुजय तीर्थोदार प्रवण' इत्यादि पुस्तकोंके सपादनके बाद हमारा हिरी-लेखन प्राय बन्द-सा ही है। पिछले कई वर्षोंसे निन्दर गुजराती भाषा ही में चि तन, मनन, लेखन, और वाच्यब्यहार चलते रहनेसे हिन्दी भाषाका एक तरहसे परिचय ही छूट गया। इस कारणसे कुछ हिन्दी लिखनेमा ठीक ठीक चित्तैकाय न हो पाता था। लेकिन पिछले कुछ दिनों हमारा साहित्य-सप्रह हमारे पास पहुंच गया और वर्षोंसे संकलनों में बंद हुए पुराने नामों और टिप्पणोंमें उचल पुचल करते समय, इस विषयके कुछ साधन भी हाथमें आ गये, जिससे ये पकिया लिखनेका मनमें कुछ विचार हो आया। यस यही इस सप्रहके बारेमें हमारा किञ्चित वक्तव्य है।

\*

थेताम्बर जैन सभ जिस स्वरूपमें आन विद्यमान है, उस स्वरूपके निर्माणमें, खरतर गच्छके आचार्य, यति और धावक-समुहना बहुत बडा हिरसा है। एक तपागच्छने छोड कर दूसरा और कोई गच्छ इसके गौरवकी बराबरी नहीं कर सकता। कई बातोंमें तपागच्छसे भी इस गच्छका प्रभाव विशेष गौरवान्वित है। भारतके प्राचीन गौरवको अशुण्य रखने वाली राष्ट्रतानेकी वीर भूमिना, पिछले एक हजार वर्षका इतिहास, ओसवाल जातिके शौर्य, औदार्य, बुद्धि-चातुर्य और वाणिज्य-व्यवसाय-नीशल भादि महद् गुणोंसे प्रवीत है और उन गुणोंका जो विकास इस जातिमें, इस प्रकार हुआ है, वह मुख्यतया खरतरगच्छके प्रभावान्वित मूल पुरुषोंके सनुपदेश तथा शुभाशीर्वादका फल है। इसलिये खरतरगच्छका उच्चक इतिहास यह केवल जैन सभके इतिहासका ही एक महत्त्वपूर्ण प्रकरण नहीं है, बल्कि समग्र राष्ट्रतानेके इतिहासका एक विशिष्ट प्रकरण है। इस इतिहासके स्रक्ष्यमें सहायभूत होने वाली विपुल साधन-सामग्री इधर-उधर नष्ट हो रही है। जिस तरहकी पडावलि या इस सप्रहमें स्रष्टीत हुई हैं, वैसी कई पडावलियों और प्रसस्तियों स्रष्टीत की जा सवती हैं और उनसे विस्तृत और स्रक्ष्यलाभक इतिहास तैयार किया जा सकता है। यदि समय अनुकूल रहा, तो 'सिंधी जैन प्रथमाला' में एक-आध ऐसा बडा सप्रह जिज्ञानुओंको भीविषयमें देरनेको मिलेगा।

बाबू श्री पूरणबदनी नाहारने बडा परिश्रम और बहुत इत्य व्यय करके जैसलमेरके जैन शिलालेखोंका एक अधूरे सप्रह प्रकानित कर इस विषयमें विद्वानों और जिज्ञानुओंके सम्मुख एक सुन्दर आदर्श उपस्थित कर दिया है। इसके अवलोकनेसे, राष्ट्रतानेके जते पुराने स्थानोंमें जैनोंके गौरवके वितने सारक-स्वम बने हुए हैं तथा उनसे हमारे देशके ज्वलन्त इतिहासकी कितनी विशाल स्रष्टि प्राप्त हो सवती है उसकी कुछ कल्पना आ सवती है। इस ग्रथमें प्राय खरतरगच्छके ही इतिहासकी बहुत सामग्री स्रष्टीत है जो इम पडावलियाले सप्रहकी बातोंको सुष्टि करती है तथा कई बातोंकी पूर्ति करती है। इन सब बातोंके दिग्दर्शनकी यह जगह नहीं है। ऐसे सप्रहोंके स्रक्ष्यन करनेमें कितना परिश्रम आवश्यक है वह इस विषयक विद्वान ही जान सकता है 'विद्वानेव जानानि विद्वज्जनपतिश्रम'।

जैसलमेरके लेखोंका ऐसा सुन्दर सप्रह प्रकानित कर तथा इस पडावली सप्रहमें भी प्रकट करवा कर श्रीमान नाहारजीने खरतरगच्छकी अनमोल सेवा की है। एतदर्थे श्राप अनेक धन्यवादके पात्र हैं। आपका इस प्रकार जो स्रष्टेपूर्ण सशोधन सेवा होत म होत यो यह सप्रह यो ही नष्ट हो जाता और इसके तैयार बरनेमें जो कुछ हमने परिश्रम किया था वह अकारण ही निष्फल जाता। अत हम भी विशेष रूपसे आपके कृतज्ञ हैं।

सिंधी जैन ज्ञान पीठ  
ज्ञान्ति निकेठन  
पट्टणया प्रथम दिन, सं १९८०

मु नि जि न वि ज य

## खरतरगच्छ - गुर्वावलि का ऐतिहासिक महत्त्व

[लेखक - श्रीयुत अग्रचन्द्रजी नाहटा - सपादक राजस्थानी]

ऐतिहासिक साहित्यकी दृष्टिसे खरतरगच्छ गुर्वावली एक अत्यन्त महत्त्वका और अपने ढंगका अद्वितीय ग्रन्थ है।

कुछ वर्ष पूर्व, चीनानेके प्राचीन जैन ज्ञान भंडारोंका अन्वेषण करते हुए हमें यह निधि उपलब्ध हुई थी। इसमें विक्रमकी ग्वाहरवीं शताब्दीके उत्तरार्द्धसे लेकर वि० स० १३९३ तकके खरतरगच्छीय जैनाचार्योंका विस्तृत और विश्वसनीय इतिवृत्त लिखा हुआ है। इस वृत्तान्तसे तत्कालीन भारतीय इतिहासकी और और बातों पर भी अच्छा प्रकाश पड़ता है। जो लोग कहते हैं कि भारतमें सप्तानुक्रमसे शुखलायद इतिहास लिखनेकी प्रणाली सर्वथा नहीं थी उन्हें निरुत्तर करनेके लिये यह ग्रन्थ एक पर्याप्त उदाहरणरूप है।

[—प्रस्तुत गुर्वावलीमें स० १३०५ आषाढ सु० १० तदना वृत्तान्त तो श्रीजिनपति सुरिजीके विद्वान् विध्य श्रीजिनपालोपाध्यायने दिने निवासी सेठ साहूजीके पुत्र हेमचन्द्रजीअभयनाराथे सन्निहित किया है। इसके पश्चात्तत्कालीन भी पद्यपर आत्मामेंके साथमें रहने वाले व दक्षतर रत्ननेवाले विद्वान् मुनियों द्वारा लिखा गया प्रतीत होता है। यह प्रति पत्र ८६ की है और प्रायः पत्रद्वयी या सोलहवीं शताब्दीमें लिखी होकर श्रीकनेरुस्थ श्रीधरमाकण्ठ ज्ञानभंडारमें विश्राम है। इनमें स० १३९३ तकका दृष्टिगत है। इसके पीछेका इतिहास जाननेके लिये हम कोई भी इस कोटिकी गुर्वावली उपलब्ध नहीं है, परन्तु श्रमगण्य इतिहास लिखनेकी प्रणाली तो पीछे भी बराबर रही है। स० १८९० की एक सूचीके अनुसार, जेमलेरके सुप्रसिद्ध ज्ञानभंडारमें, उस समय ३१२ पत्र जिनकी विस्तृत एक गुर्वावली बड़ी विद्यमान थी। यदि यह गुर्वावली प्राप्त हो जाय तो अनेकों नवीन ज्ञातव्य मिले। मेरे हैं कि अनीनर तो वर्तमान श्रीपुस्तकोंके पास प्राचीन दक्षतर भी नहीं मिलते। पाठकोंको यह ज्ञान कर प्रमत्तता होये कि दक्षतर सम्पादन पुरातत्त्वचार्य श्री जिनविजयजी जैसे विद्वान् द्वारा हो रहा है।]

यह ग्रन्थ दो तरहकी शैलीमें संकलित किया हुआ है। श्री जिनेश्वर सुरिजीसे श्री निन्दतत्त सुरिजीके स्वर्गगत स० १२११ तकका वृत्तान्त तो, स० १२९५ में मुमतिगणि द्वारा रचित 'गणधरसार्द्धशतक—शुद्धवृत्ति' के अनुसार ही प्राचीन शैलीका है। पर इसके पश्चात्तकी प्रत्येक घटना सप्तानुक्रम और शुक्लायद रूपसे लिखी गई है, जो घटनाओंके साथ साथ लिखी हुई डायरीसी प्रतीत होती है। जैनाचार्योंका निहारानुक्रम, मार्गवर्गीय ग्राम-नगर, दीक्षाए प्रतिष्ठए तत्तत् ग्रामवासी श्रावणोंके नाम, राजसभाओंमें किये गये शास्त्रार्थ, तीर्थयात्रा वर्णन—इत्यादि सभी बातें इतनी विशदताके साथ लिखी गई हैं कि तत्कालीन परिस्थिति आर्योंके सामने आ जाती है। भ्रमणशील जैनाचार्योंके प्रवास मार्गका वर्णन तो भारतीय साहित्यमें एक नवीन वस्तु है। क्यों कि भारतके साहित्यमें प्रायः इसका अभाव ही है। हमारे पास, जो कुछ विदेशी विद्वानोंने भ्रमणवृत्तान्त लिखे, वे ही उपलब्ध हैं, पर उनमें स्थानोंके नामादिमें कई भूतं हुई हैं; किन्तु इसमें विशुद्ध भौगोलिक वर्णन मिलता है।

प्रस्तुत निम्नधमें हम, इस गुर्वावलीमें उपलब्ध राजकीय इतिहास गणधरी और भौगोलिक ज्ञानोंका लक्षित परिचय देना चाहते हैं। आशा है, विद्वानोंने इससे कुछ नवीन ज्ञानव्य मिश्रण।

### राजकीय इतिहास-सामग्री

पाटणके दुर्लभराज चौलुक्यका उल्लेख।

श्री वर्द्धमान सुरिके शिष्य श्री जिनेश्वर सुरिने अण्टित्त पत्तनमें गूर्जेरेश्वर दुर्गराजकी मशमें पैलवानिरेने गाय शास्त्रार्थ कर उनको पराजित किया जिसका विस्तृत वर्णन इस पत्रावलीमें दिया गया है।

धारानरेश नरवर्मका निर्देश।

श्रीजिनवह्म सुरि [ स्वर्ग सं० ११६७ ] जब विचौड़में थे तब, पश्चात्तत्त नरवर्मकी मशमें दो दक्षिणी पण्डितोंने "कण्ठे गुणर कमठे ठकार" यह सन्वयपद रचा। स्थानीय विद्वानों व गणधरिडनेने अपनी अपनी

१ गुर्वावलीके आधर पर, प० द्वापदीकी शर्मा एम् ए न, इडिनस रिस्टोरेरड इन्स, बॉ० १९, न० ४, और पूरा कनिष्ठक, बॉ० ३, पू० ७५ में, संज्ञात नए लिखे थे जिनने एके ऐतिहासिक महत्त्वका उल्लेखनेने दिग्दर्शन कराका था। वही पर हम द्वापदीय पूर्व ज्ञानव्य प्रस्तुत करते हैं।

बुद्धि के अनुसार समस्यापूर्ति की, पर उससे उन दक्षिणी विद्वानोंको स्तुति नहा हुआ। तब किसीसे श्रीजिनदत्त सूरजीकी प्रतिभाका परिचय पा कर राजाने यह समस्यापद उनके पास भेजा। सूरजीने तत्काल ही सुदरताके साथ उसकी पूर्ति कर दी, जिसे समग्र विद्वान स्तुष्ट हुए। फिर जब सूरजी चित्तौड़से विहार कर धारा पधारे, तब नृपतिने उन्हें अपने प्रासादोंमें बुला कर उनसे धर्मापदेश श्रवण किया। राजा सूरजीका भक्त हो गया और उसने ३ लाख रुपये और ३ ग्राम उन्हें भेंट किये। परन्तु सूरजी निरीह थे। उन्होंने उस दानका प्रहण करना अस्वीकार किया, तब उनके उपदेशानुसार उसने चित्तौड़के दो जैन मन्दिरोंमें २ लाख रूपयोंसे पूजाके लिये मण्डपिकाएँ बनवा दीं।

**अजमेरके अर्णोराजका उद्वेग।**

श्री जिनदत्त सूरजी जब अजमेरमें पधारे तो वहाका राजा अर्णोराज स्वयं दर्शनार्थ आया और उनके उपदेशसे अतीव प्रसन्न हो कर उन्हें सर्वदा अजमेरमें ही रहनेकी विज्ञप्ति की। परन्तु सूरजीने साध्याचारका स्वरूप बतलाया और समय समय पर वहा आते रहनेका कह कर राजाको सन्तुष्ट किया। इस नृपतिने अजमेरके दक्षिणी भागमें पहाडीके नीचे श्रावकोंको मन्दिर बनानेके लिये यथेच्छ भूमि दी।

**त्रिभुवनगिरिका राजा कुमारपाल।**

श्री जिनदत्त सूरजीने त्रिभुवनगिरि पधार कर वहाके महाराजा कुमारपालको प्रतिशोध दिया। श्रीशक्तिनाथ मन्दिरकी प्रतिष्ठा की और उधरके प्रदेशमें प्रचुरताके साथ अपने शिष्योंको विहार कराया।

**दिल्लीके महाराजा मदनपाल।**

स० १२२३ में श्री जिनदत्त सूरजीके शिष्य श्री जिनचन्द्र सूरजी दिल्लीके निकटवर्ती ग्राममें पधारे। उनको बन्दनार्थ जाते हुए श्रावक समुदायको राजप्रासादस्थित महाराजा मदनपालने देखा और मंत्रियोंसे सूरजीके पधारनेकी खबर पा कर महाराजाने समस्त मुसाहिदों और सेनाको एकत्र किया और बड़े समारोह पूर्वक सूरजीके पास गया। उनसे धर्मापदेश श्रवण कर महाराजा अत्यन्त प्रसुद्धित हुआ और उनको अपने नगरमें पधारनेकी अत्यन्त आग्रहपूर्वक विनति की। सूरजी अनिच्छाके होते हुए भी राजाके आग्रहसे दिल्ली पधारे। उड़े भारी समारोहसे उनका प्रवेशोत्सव हुआ। महाराजा मदनपाल स्वयं सूरजीका हाथ पकड़े हुए उनकी पेशवाईमें चत्र रहा था। राजाकी प्रार्थनासे उन्होंने वहाँ चातुर्मास किया पर दुर्भाग्यवश उनका वहाँ स्वर्गवास हो गया।

**आशिका नरेश भीमसिंह।**

श्री जिनपति सूरजी स० १२२८ में बन्वेर नगरको पधारे। सवाए पा कर अशिकाके श्रावक लोग राजा भीमसिंहके साथ सूरजीके दर्शनार्थ आए। सूरजीके उपदेशसे प्रसन्न हो कर उन्हे आशिका पधारनेकी विनति की। राजाके विशेष अनुरोधसे श्री पूय आशिका आए। भूपति भीमसिंहके साथ पूर्वोक्त दिल्लीके प्रवेशकी भांति आशिकामें प्रवेशोत्सव हुआ। सूरजीने स्थानीय दिगम्बराचार्यके साथ शास्त्रार्थ किया और उसमें सूरजीका विजय हुआ। इससे आशिका (हासी) नरेश बहुत प्रसन्न हो कर सूरजीके प्रति श्रद्धालु बना।

स० १२३२ में मन्दिरकी प्रतिष्ठा करनेके हेतु सूरजी फिर आशिका पधारे। उस समय आशिकाना पैगव दर्शनीय था। नगरके बाहर राजा भीमसिंहके आज्ञावर्ती राजाभक्ति तबून्देरे लगे हुए थे, राजकीय फौज-पट्टनका जमघट लगा हुआ था। राजप्रासादों और वाग-वर्गीचोंके मनोहर दृश्यसे आशिका नगरी चत्रवर्तीकी राजधानी सी प्रतीत होती थी।

**अजमेरका महाराजा पृथ्वीराज चौहान।**

श्री जिनपति सूरजी स० १२३९ में अजमेर पधारे। राजसभामें खलगासी उपवेश्यगृहीत प० पत्रप्रभवे साप उनका शास्त्रार्थ हुआ, जिसमें सूरजीकी विजय हुई। महाराजा पृथ्वीराजने स्वयं नरानयनके राजप्रासादोंमें अजमेर आ

कर सूरिजीको "जयपत्र" समर्पण किया। इस वर्षानमें यह भी बताया गया है कि उसी वर्षमें महाराजाने भादानक देशको जीता था। इस शासार्थका वृत्तान्त बड़े विस्तारके साथ इस गुर्वावलीमें दिया गया है जिसमें बहुत सी अन्य ऐतिहासिक बातें भी हैं। विशेष जाननेके लिये 'हिन्दुस्तानी' नामक त्रैमासिक पत्रिकामें प्रकाशित "पृथ्वीराजकी सभामें जैनचार्योंका शासार्थ" नामक हमारा विस्तृत निबन्ध पढ़ना चाहिये।

**अणहिल्लपुर ( पाटण ) का राजा भीमदेव ।**

सं० १२४४ में, अणहिल्लपुरका कोट्याधिपति श्रावक अभयकुमार तीर्थयात्राके हेतु संघ निजालनेकी इच्छासे महाराजाधिराज भीमदेव और प्रधान मंत्री जगदेव पड़िहारके पास गया और उनसे अरज करके स्वयं राजाके हाथसे अजमेर निवासी खरतर संघके नामका आज्ञापत्र लिखा लाया। फिर एक विनंतिपत्र अपनी ओरसे श्री जिनपति सूरिजीको लिख कर अजमेर भेजा। सूरिजीने निमन्त्रण पा कर अजमेरी संघके साथ विहार कर दिया। तीर्थयात्राके अनन्तर वापस लौटते हुए सूरिजी आशापट्टी पधारे। वहा चैल्यगती प्रमुद्गाचार्यसे उनका शासार्थ हुआ जिसमें विजयलक्ष्मी सूरिजीको मिली। इससे प्रतिपक्षीके भक्त अभयङ्क दण्डनायकने खुटिलतासे संघको यह कह कर अटका लिया कि—'महाराजाधिराज भीमदेवकी आज्ञा है कि आप लोग हमारी आज्ञा बिना यहाँसे नहीं जा सकेंगे।' इतना ही नहीं उसने संघकी चौकीके लिये १०० सैनिकोंकी गारद डाल दी। इस प्रकार १४ दिन संघ अटक रहा।

इधर अपने बचावके लिये अभयङ्क दंडनायकने प्रतिहार जगदेवके पास, ( जो उस समय गूर्जर कटकके साथ मालव देशमें गया हुआ था ) पत्रके साथ, अपना सेनक भेज कर कहलाया—'यहा सपादलक्ष—अजमेरका एक विशाल और वैभवंशाली संघ आया हुआ है; यदि आपकी आज्ञा हो तो सरकारी घोड़ोंके लिये दाल-दानेका प्रबंध करदे—अर्थात् दूध कर या तंग कर द्रव्य एकत्र करू।' जगदेव अपने कर्मचारीसे पत्र सुन कर आगबबूला हो गया, और उसी क्षण अपने आज्ञाकारी व्यक्तिके हाथसे एक आज्ञापत्र लिखा भेजा कि—'मैंने बड़े कष्टसे अजमेर नरेश पृथ्वीराजके साथ सन्धि की है; यह संघ भी वही का है; अतः इस संघकी तनिक भी छेड़छाड़ मत करना। यदि करोगे तो तुम्हें गधेकी खालमें सिंहा दिया जायगा।' जब अभयङ्कको यह आज्ञा मिली तो उसने फौरन संघसे क्षमा माग कर उसे रवाने किया।

**लवणखेडाका राणा केल्हण ।**

सं० १२४९ में श्रीजिनपति सूरिजी लवणखेडासे विहार करके पुष्करिणी, विक्रमपुर आदिमें विचरते हुए सं० १२५१ में अजमेर गये। दो मास वहा पर मुसलमानोंके उपद्रवके कारण बड़े कष्टसे वीते। फिर पाटण, मीमपट्टी, कुहियप हो कर मुन. राणा केल्हणके आग्रहसे लवणखेटक पधारे। वहां 'दक्षिणार्चभारतिकावतारणोत्सव' बड़ी धूमधामसे मनाया।

**नगरकोटका राजा पृथ्वीचन्द्र ।**

सं० १२७३ में ( बृहद्भार ) में गंगादशहरे पर गंगाखानके लिये बहुतसे राणाओंके साथ महाराजाधिराज श्रीपृथ्वीचन्द्र नगरकोटसे आया। उसके साथ ५० मनोनानन्द नामक एक कास्मीरी पण्डित भी था। उसने श्री जिनपति सूरिके उपाश्रय पर शासार्थके चैलैङ्गका नोटिश लगा दिया। तब सूरिजीके शिष्य जिनपालोपाध्याय आदि शासार्थके लिये महाराजा पृथ्वीचन्द्रकी सभामें आये, और बाद विनादमें उक्त पण्डितको परास्त कर दिया। महाराजाने पण्डितके चैलैङ्गको फाड़ कर उपाश्रयजीको जयपत्र दिया।

**पालनपुरका राजकुमार जगसिंह ।**

सं० १२८८ में पालनपुरके सेठ भुवनपालने, राजकुमार जगसिंहकी उपस्थितिमें धज्जापोषणका उत्सव बड़े समारोहसे मनाया।

### जावालपुरका राजा उदयसिंह ।

सं० १३१० वैशाख सुदि १३ शनिवार स्वाति नक्षत्रके दिन, श्रीमहावीर विधिचैलमें, राजा व प्रधान पुरुषोंकी उपस्थितिमें राजमान्य महामन्त्री जैत्रसिंहके तत्वावधानमें, पालनपुर, बागडदेश थादिके श्रावकोंके एकत्र होने पर श्रीचौबीस जिनालय आदिकी प्रतिष्ठा, दीक्षादि महामहोत्सवपूर्ण हुई ।

सं० १३१४ में माघ शु० १३ को राजा उदयसिंहके प्रमोदपूर्ण सान्निध्यसे कलकगिरिके मुख्य मन्दिर पर धजारोप हुआ ।

### खर्णगिरिका चाचिगदेव ।

सं० १३१६ के माघ सुदि ६ को, राजा चाचिगदेवके राजत्वकालमें खर्णगिरिके शान्तिनाथ मन्दिर पर खर्णमय घजदंड व कलश स्थापित किये गये ।

### भीमपल्लीका राजा माण्डलिक ।

सं० १३१७ वैशाख सुदि १० सोमवारको, भीमपल्लीमें राजा माण्डलिकके राजत्वकालमें दण्डनायक श्रीमीलाण (?) के सान्निध्यसे महावीर जिनालय पर खर्णदण्ड-कलशादि चढाये गये ।

### चिचौडका महाराजा समरसिंह ।

सं० १३३५ फा० कृ० ५ को, महाराजा समरसिंहके रामराज्यमें, चिचौडके चौरासी मुहल्लेमें जलयात्रापूर्वक स्थानीय ११ मन्दिरोंके ११ छत्र व मुनिसुवन, आदिनाथ, अजितनाथ, वासुप्रप्य प्रभुकी प्रतिमाएं स्थापित की गईं ।

### चिचौडके युवराज अरिसिंह ।

सं० १३३५ फाल्गुन शु० ५ को, समर राज्यपुराको धारण करने वाले राजकुमार अरिसिंहके सान्निध्यसे आदिनाथ मन्दिर पर धजारोप हुआ ।

### बीजापुर नरेश सारंगदेव ।

सं० १३३७ अश्वि कृष्ण ४ शुक्रवारको, महाराजाधिराज सारंगदेवके रामराज्यमें, महामाल्य मल्लदेव व उपमंत्री विन्ध्यादित्यके कार्यकालमें, बीजापुरमें श्रीजिनप्रबोध सूरिजीका नगप्रवेश बड़े समारोहसे हुआ । सं० विन्ध्यादित्य सूरिजीकी स्तुति करता था ।

### शम्भानयन ( सिमाना ) का राजा श्रीसोम ।

श्रीजिनप्रबोध सूरिजीने (सं० १३४० में) सन्मुख आये हुए श्रीसोम महाराजाकी वीनति स्वीकार कर शम्भानयनमें चातुर्मास किया ।

### जेसलमेर नरेश कर्णदेव ।

सं० १३४० के फाल्गुनमें श्रीजिनप्रबोध सूरिजी जेसलमेर पधारे । नगर प्रवेश बड़े समारोहसे हुआ । राजा कर्ण सौम्य दर्शनार्थ सामने आया । महाराजाके आग्रहसे चातुर्मास भी उन्होंने वहीं किया ।

### जावालपुरका राजा सामन्तसिंह ।

सं० १३४२ अश्वि कृष्णा ९ को, जाटैरमें सुप्रसन्न महाराजा सामन्तसिंहके सान्निध्यसे अनेक जिन प्रतिमाओंकी प्रतिष्ठा और इन्द्रमहोत्सव सम्पन्न हुआ ।

### शम्भानयनका महाराजा सोमेश्वर चौहान ।

सं० १३४६ फाल्गुन शु० ८ को, महाराजा सोमेश्वरकारित विस्तृत प्रवेशोत्सवमें श्रीजिनचन्द्र सूरिजी शम्भानयन पधारे । सा० बाहड, भा० भीमा, जगसिंह, रेतसिंह सुश्रावकोंके वनगाए हुए प्रासादमें उन्होंने शान्तिनाथ प्रभुकी स्थापना की ।

जेसलमेर नरेश जैत्रसिंह ।

सं० १३५६ में राजाधिराज जैत्रसिंहकी प्रार्थनाको मान दे कर, श्रीजिनचंद्र सूरजी, मार्गशीर्ष शुक्ल ४ को जैसलमेर पधारे । पूज्यश्रीके खागतार्थ महाराजा ८ कोश सम्मुख गया था । सं० १३५७ मार्गशीर्ष कृष्ण ९ को, महाराजा जैत्रसिंहके भेजे हुए याजित्रीके धनिके साथ मालारोपण व दीक्षा महोत्सव संपन्न हुआ ।

शम्भानयन नरेश शीतलदेव ।

सन् १३६० में महाराजा शीतलदेवकी वीनति और मन्त्री नागचन्द्र आदिकी अन्वर्थनासे श्रीजिनचन्द्र सूरजी शम्भानयन पधारे और शान्तिनाथ भगवानके दर्शन किये ।

सुलतान कुतुबुद्दीन ।

सं० १३७४ में, मन्निदलीय ठहूर अचलसिंहने बादशाह कुतुबुद्दीनसे सर्वत्र निर्विघ्नता यात्रा करनेके लिये फरमान प्राप्त कर, नागौरसे संघ निकाला । जब मारवाड़ और वागड़ देशके नाना नगरोंको पार कर, संघ दिल्लीके समीपवर्ती तिलपथ नामक स्थानमें पहुंचा तो इर्ष्यालु द्रमकपुरीय आचार्य (चैत्यवासी) ने यह कह कर उक्तयात्रा कि—'जिनचन्द्र सूरि नामक साधु सर्पका छत्र सिंहासन धारण करता है।' बादशाहने संघको रोक लिया और ठहूर अचलसिंहादिके साथ सूरिजीको अपने पास बुलाया । सूरिजीकी शान्त मुद्रा देख कर सम्राट् अत्यन्त प्रभावित हुआ और वातचीत होने पर उसे पूर्ण विश्वास हो गया कि द्रमकपुरी आचार्य मिथ्याभाषी है । अलाउद्दीनके पुत्र सुलतान कुतुबुद्दीन ने कहा—'इन श्वेताम्बर मुनियोंमें उसके कथनानुसार एक भी बान नहीं पाई जाती'—अतः दिवानको हुक्म दिया कि इनके आचार ब्यवहारकी अच्छी तरह परीक्षा कर अन्यायीको दण्ड दिया जाय । राज्याधिकारियोंने सूरिजीको निर्दोष पा कर द्रमकपुरीय आचार्यको गिरफ्तार कर लिया । दयालु सूरिजीने श्रावणसे कह कर उसे छुड़ना दिया । सूरिजीने दिल्लीकी खण्डासरायमें चातुर्मास किया । पश्चात् सुलतान व संघके कथनसे प्राचीन तीर्थस्थान मथुराकी यात्रा करने पधारे ।

मेड़ताका राणा मालदेव चौहान ।

सं० १३७६ में राणा मालदेवकी प्रार्थनासे श्रीजिनचन्द्र सूरिजी मेड़ता पधारे और वहा राणा व संघकी प्रार्थनासे २४ दिन ठहरे ।

दिल्लीपति गयासुद्दीन बादशाह ।

सं० १३८० में दिल्लीनिवासी सेठ रयपतिके पुत्र सा० धर्मसिंहने प्रधान मन्त्री नेव साहबकी सहायतसे सम्राट् गयासुद्दीन द्वारा तीर्थयात्राका फरमान निकलवाया, और श्रीजिनबुशल सूरिजीके नेतृत्वमें शत्रुंजयादि तीर्थोंका संघ निकाला ।

सं० १३८१ में भीमपल्लीके सेठ वीरदेवने भी सम्राटसे तीर्थयात्राका फरमान प्राप्त कर श्रीजिनबुशल सूरिजीके उपदेशसे शत्रुंजयादि तीर्थोंके लिये संघ निकाला । विशेष जाननेके लिए हमारी 'दादा जिनकुशलसूरि' नामका पुस्तक देखना चाहिये ।

सौराष्ट्रनरेश महीपालदेव ।

सं० १३८० में शत्रुंजय यात्राके प्रसंगमें, सेठ मोखदेवने, सौराष्ट्रमहीमंडनभूपाल महीपाल देवकी दूसरी देह सदृश अर्थात् अत्यंत प्रभावशाली लिखा है ।

बाहलमेरनरेश राणा शिखरसिंह ।

सं० १३९१ में श्रीजिनपन्न सूरिजी वाग्भट्टके पधारे । उस समय चौहानकुलप्रदीप राणा शिखरसिंह, राजपुरुष व नगरिक जनोंके साथ, सूरिजीके सन्मुख गया और महोत्सवपूर्वक उनका नगरप्रवेश करवाया ।

साचोर ( सत्यपुर ) का राणा हरिपालदेव ।

सं० १३९१ में श्रीजिनपन्न सूरजी बाहड़मेरसे सत्यपुर पधारे उस समय राणा हरिपालदेव आदि उनके स्वागतार्थ सन्मुख गये ।

आशोटाका राजा रुद्रनन्दन ।

सं० १३९३ में पाटणसे नारउद्र होते हुए श्रीजिनपन्न सूरजी आशोटा पधारे । उस समय वहाँका राजा रुद्रनन्दन, राज० गोधा सामन्तसिंहादिके साथ स्वागतार्थ पूज्यश्रीके सन्मुख आया ।

बूजद्रीका राजा उदयसिंह ।

सं० १३९३ में श्रीजिनपन्न सूरजी बूजद्री पधारे । वहाँ सुश्रावक मोखदेवने राजा उदयसिंह एवं समस्त नागरिकोंके साथ सूरजीका बड़े समारोहसे नगर प्रवेश कराया । इसके बाद अन्यत्र विहार करके सूरजी फिर वहाँ पधारे तब, मी राजा उदयसिंह प्रवेशोत्सवमें सम्मिलित हुआ था ।

त्रिशङ्गम नरेश रामदेव ।

संवत् १३९३ में, श्रीजिनपन्न सूरजी त्रिशङ्गम पधारे । मन्नीखर सांगणके पुत्र मण्डलिकादिकने, महाराजा महीपालके अंगज महाराजा रामदेवकी आज्ञासे राजकीय वाजित्रीके साथ बड़े समारोहपूर्वक प्रवेशोत्सव किया । सूरजीको संघके साथ चैत्यपरिपाटी करते समय उनकी प्रशंसा सुन कर महाराजाके चित्तमें उनके दर्शनकी उत्कण्ठा जागृत हुई । महाराजाने सेठ मोखदेव और मन्नी मण्डलिक आदिको कहा—‘छोटी उम्रगले होते हुए मी आपके गुरु बड़े चमत्कारी सुने जाते हैं, मुझे उनके दर्शनकी अभिलाषा है । आप कहें तो मैं उनके पास चढ़े या वे कृपा कर मेरी सभामें पधारे !’

श्रावकोंकी प्रार्थनासे सूरजी राजसभामें पधारे । वृषतिने उन्हें आते देख कर, राजसिंहानसे नीचे उतर कर, उनकी चरणवन्दना की । पूज्यश्री आशीर्वाद दे कर चौकी पर विराजे । महाराजा सारंगदेवके व्यासने अपनी रचना पढ कर सुनाई, जिसमें श्री लब्धिनिधान उपाध्यायजीने कई त्रुटियाँ बतलाई । महाराजा रामदेव कहने लगे—‘उपाध्यायजीका वचनचातुर्य और शास्त्रीय ज्ञान असाधारण है । इन्होंने तो हमारे व्यासजीकी मी त्रुटियाँ बतलाई !’ इसी प्रकार अन्य सभासदोंने उपाध्यायजीकी भूरि भूरि प्रशंसा की ।

सूरजीने तात्कालिक कवितामें राजा रामदेवका वर्णनात्मक श्लोक कहा । जिसे सुन कर राजसभामें उपस्थित सम्यगण आश्चर्य निमग्न हो गये । राजा रामदेवने सिद्धसेन आदि पण्डितोंसे उस श्लोकको विकटाक्षरमें लिखवाया । सूरजीने नानार्थक नाममात्रा क्लोपके बलसे उसके अनेक अर्थ कह सुनाये, जिससे सब लोग एक नजर हो कर पूज्य श्रीके मुखरुमलकी ओर निहारने लगे । इसके बाद सूरजीने लहियोंसे प्रवेक श्लोकके एक एक अक्षरको भिन्न भिन्न लिखवा कर और उन्हें मित्रा कर तीसरी बार तीन श्लोकोंको सम्पूर्ण करा दिया । फिर उन तीनों श्लोकोंको एक पट्टी पर लिखवा कर वृषतिके मनोरंजनार्थ राजहंससमय चित्रकाव्यकी रचना की । सूरजीकी इस प्रतिभा और बुद्धिभयको देख कर राजा और सभके सारे लोगोंके चित्तमें चमत्कृति उत्पन्न हुई ।

महामन्त्री वस्तुपालका उल्लेख ।

सं० १२८९ में श्रीजिनखर सूरजीके खंमात पधारने पर महामाल्य वस्तुपालने बड़े समारोहसे उनका नगर प्रवेशोत्सव किया था । गुरारलीमें, श्रीजिनकुशल सूरजीके खंमात पधारने पर मी इस उत्सवकी याद दिवाई गई है ।

राजकीय हलचलें और उपद्रव ।

म्लेच्छोपद्रव होनेका उल्लेख ।

सं० १२२२ में श्रीजिनचन्द्र सूरजीने रुद्रपहरीमें विहार कर बोपतिदा प्रान्तके पास संघके साथ पकान डाला । सूरजीने साध बाटोंको अलुल म्पलुन देन कर पूजा—‘आप लोग भयभीन क्यों हो रहे हैं !’ उन लोगोंने कहा—

‘भगवन् ! देखिये न इस ओर आकाश धूलिसे आच्छादित हो गया है—मार्दम देता है समीप ही में कोई म्लेच्छ कटक है ।’ पूज्यश्रीने कहा—‘महानुभावो ! धैर्य रखो, अपने बैल आदि चतुष्पदोंको एकत्र कर लो; प्रसु श्रीजिनदत्त सूरिजी सवका भया करेंगे ।’ पूज्यश्रीने मद्य-ध्यान पूर्वक अपने दण्डेसे संघके पड़ावके चारों तरफ कोटके आकार वाली रेखा खींच दी । सब लोग उसमें छिप गये । संघके लोगोंने आस-पाससे जाते हुए हजारों म्लेच्छोंको देखा पर सूरिजीके प्रभावसे वे लोग संघको न देख सके; केवल कोटको देखते दूर चले गये, जिससे सब लोग निर्भय हुए ।

सं० १२५१ में माण्डव्यपुरसे अजमेरके लिये श्रीजिनपति सूरिजीने विहार किया । वहां म्लेच्छोंका उपद्रव होनेसे २ मास बड़े कष्टसे बीते ।

सं० १२५३ में मुसलमानोंने पाटणका भंग कर दिया । गुर्वाचलीमें “पत्तनभंगानन्तरं धाटीग्रामे चतुर्मासी कृता” लिखा है ।

सं० १३७१ अष्टम वदि १० को, जावालियुमें कलिफाल-केवली श्रीजिनचन्द्र सूरिजीकी विद्यमानतामें दीक्षा, मालारोपणादि उत्सव हुए । फिर म्लेच्छोंने उस नगरका भंग कर दिया—“ततो म्लेच्छकृतो भंगः श्रीजावालपुरे जातः ।”

सं० १३७७ में, पाटणको “म्लेच्छबहुलेऽपि समप्रजनपदे” लिखा है और सं० १३८० के वर्णनमें “प्रभूतम्लेच्छव्यवहारीसमूहसंकुले श्रीपत्तने श्रीमहाराजाधिराजसैन्यलीलायमान आरासितः” लिखा है ।

सं० १३८४ में श्रीजिनकुशलसूरिजीने सिन्ध प्रांतमें विहार किया । उस समय सिन्ध देशको “महाम्लेच्छकुत्याकुलगुरुतरश्रीसिन्धुमण्डलोपरि” लिखा है । उच्च नगरके प्रवेशोत्सवके समयमें “हिन्दुराज्यकालमें श्रीजिनपति सूरिजी पधारे थे” लिखा है, इससे निश्चित है कि उस समय वहां मुसलमानोंका शासन हो चुका था ।

**पाटणमें मीणपण दुष्काल ।**

सं० १३७७ में श्रीजिनकुशल सूरिजीके महोत्सवके समय पाटणमें महादुर्भिक्ष था । लिखा है कि—“श्रीपत्तने समागताः, तत्र च विपमकाले महादुर्भिक्षप्रवर्त्तमानेऽपि” ।

इस प्रकार इस पद्याल्लिमें ऐतिहासिक दृष्टिसे अनेक महत्त्वकी बातोंका उल्लेख मिलता है जो अन्यत्र अज्ञात हैं । पद्याल्लि-साहित्यमें यह एक बहुत ही विशिष्ट प्रकारकी रचना है ।

खरतरगच्छालंकार

# युगप्रधानाचार्यगुर्वावली ।

नमो युगप्रधानमुनीन्द्रेभ्यः ।

वर्धमानं जिनं नत्वा, वर्धमानजिनेश्वराः । मुनीन्द्रजिनचन्द्राख्याऽभयदेवमुनीश्वराः ॥१॥  
श्रीजिनवह्मसूरिः, श्रीजिनदत्तसूरयः । यतीन्द्रजिनचन्द्राख्यः, श्रीजिनपतिसूरयः ॥२॥  
एतेषां चरितं किञ्चिन्मन्दमत्या यदुच्यते । वृद्धेभ्यः श्रुत[विचृभ्य]स्तन्मे कथयतः शृणु ॥३॥

१. अ भो ह र दे शे' जिनचन्द्राचार्या' देवगृहनिवासिनश्चतुरशीतिस्वावलकनायका आसन् । तेषां वर्धमाननामा शिष्यः । तस्य च सिद्धान्तवाचनां गृहृतश्चतुरशीतिराशातनाः समायाताः । ताथ परिभावयत इयं भावना मनसि समजनि—'पद्येता रक्ष्यन्ते तदा भद्रं भवति' । अंतगुरोश्च निवेदितम् । गुरुणा चिन्तितम्—'अस्य मनो न मनोहरम्' इति ज्ञात्वा हरिपदे स्थापितः । तथापि तस्य मनो न रमते चैत्यगृहवासे स्थातुम् । ततो गुरोः सम्मत्या निर्गत्य कतिचिन्मुनिसमेतो डि ह्री वा दली प्रभृतिदेशेषु समायातः । तस्मिन् प्रस्तावे, तत्रैवोद्द्योतनाचार्यहरिवर आसीत् । तस्य पार्श्वे सम्यगागतत्वं बुद्ध्या, उपसम्पदं गृहीतवान् । तदनन्तरं श्रीवर्धमानश्वरैरियं चिन्ता जाता—'अस्य हरिमन्त्रस्य कोऽधिष्ठाता' । तस्य ज्ञानायोपवासत्रयमकारि । कृत्वीयोपवासे धरणेन्द्रः समागतः<sup>१</sup> । तेनोक्तं हरिमन्त्रस्याहमधिष्ठाता । ततश्च सर्वेषां हरिमन्त्रपदानां प्रत्येकं फलं निवेदितम् । ततश्च संस्फुरं आचार्यमन्त्रो जातः । तेन च संस्फुराः सपरिवारा वर्धमानसूरयो जज्ञिरे ।

२. अस्मिन् प्रस्तावे विज्ञप्तं पण्डितजिनेश्वरगणिना—'भगवन् ! ज्ञातस्य जिनमतस्य किं फलम्, यदि कुत्रापि गत्वा न प्रकादयते । गूर्जरादेशः प्रभूतो देवगृहवासाचार्यव्याप्तः श्रूयते । अतस्तत्र गम्यते' । 'युक्तमुक्तं परं शत्रुनमि-मिच्छादि परिभाष्यते, ततः सर्वं शुभम्' । ततो भामहवृहत्संघातसहिता आत्माष्टादशाश्रलिताः । \*क्रमेण प ह्रीं प्राप्ताः । यहिर्भूमिगतस्य पण्डितजिनेश्वरगणिसहितवर्धमानश्वरैः सोमध्वजो नाम जटाधरो मिलितः । तेन सहैष्टगोष्ठी जज्ञे । तन्मध्ये गुणं दृष्ट्वा प्रश्नोत्तरः कृतः—

का दौर्गत्यधिनाशिनी हरिविरञ्चयुगप्रवाची च को,

वर्णाः को व्यपनीयते च पथिकैरत्यादरेण श्रमः ।

चन्द्रः पृच्छति मन्दिरेषु मरुतां शोभाविधायी च को,

दाक्षिण्येन नयेन विश्वचिदिनः को वा भुवि आजते ॥

[?]

१ मत्स्ये—आभोहर० । २ मते । ३ आगतः । ४ मन्त्र । ५ वर्धमानाचार्याः । \* एतद्दिनारकान्तर्गतः पाठो गोप-  
भ्यते मत्स्ये ।

“सो म घ जः” । स जटाधरस्तुष्टः । भक्तिर्बद्धी कृता । ततस्तेनैव संधातेन चलिताः\* क्रमेण न हि ल्प च ने प्राप्ताः । उचरिता मण्डपिकायाम् । तस्मिन् प्रस्तावे तत्र प्राकारो नास्ति, सुसायुभक्तः श्रावकोऽपि नाऽस्ति यः स्थानादि याच्यते । तत्रोपविष्टानां धर्मो निकटीभूतः । ततः पण्डितजिनेश्वरेणोक्तम्—‘भगवन्नुपविष्टानां किमपि कार्यं न भविष्यति’ । ‘तर्हि सुश्रिय, किं क्रियते ?’ । ‘यदि धूर्तं वदथ तदोच्चैर्गृहं दृश्यते तत्र ब्रजामि’ । ब्रज । ततो वन्दित्वा सुगुरुपादभगान् गतस्तत्र । तत्र गृहं श्रीदुर्लभराज्ञैः पुरोहितस्य । तस्मिन् प्रस्तावे स उँपरोहितः शरीराम्यङ्गं कारयंतिष्ठति, तस्याऽग्रे स्थित्वा

श्रिये कृतनतानन्दा विशेषवृषसङ्गताः । भवन्तु तैव विप्रेन्द्र । ब्रह्म-श्रीधर-शङ्कराः ॥ [२]

इत्याशिवार्दं पठितवान् । ततस्तेन तुष्टो वृत्तिः । विचक्षणो व्रती कश्चित् । तस्यैव गृहमध्यप्रदेशे छात्रान् वेदपाठपरिचिन्तनं कुर्वतः श्रुत्वा ‘इत्थं मा भणत वेदपाठान्’ । ‘किं तर्हि ?’ ‘इत्थम्’ । ततः पुरोहितेनोक्तम्—‘अहो ! शूद्राणां वेदेऽधिकारो नास्ति’ । ततः पण्डितेनोक्तम्—‘ययं चतुर्वेदिनो ब्राह्मणाः, सुत्रतोऽर्थतश्च’ । ततस्तुष्टः ‘पुरोहितः । ‘कस्माद् देशादागताः ?’ ‘दि ह्यी दे शा त्’ । ‘कुत्र स्थिताः स्य ?’ ‘शुङ्गशालायाम् । अन्यत्र स्थानं न लभ्यते, विरोधिरुद्धत्वात् । मदीया गुरवः सन्ति सर्वे ] अष्टादश यतिनः’ । ‘चतुःशालमदृहे परिच्छदां वद्ध्वा, एकस्मिन् द्वारे प्रविश्यैकस्यां शालायां तिष्ठतः(थ) सर्वे सुखेन । भिक्षावैलायां मदीये मानुषेऽग्रे कृते ब्राह्मणगृहेषु सुखेन भिक्षा भविष्यति’ । ततः प च ने’ लोके उच्छलिता वार्ता ‘वसतिपाला यतयः समायाताः’ । ततो देवगृहनिवासिप्रतिभिः श्रुतम् । तैर्विदितं नैपामागमनं श्रेयस्करम्’ । कोमलो व्याधियदि च्छिद्यते तदा कुजलम् । ते चाधिकारिपुत्रान् पाठयन्ति । तैश्च वर्षोपलादिर्दानेन ते चट्टाः सुखिनः कृत्वा भणिताः—‘पुष्पाभिलोकमध्ये भगनीयम्—‘एते केचन परदेशान्मुनिरूपेण श्रीदुर्लभराजराज्यहेतिका आगताः सन्ति’ । सा च वार्ता सर्वजनं प्रवृत्ता । सा च प्रसरन्ती राजसभायामपि प्रवृत्ता । राज्ञाऽभाणि—‘यद्यत्रैवंविधाः धुद्रा आयाताः, तर्हि तेषामाशयः केन दत्तः ?’ केनाऽप्युक्तम्—‘देव ! तवैव गुरुणा स्वगृहे धारिताः । ततो राज्ञोक्तमाकारय तम् । आकारित उपरोहितः, भणितश्च—‘यद्येवंविधा एते किमिति स्थानं दत्तम् ?’ । तेन भणितम्—‘केनेदं दूषणमुद्रावितम् ?, यद्येषां दूषणमस्ति तदा लक्षपारुष्यैः कर्पटिकाः प्रक्षिप्ताः । यद्येषां मध्ये दूषणमस्ति तदा लुपन्तु तां भणितारः’ । परं न सन्ति केचन । ततो भणितं राज्ञः पुर उपरोहितेन—‘देव ! ये मदृहे सन्ति ते दृष्टा मूर्तिमन्त एव धर्मपुञ्जा लक्ष्यन्ते न तेषां दूषणमस्ति’ । तत इमां वार्तामाकर्ष्य सर्वैरपि धराचार्यप्रभृतिभिः परिभाषितम्—‘वादे निर्जित्य निस्तारयिष्यामः परदेशागतान् मुनीन्’ । ततस्तरुपरोहित उक्तः—‘स्वगृहद्वयतिभिः सह विचारं कर्तुकामा आस्यहे । तेषां पुरस्तेनोक्तम्—‘तान् पृष्ट्वा यत्स्वरूपं तद्वर्णयिष्यामि’ । तेनापि स्वसदने गत्वा भणित्वास्ते—‘भगवन्तो ! विप्रथाः श्रीपूज्यैः सह विचारं कर्तुं समीहन्ते’ । तैरुक्तम्—‘युक्तमेव, परं त्वया न भेतव्यम्’ । इदं भणितव्यास्ते—‘यदि धूर्तः तैः सह विवदितुकामास्तदा ते श्रीदुर्लभराजप्रत्यक्षं यत्र भणिष्यथ तत्र विचारं करिष्यन्ति’ । तैश्चिन्तितं सर्वेऽधिकारिणोऽस्माकं वशंगता न तेभ्यो भयम्, भवतु राजसमक्षं विचारः । ततोऽस्मिन् दिने पञ्चाशरीरयद्द्वेदवगृहे विचारो भविष्यतीति निवेदितं सर्वेषां पुरः । उपरोहितेनाप्येकान्ते नृपो भणितः—‘देव !

१ ‘अनवित्’ इति आदर्शे । २ ब्राह्मोऽपि । ३ ‘पण्डित’ शब्दो नास्ति प्र० । ४ नास्ति पदमेतत् प्र० । ५ प्र० ‘राजपुरोहितस्य । ६ मूलादर्शे ‘उपरोहित’ इति सर्वत्र । ७ वो भवन्तु च । ८ तुष्टश्चित् । ९ ‘पादपरावर्तनं । १० पदान् । ११ किं नदीत्यम् । १२ पदमिदं नास्ति प्र० । १३ प्र० ‘स तुष्टः’ इत्येव पदम् । ÷ कोष्ठकान्तर्गतता शक्तिः पतिता मूलादर्शे, मत्यन्तरादत्रानुसन्धिता । १४ ‘पचने’ नास्ति प्र० । १५ सुखकरम् । १६ मूलादर्शे ‘वर्षोल्कादि’ । १७ ‘राजकुले मद्यता’ इत्येव प्र० । १८ तत उक्तं राज्ञोऽग्रे । १९ ‘मुनीन्’ नास्ति प्र० ।

आगन्तुकमुनिभिः सह स्थानस्थिता मुनयो विचारं विधातुकामास्तिष्ठन्ति । स च विचारो न्यायवादिराजप्रत्यक्षं क्रियमाणः शोभते । ततः पूज्यैः प्रत्यक्षैर्भवितव्यं विचारप्रस्तावे प्रसादं कृत्वा । ततो राज्ञाऽभाणि—‘युक्तमेव कर्तव्यमस्माभिः’ ।

ततश्चिन्तिते दिने तस्मिन्नेव देवगृहे श्री सूरा चार्थं प्रभृतिचतुरशीतिराचार्याः स्वविभूत्यनुसारंणोपविष्टाः । राजाऽपि प्रधानपुरुषैराकारितः । सोऽप्युपविष्टः । राज्ञोक्तम्—‘उपरोहित ! आत्मसम्मतानाकारय’ । ततः स तत्र गत्वा विज्ञापयति श्रीवर्धमानसूरीन्—‘सर्वे मुनीन्द्रा उपविष्टाः सपरिवाराः । श्रीदुर्लभराजश्च पञ्चाशरीयदेवगृहे । गुप्ताकमागमनमालोक्यते । तेऽप्याचार्याः पूजितास्ताम्बूलदानेन राज्ञा । तच्छ्रुत्वापरोहितमुखात् पञ्चाश्रीवर्द्धमानसूरयः श्रीसुधर्मस्वामिजम्बूस्वामिप्रभृतिचतुः . . . . . न युगप्रधानान् सूरीन् हृदये धृत्वा पण्डितश्रीजिनेश्वरं प्रभृति कतिचिद्रीतार्थसुसाधुभिः सह चलितः सुशकुनेन । तत्र प्राप्ताः, नृपतिना दक्षिते स्थान उपविष्टाः, पण्डितजिनेश्वरं दक्षिणपद्यायाम् । आत्मना च गुरुभणितोचितोत्सने गुरुपादान्त उपविष्टः । राजा च ताम्बूलदानं दातुं प्रवृत्तः । ततः सर्वलोकसमक्षं भणितवन्तो गुरवः—‘साधूनां ताम्बूलग्रहणं न युज्यते राजन् !’ । यत उक्तम्—

ब्रह्मचारियतीनां च विधवानां च योपिताम् । ताम्बूलभक्षणं विभ्रा । गोमांसाच्च विशिष्यते ॥३॥  
ततो विवेकिलोकस्य समाधिर्जाता गुरुषु विषये । गुरुभिर्भणितम्—‘एष पण्डितजिनेश्वर उत्तरप्रत्युत्तरं यद्गण्णियति तदस्माकं सम्मतमेव । सर्वैरपि भणितं भवतु’ । ततो मुख्यसूराचार्येणोक्तम्—‘ये वसतो वसन्ति मुनयस्ते पद्दर्शनवाक्षाः प्रायेण । पद्दर्शनानीह क्षपणकजटिप्रभृतीनि—इत्यर्थनिर्णयाय नूतनवादस्थलपुस्तिकां वाचनार्थं गृहीता करे । तस्मिन् प्रस्तावे “भाविनि भूतवदुपचारः” इति न्यायाच्छ्रीजिनेश्वरसूरिणा भणितम्—‘श्रीदुर्लभमहाराज ! युष्माकं लोके किं पूर्वपुरुषविहिता नीतिः प्रवर्तते, अथवा आधुनिकपुरुषदक्षिता नूतना नीतिः ?’ । ततो राज्ञा भणितम्—‘अस्माकं देशे पूर्वजवाणिता राजनीतिः प्रवर्तते नाऽन्या । ततो जिनेश्वरसूरिभिर्रुक्तम्—‘महाराज ! अस्माकं मतेऽपि यद् गणधैर्यश्रुतदर्शपूर्वधैर्यं यो दक्षितो मार्गः स एव प्रमाणीकर्तुं युज्यते, नाऽन्यः’ । ततो राज्ञोक्तं युक्तमेव । ततो जिनेश्वरसूरिभिर्रुक्तम्—‘महाराज ! ययं दूरदेशादागताः, पूर्वपुरुषविरचितसिद्धान्तपुस्तकवृन्दं नानीतम् । एतेषां मतेभ्यो महाराज ! यूयमानयत पूर्वपुरुषविरचितसिद्धान्तपुस्तकगण्डलकं येन मार्गामार्गनिश्चयं कुर्मः’ । ततो राज्ञोक्तास्ते—‘युक्तं वदन्त्येते, स्वपुरुषान् प्रेषयामि, यूयं पुस्तकसमर्पणे निरोपं ददध्वम्’ । ते च जानन्त्येवामेव पक्षो भविष्यतीति, तूर्ण्यं विधाय स्थितास्ते । ततो राज्ञा स्वपुरुषाः प्रेषिताः—श्रीशं सिद्धान्तपुस्तकगण्डलकमानयत । श्रीश्रमानीतम् । आनीतमात्रमेव छोटितम् । तत्र देवगुरुप्रसादाद् दशवैकालिकं चतुर्दशपूर्वधरविरचितं निर्गतम् । तस्मिन् प्रथेममेवेयं गाथा निर्गता—

अष्टष्टं पगडं लेणं, भइज्ज सयणासणं । उचारभूमिसंपन्नं, इत्थीपसुचिवज्जियं ॥ [४]

एवंविधायां वसतो वसन्ति साधवो न देवगृहे । राज्ञा भावितं युक्तमुक्तम् । + सर्वेऽधिकारिणो विदन्ति निरुचरी-

१ ‘विचारं करिष्यन्ति’ इत्येव प्र० । २ ‘पूज्याः प्रत्यक्षा भवितव्यं’ इति मूला० । † दण्डान्तर्गतपाठस्थाने प्र० ‘विज्ञासा वद्धेमानाचार्याः सर्वे उपविष्टाः सन्ति’ इत्येव वाक्यविन्यासः । ३ ‘पश्चात्’ नास्ति प्र० । + प्र० ‘सुधर्मस्वाम्यादिपुगप्रधानान्’ इत्येव । ४ जिनेश्वरगणि प्रभृति । ५ जिनेश्वरगणिदच । ६ ‘पुस्तिका करे धृता’ इत्येव प्र० । ७ ‘प्रस्तावे जिनेश्वरसूरिणा भणित भो राजन्’ इत्येव प्र० । ८ ‘पूर्वराजनीतिः’ प्र० । ९ ‘जिनेश्वरेणोक्तं राजन्’ । १० ‘विरचितानि पुस्तकादीनि नागीतानि । ११ ‘सिद्धान्तपुस्तकं येन मार्गनिश्चयं कुर्मः । १२ ‘ततो’ नास्ति । १३ तूर्ण्यं स्थिताः । १४ ‘राज्ञा स्वपुरुषाः प्रेषिताः । श्रीशं पुस्तकान्यानीतानि । छोटितानि’ इत्येव पाठः प्रत्यन्तरे । १५ तत्रेयं गाथा । + एतद्विद्वान्निर्गतपाठस्थाने प्र०—‘सर्वैरधिकारिपुरुषैर्विदितं निरुचरीभूता अम्भद्रवः । ततः सर्वे राजमत्स्यं गुल्लेन वद्धेमानसुरोऽप्रीहृताः । येनास्मान् बहुमन्यते राजा’ । इत्येवा पंक्तिः ।

भूता असाकं गुरवः । ततः सर्वेऽधिकारिणः श्रीकरणप्रभृतयः षट्पर्यन्ता वदन्ति प्रत्येकमस्माकमेते गुरव-इति गुरु-निवेदनं राजप्रत्यक्षं कुर्वन्ति । येन राजाऽऽप्तान् बहु मन्यते, असाकं कारणेन गुरुनपि । राजा च न्यायवादी । तस्मिन् प्रस्तावे श्रीजिनेश्वररिभिरुक्तम्-‘महाराज ! कश्चिद्गुरुः श्रीकरणाधिकारिणः, कश्चिन्मन्त्रिणः, \*किं बहुना कश्चित्पटवानाम् । या नाठिः (१) सा कस्य सम्बन्धिनी भवति ?’ राज्ञोक्तं मदीया । ‘तर्हि महाराज ! कः कस्याऽपि सम्बन्धी जातो\* वयं न कस्याऽपि’ । ततो राज्ञोऽऽत्मसम्बन्धिनो गुरवः कृताः । ततो राजा भणति-‘सर्वेषां गुरूणां सप्त सप्त गण्डिका रत्नपटीनिर्मिताः, किमित्यस्मद्गुरूणां नीचैरासने उपवेशनं, किमस्माकं गण्डिका न सन्ति ?’ । ततो जिनेश्वरखरिणा भणितम्-‘महाराज ! साधूनां गण्डिकोपवेशनं न युज्यते । यत् उक्तम्-

भवति नियतमेवासंयमः स्याद्विभूषा, नृपतिककुद । एतल्लोकहासञ्च भिक्षोः ।

स्फुटर इह सङ्गः सातशीलत्वमुच्चैरिति न खलु सुसुप्तोः सङ्गतं गण्डिकादि ॥ [५]

इति श्रुतार्थः कथितः । राज्ञोक्तम्-‘कुत्र यूयं निवसत ?’ तैरुक्तम्-‘महाराज ! कथं स्थानं विपक्षेषु सत्सु । अहो ऽपुत्रग्रहं क र डि ह डी मध्ये बृहत्तरमस्ति, तत्र वसितव्यम् । तत्क्षणादेव लब्धम् । ‘युष्माकं भोजनं कथम् ?’ तदपि पूर्ववद्गुर्लभम् । ‘यूयं कति साधवः सन्ति ?’-‘महाराज ! अष्टादश’ । ‘एकहस्तिपिण्डेन सर्वे त्वा भविष्यन्ति’ । ततो भणितं जिनेश्वरखरिणा-‘महाराज ! राजपिण्डो न कल्पते, साधूनां निषेधः कृतो राजपिण्डस्य’ । ‘तर्हि मम मानुषेऽग्रे भूते भिक्षाऽपि सुलभा भविष्यति’ । ततो वार्दं कृत्वा विपक्षान् निजित्य राज्ञा राजलोकेऽथ सह वसतो प्रविष्टाः । वस-विस्थापना कृत्वा प्रथमं गूर्ज रश्रा दे शे ।

३. द्वितीयदिनेऽचिन्ति विपक्षैरुपायद्वयं निरर्थकं जातम्, अन्योऽपि निस्तारणोपायो मन्व्यते । पट्टराज्ञीभक्तो राजा विद्यते, सा च यद्गणति तत्र करोति । सर्वेऽप्यधिकारिणः स्वगुरु-स्वगुरुवचनेनाप्रकदलीफलद्राक्षादिकलभृतभाज-नान्याभरणयुक्तप्रधानवसनादीनि च ढौकनानि गृहीत्वा गता राज्ञीसमीपे । तस्या अग्रे वीतरागस्येव बलित्रिरचनं च-क्रिरे । राज्ञी च तृष्टा प्रयोजनविधानेऽभिमुखीभूता । तस्मिन्नेव प्रस्तावे राज्ञः प्रयोजनमुपस्थिनम् । राज्ञीसमीपे ततो डि ह्री दे श सम्बन्धी पुरुष आदेशकारी राज्ञा तत्र प्रेषितः-‘इदं प्रयोजनं राश्या निषेदय । देव ! निषेदयामीति भणित्वा ; शीघ्रं गतः । राजप्रयोजनं निवेदितं राश्याः । अनेकेऽधिकारिणो नानाढौकनिकाश्च विलोक्य तेन चिन्तितम्-‘ये मम देशदागता आचार्यास्तेषां निस्तारणोपायः संभाव्यते, परं मयाऽपि किञ्चित्तेषां पक्षपोषकं राज्ञः पुरो भणनीयम्’ । गतस्त्र । ‘देव ! प्रयोजनं निवेदितं भवताम्, परं देव ! बृहत् कौतुकं तत्र गतेन दृष्टम् । ‘कीदृशं भद्र ?’ । ‘राज्ञी अर्हद्भूता जाता, यथाऽर्हतामग्रे बलिविरचनं क्रियत एवं राश्या अर्ष्यग्रे’ । राज्ञा चिन्तितम्-‘ये मया न्यायवा-दिनो गुरुत्वेनाऽऽङ्गीकृताः, अद्यापि तेषां पृष्टिं न मुञ्चन्ति’ । राज्ञा भणितः सोऽपि पुरुषा-‘शीघ्रं गच्छ राज्ञीपार्श्वं, गत्वा भणनीयम्-राजा भाणयति राज्ञीं ‘यद्दत्तं भवेत्वा अग्रे तन्मध्यादेकमपि पूर्गीफलं यदि लासति तदा न त्वं मम नाऽहं तव’ इति श्रुत्वा मीता राज्ञी, भणितं च ‘भो ! यद् येनाऽऽनीतं तत्रेन स्वगृहे नेतव्यम्; मम नास्ति प्रयो-जनम्’ । सोऽप्युपायो निरर्थको जज्ञे ।

४. चतुर्थ उपायश्चिन्तितः-यदि राजा देशान्तरीयमुनीन्द्रार्द्रं बहु मंस्यते तदा सर्वाणि देवसदनानि शून्यानि भुञ्चा देशान्तरेषु गमिष्यामो वयम् । केनापि’ राज्ञो निवेदितम् । राज्ञाऽभाषि ‘यदि तेभ्यो न रोचते तदा गच्छन्तु’ । देव-

\* एतच्चिह्नान्तर्गतो वाक्यविन्यासो नास्ति प्र० । १ प्र० परं वयं न कस्यापि सम्बन्धिनः । २ ‘आचार्याणां’ । ३ ‘सद्देयम्’ ।

४ जिनेश्वरेणोक्तं राजपिण्डो न कल्पते । ५ ‘चिन्तितः’ । ६ ‘खलु’ । ७ तारकान्तर्गतः पाठो नास्ति प्र० । ७-७ ‘बलि-दौकनेनेति’ इत्येव पदम् । ८ ‘समीपे’ । ९ ‘पूर्गीफलं न ग्राह्यं यदि’ । १० देशान्तरागतान् मुनीन् मंस्यते । ११ नास्ति प्र० ‘केनापि’ । १२ ‘राज्ञोक्तं गच्छन्तु’ इत्येव प्र० ।

गृहपूजका घृच्या बहुका धारिताः । सर्वे देवाः पूजनीयाः । परं देवगृहमन्तरेण [तैः] बहिःस्थातुं न शक्यते, ततः कोऽपि केनाऽपि व्याजिनेनगतः । किं बहुना, सर्वेऽप्यागता देवगृहेषु स्थिताः ।

५. श्रीवर्द्धमानसूरिर्पि सपरिवारो राजसन्मानेन सर्वत्र देशे विहरति, कोऽपि किमपि कथयितुं नै शक्नोति । ततः श्रीजिनेश्वरसूरिः शुभलये स्वपट्टे निवेशितः । द्वितीयोऽपि तद्भ्राता बुद्धिसागर आचार्यः कृतः । तयोर्भगिनी कल्याणमतिनाम्नी महत्तरा कृता । पञ्चाक्षरीजिनेश्वरसूरिणा विहारक्रमेण कुर्वता जिनचन्द्र-अभयदेव-धनेश्वर-हरि-भद्र-प्रसन्नचन्द्र-धर्मदेव-सहदेव-सुमतिप्रभृतयोऽन्के शिष्याः कृताः । ततो वर्द्धमानसूरिः सिद्धान्तविधिना श्री अर्धु द शि ख र तीर्थे देवत्वं गतः ।

६. पञ्चाक्षरीजिनेश्वरसूरिभिः श्रीजिनचन्द्राभयदेवौ गुणपात्रं ज्ञात्वा सूरिपदे निवेशितौ, क्रमेण युगप्रधानौ जाता । \*अन्यौ च द्वौ सूरौ धनेश्वरो जिनभद्रनामा, द्वितीयश्च हरिभद्राचार्यः, तयोर्पाध्यायत्रयं कृतं धर्मदेव-सुमति-विमलनामानः । धर्मदेवोपाध्यायः सहदेवगणी च द्वावपि भ्रातरौ । धर्मदेवोपाध्यायेन हरिसिंह-सर्वदेवगणिभ्रातरौ सोमचन्द्रपण्डितश्च शिष्या विहिताः । सहदेवगणिनाऽशोकचन्द्रः शिष्यः कृतः । स चातीवबल्लभ आसीत् । स च श्रीजिनचन्द्रसूरिणा विशेषेण पाठयित्वाऽऽचार्यपदे निवेशितः । तेन च स्वपदे हरिसिंहाचार्यो विहितः । अन्यौ च द्वौ सूरौ प्रसन्नचन्द्र-देवभद्रारूपौ । देवभद्रः सुमत्पुपाध्यायशिष्यः । प्रसन्नचन्द्राचार्यप्रभृतयश्चत्वारोऽभयदेवसूरिणा पाठितास्तर्कादिशास्त्राणि । यत् उक्तम्-

सत्तर्कन्यायचर्चाचितचतुरगिरः श्रीप्रसन्नेन्दुसूरिः,

सूरिः श्रीवर्द्धमानो पतिपतिहरिभद्रो मुनिर्वचचन्द्रः ।

इत्याद्याः सर्वविद्याणवसकलभुवः सञ्चरिष्णुरूकीर्तिः-

स्तम्भायन्तेऽधुनाऽपि श्रुतचरणरमाराजिनो यस्य शिष्याः ॥\*

[६]

७. श्रीजिनेश्वरसूर्य आ शा प ल्यां विहृताः । तत्र व्याख्याने विचक्षणता उपविशन्ति । तत्र लीलावतीकथा कृता अनेकार्थवर्णनसमेता । तथा डि णिड यां शा मे कथानककोशः कृतो व्याख्यानाय । प्रथमं स्थानस्थितदेवगृह-निवास्थाचार्याणां समीपे व्याख्यानाय पुस्तकयाचनं कृतम् । तैर्न दक्षम् । पश्चात्, पथिमप्रहरद्वये विरच्यते, प्रभाते व्याख्यायते । इत्थं कथानककोशश्चतुर्मीसां कृतः । तथा मरुदेविगणिन्याऽनशनं गृहीतं, चत्वारिंशद्दिनानि स्थिता । श्रीजिनेश्वरसूरिणा समाधानश्रुत्पादितं भणितं च-‘पत्रोत्पत्त्यसे तत्स्थानं निवेदनीयम्’ । भणितं ‘निवेदयिष्यामि’ । श्रावक एको युगप्रधाननिश्चयाभावे उ ज य न्ते गत्वा तस्य निश्चयार्थमुपयामान् कर्तुमारब्धवः । तस्मिन् प्रस्तावे ब्रह्मयान्तिस्तीर्थङ्करवन्दनायं म हा वि दे हे’ गतः । तस्याऽयं मरुदेविदेवेन सन्देयो भणितः-

मरुदेचिनामअज्जा गणिणीजा आसि तुम्ह गच्छंमि । सग्गंमि गया पदमे, देवो जाओ मरुट्टीओ ॥

टकलपंमि विमाणे दुसागराज सुरो समुत्पन्नो । समणेससिरिजिणेसरसूरिस्स इयं कहिञ्जासु ॥

टकउरे जिणवंदणनिमित्तमिहागएणं संदिट्ठं । चरणंमि उज्जमो भे, कायव्वो किं व सेसेसु ॥ [९]

तेनाऽपि स्वयं गता न कथितं गाथात्रयम् । म श्रावक उपवासं प्रवृत्त उर्याप्य कथितम्, अञ्जलेऽध्यागणि लिगितानि

१ 'सूर्योऽपि सपरिवारः' । २ 'विहरन्ति' । ३ 'न कथयति' । ४ 'ततो पश्चात्' । ५ 'विरार' । ६ 'वर्द्धमानसूरिर्विधिना-  
श्रुदे देवते गतः' । ७ 'एणदिहान्तर्गताः पंचयो नेपलभ्यन्ते प्रत्यन्तरे । ७ म० 'दिण्डियागत्रामे' । ८ 'कथ्यं' । ९ 'तया-  
प्यर्त्तान्' । १० 'नादि पदमेत्त् म० । ११ 'तस्यामे' ।

‘मसद सटच’ । प च ने गत्वा यस्याऽऽर्चायैस हस्तेन प्रक्षालितानि यास्यति स युगप्रधानः । सर्वासु वसतिषु गतः, दर्शितान्यक्षराणि, न केनाऽपि युद्धानि । श्रीजिनेश्वरस्वरिवसतो गतः । दर्शितान्यक्षराणि । चिन्तयित्वा प्रक्षालितानि, गायत्रयं चालेखि । तेन चिन्तितम्—एष युगप्रधानः । विशेषेण गुरुत्वेनाऽङ्गीकृतः । \*इत्यादित्तीयंकरमहावीरदर्शित-धर्मप्रभावनां कृत्वा\* श्रीजिनेश्वरस्वरिर्देवत्वं गतः ।

८. पथाजिनचन्द्रस्वरिः स्वरिवर आसीत्, यस्याऽष्टादश नाममालाः सूत्रतोऽर्थतश्च मनस्यासन् । सर्वशास्त्रविदा चेनाऽष्टादशसहस्रप्रमाणा ‘स्वैवंगरंघ्राटा’ मोक्षप्रासादपदवी भव्यजन्तूनां कृता । येन जा वा लि पु रे विहृतेन श्राव-काणामग्रे ‘चीवंदणमात्रस्तय’ इत्यादिगाथाया व्याख्यानां कुर्वता, ये सिद्धान्तसंवादाः कथितास्ते सर्वे सुशिक्ष्येण लिखिताः । शतत्रयप्रमाणो ‘दिनचर्याग्रन्थो’ जातः श्राद्धानामुपकारी । सोऽपि श्रीवीरैवमं याथातथ्यं प्रकाश्य दिवं गतः ।

९. तदनन्तरं श्रीमदभयस्वरिर्नवाङ्गवृत्तिकर्ता युगप्रधान आसीत् । स कथं नवाङ्गवृत्तिकर्ता, तत्राह—तस्य श म्भा णा प्रा मे शरीरस्कारणं बभूव । यथा यथोपधादिः प्रयुज्यते तथा रोगो वृद्धिं याति, न निवर्तते । लोकः प्रथमग्रेषु भक्तः, यदा यदा चतुर्दशीप्रतिक्रमणं भवति तैतथतुयोजनदूरक्षेत्रादागत्य प्रतिक्रामन्ति श्रावकास्तत्र । कदाचिदतीव रोगाक्रान्तं शरीरं ज्ञात्वा दुष्कृतनिमित्तं समाहृताः सर्वे श्राद्धाः । त्रयोदशीदिने पथाद्रात्रौ प्रहरद्वये शासनदेवता समाजगामं । तयाऽभाणि—‘स्रपिपि जागपि वा ?’ । ततो मन्दं मन्दं भणितम्—‘जागमि’ । तया भणितम्—‘शीघ्रमुत्तिष्ठ, सूत्रकुञ्जुटिका नवोन्मोचय’ । भणति—‘न शक्नोमि’ । ‘कथं न शक्नोमि ? अद्यापि बहुकालं जीविष्यसि, नवाङ्गवृत्तौ प्रतिविधास्यसि’ । ‘कथं विधास्याम्येवंविधे शरीरे ?’ । तत उपदेशं ददति देवता—‘स्त म्म न क पु रे से ढी नद्युपकण्ठे स्वस्वरापलाशमये पार्श्वनाथप्रतिमा स्वयम्भूविद्यते । तस्या अग्रे देवान् वन्दस्व, येन स्वस्वशरीरो भवति’ । पथादेवताऽ-र्द्धशनी भूता । प्रमाते मिष्यादुष्कृतं दैत्यपन्थि गुरवः—इत्यभिप्रायेणाऽऽजान्तुकाः सानस्रिताश्च सर्वे मिलित्वां समोपयुः । पूज्या वन्दिताः । वन्दितैः सद्भिर्भणितम्—‘स्त म्म न क पु रे श्रीपार्श्वनाथदेवो वन्दनीयः । ततोऽत्रायि श्राद्धैः—श्रीपूज्यानामुपदेशो जातः । ततो भणितं तैर्वयमप्यागमिष्यामः । ततो गुरुणां वाहनं कृतम् । बुद्ध्या सर्वथैव नष्टा-ऽऽसीत् । प्रथमेऽपि प्रयाणके रसविषयेऽभिलाषोऽभूत् । क्रमेण घ च ल कं यावत् प्राप्तस्य शरीरं स्वसं जातम् । पथात् पादैः स्त म्म न क पु रे विहृतः । श्रावकैः श्रीपार्श्वनाथप्रतिमामवलोकयितुं प्रवृत्ताः । कुत्राऽपि न दृष्टा । पथाद् गुरवः पृष्टाः, तैरभाणि—‘पंखरापलाशमध्येऽवलोकयत । ततोऽवलोकिता दृष्टा देदीप्यमानां । प्रतिदिनं गौरिका स्नानाय दुग्धं धरति । ततस्तैस्तुष्टैरागत्यै भणितं गुरोः पुरः—‘भगवन् ! दृष्टा यथा भणिता’ । ततो भगवान् वन्दनाय भक्त्या चलितः । दृष्टा तत्र, वन्दिता भक्त्या । तत ऊर्ध्वं स्थितेन देवप्रभावात् तदेव ‘जय तिष्ठयणे’त्यादि नमस्कारवाञ्छितिका कृता । देवताभिर्भणितम्—‘नमस्कारद्वयमुच्चारय ; तस्मिन् ध्याते सर्वस्याऽपि प्रत्यर्थाभवनं भविष्यति । तदपि कष्टम् । त्रिज्ञताऽपि नमस्कारैर्व्याप्तैः सर्वं मद्रं विधास्यामः । तत उच्चारितम् । समुदायेन मह देववन्दनं कृतम् । समुदायेन विस्तरेण स्नानाद्यभरणपूजा कृता । तत्र स्थापना विहिता । देवग्रहं जातम् । सर्वलोकवाञ्छितैर्पूरणेन श्रीमदभयदेव-स्वरिस्थापितं श्रीपार्श्वनाथतीर्थं नाम प्रतिद्विं गतम् ।

\* एतत् स्थाने ‘तीर्थं प्रभाष्य’ इत्येव प्र० । १ ‘ततः’ । २ नाम्नि पदमेतत् प्र० । ३ ‘वीरशासनं’ । ४ ततोऽभयदे-वस्वरि’ । ५ ‘आसीत्’ नास्ति प्र० । ६ पठितं मूलादर्शं पदमेतत् । ७ ‘तत्रा तदा’ । ८ ‘वपुः’ । ९ ‘समागता’ । १० ‘शक्ष्यसि’ । ११ ‘ददते’ । १२ ‘अदृष्टी’ । १३ ‘लामन्ति’ । १४ ‘मिलिताः’ । १५ ‘गताः’ । १६ ‘श्राद्धाः’ । १७ ‘तैः’ । १८ नास्ति पदमेतत् प्र० । १९ ‘आगत्योक्तं भगवन्’ । २० ‘पूज्या वन्दनाय चलिताः’ । २१ ‘करिष्यामः’ । २२ ‘संयेन’ । २३ सर्वलोकेऽपि ।

१०. तत्स्थानात् प च ने समायाताः । क र डि ह डी वसतौ स्थिताः । तत्र स्थितैर्नवाङ्गानां स्थानप्रभृतीनां वृत्तयः कृताः । यत्र सन्देह उत्पद्यते तत्र स्मरणप्रस्तावे, जया-विजया-जयन्ती-अपराजिता देवताः स्मृताः सत्यस्तीर्थकरपार्थे महाविदेहे गत्वा तान् पृष्ठा निस्सन्देहं तत्स्थानं कुर्वन्ति ।

११. तस्मिन् प्रस्तावे देवगृहनिवास्याचार्यमुख्यो द्रोणाचार्योऽस्ति । तेनाऽपि सिद्धान्तो व्याख्यातुं समारब्धः । सर्वेऽप्याचार्याः कपालिकां गृहीत्वैव श्रोतुं समागच्छन्ति । तथाऽभयदेवसूरिरपि गच्छति । स चाचार्य आत्मसमीपे निषेधां दापयति । यत्र यत्र व्याख्यायानं कुर्वतस्तस्य सन्देह उत्पद्यते, तदा नीचैः स्वरेण तथा कथयति यथाऽप्ये न शृण्वन्ति । अन्यस्मिन् दिने यद् व्याख्यायते सिद्धान्तस्थानं तद्बृष्टचिरानीता । एतां चिन्तयित्वा व्याख्यानयन्तु भवन्तः । यस्तां पश्यति सार्थकां, तस्याऽऽश्चर्यं भवति; विशेषेण व्याख्यातुराचार्यस्य । स चिन्तयति-किं साक्षाद्गणधरैः कृताऽथवाऽ-नेनाऽपि, तस्मिन् विषये स्त्रीवादरो मनसि विहितः । द्वितीयदिने सम्बुद्धमूर्धातुं प्रवृत्तः । ततस्तादृशं सुविहिताचार्य-विषयमादरं दृष्ट्वा, रुष्टा व्युत्थिताः सन्तो वसतौ गता भणन्ति देवगृहनिवास्याचार्याः-‘केन गुणेनैषोऽधिकः, येना-ऽस्माकं मुख्योऽप्येवंविधमादरं दर्शयति; पश्चात् के वयं भविष्यामः?’ । द्रोणाचार्योऽपि बृहत्तरः सदर्थो विशेषज्ञो गुणपक्षपाती सन् नूतनं वृत्तं कृत्वा सर्वेषु देवगृहनिवास्याचार्यमठेषु प्रेषितम्-

आचार्याः प्रतिसद्य सन्ति महिमा येपामपि प्राकृतै-  
र्मातुं नाऽध्यवसीयते सुचरितैस्तेषां पवित्रं जगत् ।  
एकेनाऽपि गुणेन किन्तु जगति प्रज्ञाधनाः साम्प्रतं,  
यो घत्सेऽभयदेवसूरिसमतां सोऽस्माकमावेच्यताम् ॥ [१०]

तत् उपशान्ताः सर्वे । द्रोणाचार्येणाऽस्माणि श्रीमदभयदेवसूरीणामग्रे-‘या वृत्तीः सिद्धान्ते करिष्यसि ताः सर्वा मया शोधनीया लेखनीयाश्च ।’ तथा तत्र स्थितेन पारिश्रितिकद्वयं प्रतिबोधितम्, सम्यक्त्वद्वादशप्रतस्थितं कारितम् । तद्य समाधिना श्रावकृत्यं प्रतिपाल्य देवलोके गतम् । देवलोकात् तीर्थंकरवन्दनार्थं महाविदेहे गतम् । सीमन्धरस्वामि-युग-न्धरस्वामिनौ वन्दितौ, धर्मं श्रुत्वा पृष्टौ-‘भम गुरुः श्रीमदभयदेवसूरिः कतिथे भवे मुक्तिं गमिष्यति?’ भगवद्भयं भणितम्-‘वृत्तीये भवे सेरस्यती’ति श्रुत्वा तृष्टौ देवौ स्वगुरुपार्थे गतौ जिनवार्तां कथिता । वन्दित्वा गच्छद्भयामिमा गाथा पठिता-

‘भणियं तित्थपरैर्हि महाविदेहे भवंमि तद्वयंमि ।  
तुम्हाण चेष गुरवो मुक्तिं सिग्धं गमिस्सन्ति ॥ [११]

सा च स्वाध्यायं कुर्वत्या व्रतिन्या श्रुताऽऽनापिता च गुरुणा निवेदिता । भणितम्-ज्ञाता चैवाऽस्माभिः ।  
१२. पश्चात् पाह् उ दाग्रा मे विहृताः । तत्र मन्थन्निधो भक्ताः श्रमणोपामरुः सन्ति । तेषां यानपात्राणि वदन्ति । पयोधौ तानि च प्रेषितानि । तेषां चाऽऽच्छान्तं क्रयाणरुभृतानां वार्ता जाता-‘बुद्धितानि’ । ते च आद्रा वार्तां श्रुत्वा-ऽगुरिनो जगिरे’ । ते च श्रीमदभयदेवसूरिस्मरणप्रस्तावे वमतौ गताः । वन्दिता भगवन्तः । तत्र पृष्ठाः-‘किमिति वन्द-नकविपयवेलातिक्रमो जातः?’ । ‘भगवन्! कारणेन’ । ‘किं कारणम्?’ । ‘पोतमुडनोदन्तारुणनिनाऽगुमिताः स्मः’ तेन नाऽऽगताः । ततः धृणमात्रं चित्ते ध्यानं धृत्वा भणितम्-अत्र विषयेऽर्थाधानं न विधेयं भगवतिः । पश्चाद् द्वितीयदिने मानुष आगतः । पोताः क्षेयेपोत्तरिताः । वार्तांमारुप्यं आद्रैः सर्वमन्थनेन गुरवो भणिताः-‘यावद्दामः क्रयाणरेन

१ सनः पत्ने । २ ‘स्थानात्’ । ३ ‘राता’ । ४ ‘यपर’ । ५ ‘कि’ । ६ ‘वैत्यनिवा’ । ७ ‘वाङ्मयं’ । ८ ‘याद्रा’ । ९ ‘जताः’ । १० ‘स्मृताऽपि’ । ११ ‘उत्कम्’ । १२ ‘चिन्ता न कार्या’ । १३ ‘उदीर्णा’ ।

१५. ततो वाचनाचार्यो जिनवल्लभगणः कतिचिद्दिनानि पचनभूमौ विहृत्य न तादृशो विशेषेण बोधो विघातुं कस्यापि शक्यते येन सुखमुत्पद्यते मनसि । ततश्चाऽऽत्मनृतीयं आगमविधिना सुशकुनेन भव्यजनमनसि भगवद्भणितविधियमोत्पादनाय चित्रकूटदेशादिषु विहृतः । ते च देशाः सर्वेऽपि प्रायेण देवगृहनिवासिमुनीन्द्रैर्व्याप्ताः । सर्वेऽपि तद्वासितो लोकाः, किं बहुना । नानाग्रामेषु विहारं विदधंश्चित्रकूटे प्राप्तः । ऽथपि तत्राऽऽभूमाविता लोकास्तथाऽप्ययुक्तं कर्तुं न शक्नुवन्ति, पचने गुरूणां प्रसिद्धिश्च वणात् । स्थानं याचितास्तत्रत्यथाद्वाः । तैश्च भणितम्—‘चण्डिकामटोऽस्ति यदि तत्र तिष्ठ्य’ । ततो जिनेवल्लभगणिना ज्ञातमशुभवुद्ध्या भणन्त्येते, तथापि तत्रापि स्थितस्य देवगुरुप्रसादाद् भद्रं भविष्यतीति चिन्तयित्वा भणितास्ते—‘तत्रैव बहु मन्यध्वं यूथं येन तिष्ठामः’ । तैरभाणि तिष्ठत । ततो देवगुरुन् स्थत्वा देवतां चानुज्ञाप्य स्थितास्तत्र । देवता च तेषां ज्ञानेन ध्यानेन सदनुष्ठानेन तुष्टा सती तान् प्रत्ययुक्तं रक्षति । ते च जिनवल्लभगणयः सर्वविद्यानिधानभूताः । ऽकथम्, तथाहि—वेदितारो जिनेन्द्रमतस्थापकतर्काभयदेवानेकान्तजयपताकादि परदर्शनकन्दली—किरणवली—न्यायतर्कादि पाणिन्यायध्व्याकर्णं सूत्रतोऽर्थतश्च, चतुरशीतिनाटक-सर्वज्योतिष्क-शास्त्र-पञ्चमहाकाव्यादिमन्त्रकाव्य-जयदेवप्रभृति सर्वच्छन्दोज्ञातारः । इति प्रसिद्धिश्चित्रकूटे जाता । सर्वे परदर्शनीयविद्यादिलोका आगन्तुं प्रवृत्ताः । यस्य यस्य यस्मिन् यस्मिन् शास्त्रविषये संशय उत्पद्यते स सर्वोऽपि जनः पृच्छति, यथा सन्देहस्तुद्यति तथोत्तरं ददाति । श्रावका अपि केचन केचन समाजम्भुः । सिद्धान्तवचनानि श्रुत्वा तदनुसारेण क्रियामपि दृष्ट्वा साधारण-सङ्कल्पप्रभृतिश्रावकैः समाधिना श्रीवाचनाचार्यजिनवल्लभगणयो गुरुत्वेन प्रतिपन्नाः । गुरुपदेशेन परिज्ञानं, ज्योतिष्कपरिज्ञानमप्यतीवाऽऽसीत् । साधारणेन परिग्रहपरिमाणयाचनं कृतम् । गुरुणा भणितम्—‘गृहार्ण कियन्मात्रं गृहीप्यसि ?’ । ‘भगवन् ! विंशतिसहस्रमात्रं सर्वसंग्रहे करिष्यामि’ । पश्चाद् गुरुभिर्हेक्तम्—‘बहुतरं कुरु, किं बहुना, लक्षं द्रम्माणां परिमाणं कारितः । पश्चाद् यथा यथा सर्वमप्यदा प्रवर्धमानः साधारणो जज्ञे तथा तथा संघस्य सर्वसामर्थ्येन गुर्वाज्ञया साधारणो भवितुं प्रवृत्तः । अन्ये तु श्राद्धास्तथा प्रवर्तितुमारब्धाः ।

१६. तथाऽध्ययुजि मासे कृष्णपक्षे त्रयोदश्यां श्रीमहावीरगर्भापहारकल्याणकदिने भणितं श्रीजिनवल्लभगणिना श्राद्धानां पुरः—‘यदि देवा बन्धन्ते देवगृहे महावीरस्य तदा सुभद्रं भविष्यति । पृष्ठमपि कैल्याणकं गर्भापहारलक्षणम्, अथतः “पंच हत्युचरे होत्या साङ्गा परिनिवृद्धे” इति सिद्धान्ते भणनात्\* । तस्मिन् प्रस्तावे विधिचैत्यं नास्ति । चैत्यनिवासिगुरुदेवगृहेषु गम्यते । पश्चाच्छ्रावकर्मणितम्—‘भयवन् ! यदि युष्माकं सम्मतं तत् क्रियते’ । ततः सर्वे श्रावका निर्मलशरीरा निर्मलवस्त्रा गृहीतनिर्मलपूजोपकरणं गुरुणा मह देवगृहे गन्तुं प्रवृत्ताः । ततो देवगृहस्थितयाऽऽर्चिकया गुरुन् श्राद्धसमुदायेनाऽऽगच्छतो दृष्ट्वा पृष्टम्—‘को विशेषोऽद्य ?’ केनापि कैथितम्—वीरगर्भापहारपेठकल्याणकपूजाकरणार्थं समागच्छन्ति । तयाऽचिन्तितं—पूर्वं केनापि न कृतमेते करिष्यन्तीति न युक्तम् । पश्चाद् संपती देवगृहद्वारे पतित्वा स्थिता, द्वारे समागतान् दृष्ट्वा तयाऽऽभयाऽभाणि—‘मया मृतया यदि प्रचिद्यते’ । ततोऽप्रीतिकं ज्ञात्वा निवर्त्य स्वस्थाने गत्वा श्राद्धरुक्तम्—‘बृहत्तरसदनानि सन्त्येकस्य गृहस्योपरि चतुर्विंशतिजिनपङ्क्तं धृत्वा देववन्दनादिसर्वधर्मप्रयोजनं क्रियते’ । गुरुणा भणितं युक्तमेव । तत अराधितं विस्तरेण कल्याणकम् । समाधानं नमजनि । ततो

१ कोऽपि बोधः । २ नास्ति । ३ येन चित्ते । ४ तत्र आत्मना तृतीयः । ५ नास्ति । ६ चैत्यनिकासि० । ७ कुर्वं । ८ गतः । ९ एतदन्तर्गता पंक्तिर्नास्ति प्र० । १० लोकाः । १० जिनवल्लभेनाऽचिन्ति—एतेऽऽशुभवुद्ध्या भगन्ति । ११ वा० जिन । १२ एतद्विज्ञानगताः पादो नास्ति प्र० । १२ श्राद्धाः । १३ समाजयुः । १-१ नास्ति प्र० । १४ याचितं । १५ गुरुणोक्तं । १६ ‘लक्षं परिमाणं’ इत्येव प्र० । १७ ततो । १८ उक्तं । १९ मद्रं भवति । २० श्रीनीरम्य पठं कल्याणकं । \* नास्ति प्र० । २१ श्राद्धैः सह । २२ केनोक्तं । २३ वीरपृष्ठं । २४ चिन्तितं । २५ चैत्यद्वारे पतिना मया मृतया मध्ये गमिष्यन्ति—इत्येव । २६ गुरुणोक्तं ।

गीतायैः श्रावकैर्मन्त्रितम्—'विषक्षैरविधिप्रवृत्तैर्विधिजिनोक्तो विधातुं न लप्स्यते, ततो यदि गुरोः सम्मतं भवति तदा तले उपरि च देवगृहद्वयं कार्यते । स्वसमाधानं गुरोर्निवेदितम् । ततो गुरुणा कथितम्—

जिनभवनं जिनविम्बं जिनपूजां जिनमतं च यः कुर्यात् ।

तस्य नरामरशिचसुखफलानि करपल्लवस्थानि ॥

[१४]

इति देशनया ज्ञातं गुरोर[प्य]भिप्रेतमेव । लोके च प्रवृत्ता वार्ता—एते देवगृहे कारयिष्यन्ति । प्रह्लादनवृहत्तरेण बहुदाकेनाऽपि कथितम्—एते कापालिका देवगृहे कारयिष्यन्ति, राजमान्या भविष्यन्ति । इदं च श्रुतं गुरुणा । ततो बहिर्भूमौ गच्छतः श्रीजिनवल्लभगणैः सोऽपि मिलितस्तथा भणितः—'भद्र ! गर्वां न विधेयः । एतेषां मध्यात् कश्चिद्राजमान्योऽपि भविष्यति, यस्त्वां वद्गृच्छोऽपिष्यति । ततः श्रावकैः सोत्साहैर्मिलित्वा देवगृहे कारयितुमारब्धे । देवगुरुप्रसादेन प्रमाणीभूते । उपरि श्रीपार्श्वनाथविम्बं तले च महावीरविम्बं कारितम् । विस्तरेण प्रतिष्ठा जाता । विधिना श्रीजिनवल्लभगणैः कृता । सर्वत्र प्रसिद्धिर्जातैत एव गुरवः ।

१७. अन्यदा ब्राह्मणः कश्चिज्ज्योतिष्किः पण्डितमानी श्रीजिनवल्लभगणिसमीपे समागतो लोकमध्ये श्लाघां कृ (श्रु ?) त्वैवंविधा धर्मशास्त्रविदः, श्वेतपटाः समाजम्भुः । श्रावकैः पट्ट आसनं दत्तम् । गुरुणा पृष्टः—'कृत्र भवतो वासः 'अत्रव' । पश्चाद्गुरुभिर्भाषितं—'कस्मिन् शास्त्रे विशेषेणाभ्यासोऽस्ति ? ' 'ज्योतिष्के' । 'चन्द्रादित्यलग्ने सम्यग्वेत्सि ? ' 'सम्यग्नेव, किमत्रैवगणित एकं द्वे त्रीणि च लग्नानि भणामि ।' जिनवल्लभगणिना ज्ञातम्—'गर्वेणाऽऽगतः ।' गुरुणोक्तम्—'भद्रं परिज्ञानम् ।' स ब्राह्मणः पृच्छति—'युष्माकमपि परिज्ञानं विद्यते, लग्नविषये भविष्यति किञ्चिच्छाहं कथयन्तु भगवन्तः' । 'कति कथयामि दश विंशतिर्वा लग्नानि ?' । तस्यातीवाश्चर्यमभूत् । पश्चाच्छ्रीजिनवल्लभगणिना भणितम्—'भो विप्र ! गगने हस्तद्वयमाना डम्बरिका दृश्यते सा कियन्मात्रं पानीयं करिष्यति ?' । [विश्रोञ्जानानः शून्यदृष्टिर्दिशोऽवलोकयति । ततो भणितं गुरुणा—'भो विप्र ! भाजनद्वयं यावत्'] पश्चादत्रैवोपविष्टस्य क्षणमात्रेणैव तथा डम्बरिकया सकलं गगनमाच्छाद्य 'वृष्टिः कर्तुमारब्धा, तावद्बृष्टिर्जने यावद्भाजनद्वयमपि परिपूर्णीभूतम् । ततो विप्रो मस्तके हस्तौ योजयित्वा सुगुरोः पादयोः पतित्वा भणितवान्—'यावत्तिष्ठाम्यत्र तावद्भगवतं पादान् वन्दित्वा निश्चयेन भोजनं विधास्यामि । न मयाऽत्रापि भगवन्त एवविधाः' । पश्चात् सर्वत्रैव प्रसिद्धिर्जाता ज्ञानिन एव श्वेतपटा भवन्तीति ।

१८. अन्यदा कदाचिन्मुनिचन्द्राचार्येण शिष्यद्वयं सिद्धान्तवाचनानिमित्तं श्रीजिनवल्लभगणिपाश्वे प्रेषितम् । गणिरपि तयोर्वाचनां दातुं प्रवृत्तः । तावप्युभौ चिन्तयतो जिनवल्लभगणैः श्राद्धान् विप्रतारयात् इति बुद्ध्या रञ्जयन्तः श्रावकान् । कदाचित् स्वगुरुपार्श्वे प्रेषितुं लेखोऽलेखि । तं च वाचनाकर्षलिकायां प्रक्षिप्य वाचनां प्रहीतुं गतौ तौ वसतौ । गणिसमीपे वन्दनं दन्वोपविष्टौ तत्र । उच्छोष्टिता कपालिका । ततो नूतनो लेखो दृष्ट्वा गृहीतः, उच्छोष्टितश्च । तावपि हस्ताद् गृहीतुं न शक्नुतः । अवधारितो लेखः । तत्रालेखि—'जिनवल्लभगणैः केचिच्छाद्वाः स्वग्रो नीताः सन्ति, क्रमेण सर्वे (सर्वा ?) वशीकरिष्यात् इति मनोवृत्तिरस्ति' । ततः श्रीजिनवल्लभगणिना द्विधा विधायाऽऽर्षाऽभाषि—

१-१ पत्तद्वयमध्यगतः पादो नास्ति ५० । २ चैत्ये । ३ चैत्ये । ४ जिनवल्लभेन कृता इत्येव ५० । ५-५ गुरुपार्श्वे आगतः । आसनं दत्तं श्राद्धैः—इत्येव ५० । ६-६ 'गुरुणा भाषितः' इत्येव ५० । ७-७ युष्माकं परिज्ञानमस्ति । किञ्चित् । कथयन्तु भवन्तः—इति ५० । ८ ततो गुरुणोक्तम् । ९ जलं । १० ५०—वृष्टिः कृता भाजनः । ११ नियोग्य । १२ भवतां । १३ नास्ति । १४ फरित्ये । १५ 'ज्ञानिनः श्वेतपटा इति लोके प्रसिद्धिर्जातेति ।' इत्येव । १६ श्राद्धान् । १७ अन्यदा । १८ 'कपालिका' मूलदर्श । १९ 'नूतनं लेखं' ५० ।

आसीज्जनः कृतघ्नः क्रियमाणघ्नस्तु साम्प्रतं जातः ।

इति मे मनसि चित्तको भविता लोकः कथं भविता ॥

[१५]

अहो ! सुतं वाचनया भवतोरैवंविधाशुभभावेन । पश्चाद्विमुखौ गतौ स्वस्थानं पुनर्न दृष्टौ तदैव गतौ ।

१९. कदाचिज्जिनवल्गभगणैर्वहिभूमौ गच्छतो विचक्षणः कथित् प्रसिद्धिं ज्ञात्वा पाण्डित्यस्य मिलितः । सम-  
स्यापदं प्रक्षिप्तं कस्यापि राज्ञो वर्णनामाश्रित्य

‘कुरङ्गः किं भृङ्गो मरकतमणिः किं किमशनिः’

पथान्मनाक् परिभाष्य पूरिता समस्या, तदैव कथिता तस्य पुरः-

चिरं चित्तोद्याने वससि च सुखाब्जं पियसि च,  
क्षणदेणाक्षीणां विषयविपमोहं हरसि च ।

नृप ! त्वं मानाद्रिं दलयसि च क्षितौ कौतुककरः,

कुरङ्गः किं भृङ्गो मरकतमणिः किं किमशनिः ? ॥

[१६]

इति श्रुत्वाऽतीव तुष्टः । कथितवान्-सत्या लोके प्रसिद्धिः, अस्मिन्विषये, गुणस्तुतिं कृत्वा पादयोः पतित्वा गतः ।  
पश्चात् सुगुरुव्यसतौ समागतः । ततः श्रावकैः पृष्टः सुगुरुः-‘बह्वी वेला लग्ना सुगुरोः, किं कारणम् ?’ पश्चात् सहगतेन  
शिष्येण सर्वा वार्ता कथिता । प्रमोदो जवेऽतीव श्रावकाणाम् ।

२०. तथा गणदेवश्रावकैः स्वर्णार्थी जिनवल्गभगणिपाथे सुवर्णासिद्धिरस्तीति श्रुत्वा तस्यै समीपे चित्रकूटे गत्वा पर्व-  
पासनां कर्तुमारब्धः । लक्षितो भावो गणिना । ततो योग्यं ज्ञात्वा तथा तथा तस्य देशना कृता यथा संबिभ्रभावो  
जातः । पश्चाद् भणति गणिः-‘भद्र ! सुवर्णासिद्धिं कथयामि ?’ । ‘भगवन् ! सुतम्, विंशतिद्वन्मनीष्या व्यवहारं  
कुर्वन् श्राद्धधर्मं करिष्यामि’ । भव्यानां धर्मकथने लब्धिरस्ति तस्य । ततः शिक्षयित्वा धर्मं प्रेषितो वागडदेशे । ततो  
लिखितकुलकलेखैः सर्वोऽपि लोको जिनवल्गभगणिधर्मोऽभिमुच्यते ।

२१. श्रीजिनवल्गभगणेष्वार्याख्याने सर्वे विचक्षणजना उपविशन्ति; विशेषतो ब्राह्मणाः स्वस्वविद्यानिःसन्देहार्थम् ।  
कदाचिदियं गाथा व्याख्याने समागता-‘धिज्जाईणं गिहीणं’ इत्यादि-धिग्जातीयं ब्राह्मणाः-इति व्याख्यानं श्रुत्वा  
रुष्टा विप्रा बहिर्निर्गताः, कुपिता एकत्र मिलिताः, विपक्षाश्च निकटीभूताः । ‘एतैः सह विवादं विधाय निष्प्रभीकरि-  
ष्यामः’ । किं तेषां स्वरूपं ज्ञात्वा श्रीजिनवल्गभगणैर्हृदि तेभ्यो भयं समजनि ?, न मनागपि । तस्य तीर्थकरसदृश-  
त्वात् । ततश्च

मर्यादाभङ्गभीतेरमृतममयतया धैर्यगाम्भीर्ययोगान्

न धुम्पन्त्येष तावन्नियमितसलिलाः सर्वदैते समुद्राः ।

आहो क्षोभे व्रजेयुः क्वचिदपि समये देवयोगात्तदानीं

न क्षोणी नाद्रिचक्रं न च रवि-शशिनौ सर्वमेकार्णवं स्यात् ॥

[१७]

इदं वृत्तं भूर्जखण्डे लिखित्वा विवेकिनहस्ते दत्त्वा प्रेषितम्, भणितश्च संमिलितानां मध्ये वृहद्ब्राह्मणहस्ते दातव्यम् ।  
तेन तथैव कृतम् । तेनाचिन्ति विवेकबुद्ध्या-वयमेकैकविद्याधारिणस्ते च सर्वविद्यानिधानम्, कथं तैः सह विवादं कर्तुं  
शक्यते । तेन सर्वे विप्राः सम्बोध्योपशमं नीताः ।

१ ‘वाचनया सुतं’ इत्येष प्र० । † एतत् समग्रं प्रकरणं नोपलभ्यते प्र० । २ श्राद्धः । ३ हेमसिद्धिं श्रुत्वा । ४ नास्ति प्र० ।

५ गुरुसेवा भारुष्या । ६ गणिभिरुक्तम् । ७ हेमसिद्धिं । ८ कथनेन । ९ जनो ।

२२. अन्यदा धारानगर्या श्रीनरवर्मराज्ञो राजमान्यां पण्डितसभां श्रुत्वा दक्षिणदिग्विभागात् पण्डितद्वयं कौतुकेन पाण्डित्यस्य दर्शनार्थमाजगाम । आगत्य पण्डितसभामध्ये 'कण्ठे कुठारः कमठे ठकारः' इत्येकपदानुसारिणाऽन्य-  
पदत्रयेण पूरयन्तु समस्यां भवन्तः । प्रत्येकं पूरिता, परं न तयोस्तां दृष्ट्वा मनो मुमुद्रे । केनापि राज्ञः पुरो भणितम्—  
'देव ! न पण्डितपूरिताः समस्याः प्रतिभान्त्यनयोः !' देवेनाभाणि—'अस्ति कश्चिदुपायो येनानयोर्मनो रज्यते ?'  
केनापि विवेकिना पुरुषेणोक्तम्—'देव ! चित्रकूटे श्वेतपटो जिनवल्लभगणिः सर्वविद्यानिधानमाकर्ष्यते ।' राज्ञा तदैवो-  
प्लव्यं शीघ्रगतिं सपुरुषं सलेखं प्रेषितम्—'इयं समस्या पूरिता मनोहारिणी सती स्वगुरोः पार्श्वत् समागच्छन्ती शीघ्रं  
भोः साधारण ! तथा कार्यम् ।' प्रतिक्रमणवेलायां सन्ध्यासमये प्राप्तं स्वरूपं साधारणेन । गुरोर्दक्षिणं स्वरूपम् । प्रति-  
क्रमणं कृत्वा पूरिता, लेखिता च—

रे रे .तृपाः ! श्रीनरवर्मभूपप्रसादनाय क्रियतां नताङ्गैः ।

कण्ठे कुठारः कमठे ठकारश्चैव यदश्वोऽग्रचतुराग्रघातैः ॥

[१८]

आगन्तुकपुरुषद्वयं रात्रावपि मुक्तकलितं शीघ्रं प्राप्तम् । तया समस्याया रजितं तयोर्मनः, भणितं ताभ्याम्—'अस्यां  
सभायां नास्तीदृशो विद्वान्, येनेयं पूरिता; किं तर्ह्यन्यः कश्चित्' वक्त्रादिदानेन पूजयित्वा मुक्तकलितौ ।

२३. श्रीजिनवल्लभगणिरपि कतिचिद्दिनैर्विहृतो धारयात् । केनाप्युक्तं राज्ञः पुरो—'देव ! सोऽपि श्वेतपटो सम-  
स्यापूरक आगतोऽस्ति ।' राज्ञोक्तम्—'शीघ्रमाकारय तम्' । तमाकारितः । राज्ञा तुयेनोक्तम्—'भो जिनवल्लभगणे ! पारु-  
त्थलक्षत्रयं ग्रामत्रयं वा गृह्णाण' । भणितं गणिभिः—'भोः महाराज ! वयं व्रतिनोऽर्थादिसद्ग्रहं न कुर्मः । चित्रकूटे देवगृ-  
हद्वयं श्रावकैः कारितमस्ति, तत्र पूजार्थं स्वमण्डपिकादानात् पारुत्थद्वयं प्रतिदिनं दापय' । ततो राजा तुष्टः—'अहो निर्लो-  
भवा एतस्य महारामनः श्रीजिनवल्लभगणेरिति चिन्तितवान् । चित्रकूटमण्डपिकावस्तत् शाश्वतदानं भविष्यतीति  
कृतम् । श्रीजिनवल्लभगणेषामिकत्वेन सर्वत्र प्रसिद्धिर्जज्ञे\* ।

२४. श्रीनागपुरे श्रावकैर्नेमिनाथदेवगृहं नेमिनाथविम्बं च कारितमस्ति नूतनम् । तेषामेषोऽभिप्रायो जज्ञे—'वयं श्री-  
जिनवल्लभगणिं गुरुत्वेनाङ्गीकृत्य तस्य हस्तेनोभयोः प्रतिष्ठां कारयिष्यामः'—इति चिन्तयित्वा सर्वसम्मतेन प्रतिपत्त्या  
श्रावकैरकारितः श्रीजिनवल्लभगणिः । ततः शुभलयेन देवगृहं नेमिनाथविम्बं च प्रतिष्ठितम् । तत्रभावाद्युत्पत्तयः  
श्रावकां जज्ञिरे । नेमिनाथविम्बे स्तनमधान्याभरणानि कारितवन्तः । [एवमनेके श्राद्धाः प्रतिबोधितास्तत्र, प्र०] तया  
नरवरश्रावकाणां तथाऽभिप्रायो जज्ञे—'वयमपि जिनवल्लभगणिं कञ्चीकृत्य गुरुत्वेन प्रतिष्ठां देवगृहे च विम्बे च कार-  
यामः'—इति पर्यालोच्य कृतं तथैव । उभयोरपि देवगृहयो रात्रौ बलिधरण—स्त्रीभवेश—लकृटादिदानं निषेधादिको विधि-  
लिखितो मुक्तिसाधकः\* । ततो मरुकोट्टश्रावकैः श्रीजिनवल्लभगणयो विहारक्रमेण समाहृतास्ततो विक्रमपुरमध्येन  
मरुकोट्टे विहृताः । तत्र श्राद्धैः श्राद्धवर्द्धिर्वसतिर्गुप्तिस्थानयुक्ता दत्ता । स्थितास्तत्र । श्रावकैरभाणि—'भगवन् ! युष्मद्-  
दनारविन्दोजिनवचनरसमास्वादितुमिच्छामः' । 'युक्तमेतच्छ्रावकाणाम्, तर्ह्युपदेशमाला कवयितुमारभ्यते' । तत्रभाणि  
—'पूर्वमेव ध्रुता । तथाऽपि पुनरपि भणितव्या'—अभयदिने भणितुमारब्धा । 'संवच्छरमुभमजिणो'—इत्यादिगाथाया एक-  
स्या भणने पन्मासावधिः कालो लग्नस्तथाऽपि श्रावकाणां नानासिद्धान्तोदाहरणान्तेन वृत्तिर्न जाता । वदन्ति—'भगवन् !  
तीर्थकरा एवैतत्सुखमुत्पादयितुं समर्थाः, वचनामृतेन भगवन्तोऽप्येवंविधातुं समर्थाः—इत्याथर्वतुष्टाः श्रावकाः देशनया ।

२५. अन्यदा कदाचिद् व्याख्यानं कृत्वा श्राद्धैः सह वसतौ समाजगामं । तस्मिन्नेन प्रस्ताव एकः पुरुषोऽथारुटः

\* एतद् मङ्गलं नाम्नि प्र० । १ \*गृहं विम्बं । २ जाताः श्राद्धाः । ३ नेमिविम्बे । ४-४ एतद्भाषिता मंकिनाम्नि प्र० ।

५-५ एतद् समन्यकरणस्थाने प्र० 'ततो मरुकोट्टे विहृतास्तत्र श्राद्धैः सह वसतौ जगाम'—इत्येव पाठः ।

स्त्रीभिर्गीयमानो बहुपरिवारो गच्छन् परिणेतुं दृष्टः । श्रीजिनवल्लभगणिना भणितम्—'एता एव स्त्रियो रोदनं कुर्वन्त्यो व्याघ्रुटिप्यन्ति'—इति परिभाष्यम् । पश्चाद्भवास्तत्र । तेषां मध्यात् परिणेता निःश्रेण्यामारुह्य चटितुमारुह्यः । आरोहतः पौदञ्चलितः, पतितस्तथा यथाऽसौ पतन् घट्टोपरि पतितः, उदरं द्विधा जातम्, मृतश्च । ता अपि तथाभूता आगच्छन्त्यो दृष्टाः सैरपि । अहो ! परिज्ञानं गुरुणाम् । पश्चाच्छ्रावणैकाणां धर्मपरिणाममुत्पाद्य पुनर्नागपुरे निर्हताः श्रीजिनवल्लभगणयः ।

२६. तस्मिन् प्रस्तावे देवभद्राचार्या निहारकमं विदधाना अणहिल्लेपचने समायाताः । तत्रायतैश्विन्तितम्—'प्रसन्नचन्द्राचार्येण पर्यन्तसमये भणितं ममाग्रे "भरता श्रीजिनवल्लभगणिः श्रीमदभयदेवसूरिपट्टे निवेशनीयः" । स च प्रस्तावोऽयं । ततः श्रीनागपुरे श्रीजिनवल्लभगणेऽन्तिरेण लेटाः प्रेषितः—'त्वया शीघ्रं समुदायेन सह चित्रकूटे समागन्तव्यम्, येन वयमागत्य चिन्तितप्रयोजनं कुर्यात्' । ततः समागताः श्रीजिनवल्लभगणयः सपरिवाराः । तेऽपि तथैव समागतां देवभद्रसूरयः । पण्डितसोमचन्द्रोऽप्याकारितः पर नागन्तुं शक्तः । ईदानीं श्रीदेवभद्रसूरिभिः श्रीमदभयदेवसूरिपट्टे श्रीजिनवल्लभगणिनिवेशितः, स० ११६७ आपाठ सुदि ६, चित्रकूटे वीरप्रिधिचैत्ये । अनेके भव्यजनाः श्रीजिनवल्लभसूरीन् युगप्रधानान् युगप्रधानश्रीमदभयदेवसूरिपादभक्तान् समालोक्य मोक्षमार्गं प्रवृत्ताः । देवभद्राचार्यादयोऽपि स्वस्थाने प्राप्ताः । क्रमेण ११६७ एकादशशतपष्ठिसप्ताधिकसंस्तरे कार्तिककृष्णद्वादश्या रजन्याश्वरमयामे दिनत्रयमनग्रनं विधाय मिथ्यादुष्कृतपूर्वकं नमस्कारपरारतनं कुर्वन्तः श्रीजिनवल्लभसूरयश्चतुर्धैवलोकां प्राप्ताः ॥

२७. पूर्वं श्रीजिनेश्वरसूरीणां श्रीधर्मदेवोपाध्यायस्य त्रितीयाभिर्गीतार्थाभिश्चतुर्मासी धनलके कृता । धपनरुभक्तगणिकापत्नी बाहडपुत्रसहिता त्रितीयापार्श्वे धर्मकथा श्रोतुं समागच्छति । त्रितिन्यर्थं विशेषेण धर्मं कथयन्ति । ताश्च पुरुषलक्षणं शुभाशुभं विदन्ति । तस्याः पुत्रस्य प्रधानलक्षणानि पश्यन्ति । तल्लभनिमित्तं उद्वाहियन्ति तन्मातरम् । किञ्चहुना तथा भक्ता कृता यथा शिष्यत्वेन पुत्रं दास्यतीति । चतुर्मास्यनन्तरं धर्मदेवोपाध्यायस्य स्वरूपं दत्तम्—'पात्रमेकं प्राप्तमस्ति यदि युष्माकं प्रतिभासति' । ततः शीघ्रं मुशङ्कनेन समागताः । दृष्टश्च यथोक्त एव । ततः शुभलभे एकादशशतैकचत्वारिंशत्संवत्सरे (सं० ११४१) सोमचन्द्रनामा विनेयो विहितः—'सर्वदेवर्गिणो ! त्वया प्रतिपाल्यः, सर्वं बहिर्भूमिनयनादिकार्यमस्य कार्यम्' । एकादशशतद्वात्रिंशत्संवत्सरे (सं० ११३२) जन्माऽस्य । स्वयमेव मातृकादिपाठोऽपाठि । अशोकचन्द्राचार्येणोत्थापना कृता । प्रथमत्रवदिसरे बहिर्भूमौ नीतः सर्वदेवगणिना सोमचन्द्रसुनिः । शिशुत्वाद्ज्ञानस्वाद्गुह्यतत्त्वचणकक्षेत्राप्यामूलात् रोदितानि । शिधानिमित्तं रजोहरणं सुगणसङ्घिका च गृहीता—'स्वंग्रहं गच्छ ! त्रते गृहीते न रोदयन्ते क्षेत्राणि'—'युक्तं गणिना कृतं, पर सा मम मस्तके चोदिकाऽऽसीत् ता तु दापय, येन गच्छामी'ति भणिते गणेशार्थ्यमभूत्—'अहो ! असौचर नास्ति' । एषा वार्त्ता धर्मदेवोपाध्यायस्याग्रे जने । सुरैर्भिधित्तितम्—भविष्यति योग्य एषः ।

२८. सर्वत्र पत्तने परिभ्राम्य परिभ्राम्य लक्षणपञ्जिकादिशास्त्राणि भणितुमारंभे सोमचन्द्रः । एतदा पञ्जिकाभणनार्थं भ्रान्डापरियसमीपे गच्छन्तं दृष्ट्वा केनाप्युद्धतेन भणितम्—'अहो सितपट ! कपालिनाग्रहणं किमर्थम् ?'—'स्व-

१ श्रीजिनवल्लभेनोक्तम् । २ लम् । ३-३ पादश्चलित, पतित, पत्न्यु । ४ तथैवा० । ५ एव थाद्वाना । ६ नागपुरे गता । ७ प्र० 'अनघिल्लेपन प्राप्ता' । ८ ममाग्रे उक्तमासीत् । जिनवल्लभोऽभयदेवपट्टे स्याथ्य । ९ नाम्नि म० । १० चिन्तित कार्य । ११ 'तेऽप्यागता' इत्येव । १२ शक्ति । १३-१३ एतद्द्वान्तगतपाठस्थाने प्र० 'जिनवल्लभोऽभयदेवपट्टे म्यापित । युगप्रधानान् श्रीअभयदेवसूरिपादभक्तान् जिनवल्लभसूरीन् दृष्ट्वा सन्ने हृष्टा । आचार्या सर्वे म्वस्थान प्राप्ता' । १४ नास्ति पदमिदं प्र० । १५ ततो । १६ सर्वदेवगणे पालनाय दृष्ट । १७ नास्ति वाक्यमेतत् प्र० । १८ 'गच्छेत्सुक्ते शिष्येणोक्तम्' इत्येव प्र० । १९ गुरुणा । २० प्र० 'वीरापरिय' । २१ उक्त ।

दीयसुखचूरणार्थमात्मसुखसमण्डनार्थं च' । पश्चाद्गतः स न किमपि वक्तुं शक्तः । भणनस्थाने गतः । तत्रानेकेऽधिकारिपुत्रा भणन्ति पञ्जिकाम् । सा च धर्मशाला । तत्र सोमचन्द्रोऽपि भणति । अन्यदा कदाचिचेनाचार्येण परीक्षार्थं पृष्टः—'भो सोमचन्द्र ! नवकारो यद्यार्थं नाम ?' पश्चादभाणि सोमचन्द्रेण—'मैवमाचार्या भणन्तु, किं तर्हि ? नवकरणं नवकार एव व्युत्पत्तिः कार्या' । आचार्येण ज्ञातं वक्तुं न शक्यतेऽनेन सह । सदुत्तर एव ।

अन्यदा लोचदिने न गन्तुं शक्तिो व्याख्यानं । व्याख्यानव्यवस्थेदृष्टी—यद्येकोऽपि छात्रो नागच्छति तदा व्याख्यानं न भाषणत्याचार्यः । ते अधिकारिपुत्रा गर्विष्ठा भणन्ति—'तस्य स्थाने पापाणो धृतः' भाषण्यन्वाचार्या व्याख्यानम् । तदनुरोधेन भाणितम् । द्वितीर्यदिने त्वागतः सोमचन्द्रो भणितवान्—'युक्तं कृतं यन्मम स्थाने पापाणो धृतः । परं यावती पञ्जिका भाणिता तावतीं मां पृच्छन्तु, एतानपि; याथातथ्यां यो भणिष्यति, स न पापाणोऽन्यः पापाण एव' । 'भोः सोमचन्द्र ! तं कस्तूरिकां जानाम्येव परमेतैर्भूर्खैः प्रेरितो व्याख्यानं, क्षन्तव्यं भवता ।'

२९. हरिसिंहाचार्येण सर्वा सिद्धान्तवाचना दत्ता पण्डितसोमचन्द्राय । तथा मन्त्रपुस्तिका कपलिका च दत्ता यया सिद्धान्तवाचना गृहीता, भगवता तुष्टेन । तथा देवभद्राचार्येण कटाखरणं दत्तं येन महावीरचरितदि चत्वारि कथाशास्त्राणि पञ्जिकायां लिखितानि तुष्टेन । पण्डितसोमचन्द्रगणिग्रामानुयायं ज्ञानी ध्यानी मनोहारी सन् विहरति यतिक्रमेण श्रावकाणामतीवाह्लादकारी<sup>१</sup> ।

३०. एवं सोमचन्द्रे पण्डिते विहारं कुर्वति सैति श्रीदेवभद्रस्वरिभिः<sup>२</sup> श्रीजिनवल्लभद्वैरीणां देवलोक्रगमनमश्रावि । अतीर्वं सन्ताप उत्पन्नः । अहो सुगुरुणां पदमुद्योतितमासीत् परं विषदितम् । पश्चाद् देवभद्राचार्याणामीदृशं चित्तमुदपादि—यदि श्रीजिनवल्लभद्वैर्युगप्रधानपदं योग्यस्थानेन नोद्ध्यते तदा का भक्तिः कृता भवति । पश्चाच्चिन्तयत्याचार्योऽस्मिन् गच्छे कस्तपदेयोग्यः । चिन्तयतश्चित्ते पण्डितसोमचन्द्रो लग्नः—एव एव योग्यः, श्रावकाणामानन्दकारी ज्ञानध्यानक्रियापरत्वात् । पश्चात् सर्वसम्मतेन 'पण्डितसोमचन्द्रस्य लेखो दत्तः—तया चित्रकूटे समागतव्यम्, येन श्रीजिनवल्लभद्वैरीणां पदे निवेशयामि त्वाम् । तेपामपि सम्मतमेतत् श्रीजिनवल्लभद्वैरीणाम् । यतः पूर्वमेवाकारित आसीत् । अनेके तपदे स्थातुमभ्युद्यता आसन् । किं बहुना सोमचन्द्रपण्डितो देवभद्राचार्या अपि समागम्यः । सर्वोऽपि लोको वेत्ति सामान्येन श्रीजिनवल्लभद्वैरिपदे स्वरिस्थापनं भविष्यतीति । श्रीचित्रकूटे श्रीजिनवल्लभद्वैरिप्रतिष्ठिते श्रीमहावीरचैत्ये श्रीसाधारणसाधुना श्रोत्रेण पूजिते श्रीमहावीरसंघे—त्वामहं श्रीजिनवल्लभद्वैरिपदे स्थापयिष्यामि<sup>३</sup>—अर्वागेव दिने पण्डितसोमचन्द्रं भणितवान् श्रीदेवभद्रस्वरिकान्ते—'अस्मिन् दिने परिभाषितमासि लग्नम् । युक्तमेतत्, परं यद्यस्मिन् लये स्थापयिष्यथ तदा न चिराय जीवितं भविष्यति । यदा तु पूर्णां दिनानामुपरि ज्ञानेश्वरवारे यत्लग्नं भविष्यति तत्रोपविष्टानामस्माकं चतुर्दिक्षु विहरतां चैतुर्दिक्षुश्रीभ्रमणसंघः श्रीजिनवल्लभद्वैरिवचने प्रैभूतो भविष्यति । श्रीदेवभद्रस्वरिभिरभाणि—'तल्लग्नं न दूरे, तत्रैव भवतु' । ततस्तस्मिन्नेव दिने<sup>४</sup>—११६९ वैशाख सुदि १—चित्रकूटे श्रीजिनवल्लभद्वैरिपदे विस्तरेण संस्थापिताः श्रीजिनदत्तस्वरिनामानः । सन्ध्यासमयं पावल्लभवेला, ततो चादित्रैर्वाद्यमानैः समागता वसतौ । प्रतिक्रमणानन्तरं वन्दनकं दत्त्वा श्रीदेवभद्रस्वरिभिर्भाषितैर्—'दिशनां कुरुत' । तथा देशना सिद्धान्तोदाहरणः सुधा-

१ नास्ति प्र० । २ शक्तिः । ३ पृष्टः सोमचन्द्रः । ४ इति । ५ नायाति । ६ भणत्या० । ७ व्याख्यानं । ८ द्वितीयेऽह्नि । ९-९ किं क्रोम्याचार्येणोक्तमेतैर्भूर्खैः प्रेरितः । १०. हरिचन्द्राच० । ११-११ एतद्राक्षिता पंक्तिर्नास्ति प्र० । १२. ज्ञानी ध्यानी श्राद्धानामतोवाह्लादकारी विहरति । १३ पदं विहरति । १४ °सूरिणां । १५ °सूरेः । १६ 'अतीव' नास्ति । १७-१७ 'ततो गच्छे आचार्येणोपयोगो दत्तः ।' सोमचन्द्रो लग्नः, जनानन्दकारी । १८ लेखः प्रेषितः सोमचन्द्राय । १-१ एतद्राक्षिता पंक्तिर्नास्ति प्र० । १९-१९ श्रीजिनवल्लभद्वैरिप्रतिष्ठिते श्रीदेवचैत्ये स्वरिपदे स्थापयामि । २० यदि । २१ शनिवारे । २२-२२ 'चतुर्दिक्षु संघः प्रयुज्यते' । २३ आचार्येणोक्तं तत्र भवतु । २४ दिने स्वरिपदे । २५ श्रीआचार्येणोक्तं ।

सदृशैः कृता यथा सर्वाऽभयाप्रजा रञ्जिता सती भणति—‘धन्या देवभद्राचार्या वैरिदं सुपात्रं पात्राणां पदे निवेशितम् ।  
यच्छ्रीजिनवल्लभस्ररिभिरुक्तमस्मत्पदे सोमचन्द्रगणिर्भगद्भिः स्थापनीय इति तत्सफलीकृतम् । विज्ञप्तं च देवभद्राचार्यैः—  
‘कतिचिद्दिनानि पचनादन्यत्र विहर्तव्यम् । एवं करिष्यामः’ ।

३१. अन्यदा जिनशेखरेण व्रतविषयेऽयुक्तं कृतं किञ्चित्, ततो देवभद्राचार्येण निस्सारितः । ततो यत्र भूमौ  
वह्निर्गम्यते तत्र गत्वा स्थितः । यदा श्रीजिनदत्तस्ररयो वह्निर्भूमौ गतास्तदा पादयोः पतितो भणितवान्—‘मदीयोऽ-  
न्यायः क्षन्तव्यो वारमेकं न पुनः करिष्यामि’ । कृपोदधयः श्रीजिनदत्तस्ररयः । प्रवेशितः । पश्चादाचार्यैर्भणितम्—‘न  
सुरावहो भवतां भविष्यति’ । स्ररिभिरभोगि—‘श्रीजिनवल्लभस्ररिष्टे लभो यावदनुवर्तयितुं शक्यते तावदनुवर्त्यते ।  
पश्चादाचार्यैर्दयः स्वस्थाने गताः ।

३२. ततः श्रीजिनदत्तश्रीणां विहारक्रमः । क किञ्चित्—‘देवगुरुस्मरणार्थमुपनामध्रयमकारि । ततो देवलोका-  
च्छ्रीहरिसिंहाचार्य आगतः । ‘किमिति स्मरणा कृता ?’ ‘वृत्र विहरामीति । मरुस्थलीप्रभृतिषु देशेषु विहरेत्युपदेशो  
जातः । तत्रैव स्थितवतां मेहर-भोरर-वासल-भरतादयः श्रावकास्तत्र व्यवहारे समागताः । तत्र श्रीजिनदत्तस्ररिगुरु  
दृष्ट्वा वचनं च श्रुत्वाऽतीव मुमुदिरे । ते गुरुत्वेन प्रतिपन्नाः । भरतस्तत्रैव स्थितो वाचकत्वेन । अन्ये स्वस्थाने गत्वा  
कुटुम्बेषु गुरुवर्णनं कुर्वन्ति । तत्रापि किञ्चित् प्रवेशो जातः । ततो नागपुरे विहृताः । तत्र धनदेवः श्रावकः प्रतिपत्तिं  
करोति, भणति च—‘यदि मदीयवचनं करोषि तदा मर्षेणां पूज्यो भवसि ।’ पश्चाद् भणितं श्रीजिनदत्तस्ररिभिः—‘भो  
धनदेव ! सिद्धान्ते श्राद्धेन गुरुवचनं विधेयं न तु श्राद्धवचनं गुरुणैति भणितम् । न च वैक्तव्यं परिव्रागभानात् पूजा  
न भविष्यति । यत उक्तम्—

मैवं संस्था बहुपरिकरो जनो जगनि पूज्यतां यानि ।

येन घनतनययुक्ताऽपि शुकरी गृधमदनाति ॥

[१९]

पश्चात् भारितं धनदेवस्य । यद्यपि न भाविनं तस्य तथापि गुरुणा युक्तमेव यक्तव्यं (उक्तमिति) केषांचिद्विषे-  
किनां भावितम् । ततोऽजयमेरौ विहृताः । तत्र ८० आगधर मा० रामलप्रभृतिभावनाः गन्ति । पाट्टदेवगृहे गच्छन्ति  
देवैर्वन्दनार्थं श्रीजिनदत्तस्ररयः । अन्यदा तत्रान्य आचार्य आगतः । स च पर्यायेण लघुः, तत्र धन्ये गच्छतां गुरुणां  
व्यवहारं न करोति । ततश्चरुताऽऽगधरप्रभृतिभावने भणितम्—‘किमिति गच्छतां फले यदि पुक्तं न प्रयतते ?’ ततो वन्दना-  
दिव्यवहारे निवृत्तः । ततः श्रावकैर्पुत्रभोग्यो राजा—‘देवाम्नाकं श्रीजिनदत्तस्ररयः म्यगुरवः समागताः गन्ति । राणाऽ-  
भाणि—‘यथागतास्तदा भद्रम् । कायं वचयतां । देव ! भूमिगण्टमरलोचयते, यत्र देवगृह-धर्मस्थानानि धारयतां  
स्वकुटुम्बमदनानि सम्पादन्ते’ । पश्चाद्भाणि—‘दक्षिणादिगमागे यः पर्वतमस्मिन्नाथे च पट्टोचते गच्छन् । आर्मापगु-  
रुवर्धे दर्शनीयाः—इदं स्वरूपं मुमुगेरेभ्रं भणितवन्तः श्रावकैः । ततो गुरुणाऽभाणि—‘आर्वागिनच्यो राजा य एवं मय-  
मेव भणति, गुण एव तस्मात्सगताः । आशरितो मय्यदिने । आमेतमेन नमस्कारः कृतः मुमुगु नेषु । आर्वावर्तः

श्रिये कृतनतानन्दा विशेषवृषसंगताः । भवन्तु भवतां भूप ! ब्रह्म-श्रीधर-शङ्कराः ॥ [२०]  
 तं श्रुत्वा तुष्टो राजा । भणति 'सदैवात्र तिष्ठन्तु गुरुवः' । 'युक्तमुक्तम्, परं राजन् ! असदीया स्थितरेप ! यत्  
 सर्वत्रैव विहारक्रमः क्रियते लोकोपकाराय । अत्रापि सदाऽऽभिप्रायो यथा युष्माकं समाधानं भविष्यति तथा विधा-  
 स्यामः ।' ततः समाधानेनोत्थितो राजा । पश्चाद्बृहदुर आसधरो भणितः [गुरुणा]-

इदमन्तरमुपकृतये प्रकृतिचला यावदस्ति सम्पदियम् ।

विपदि नियतोदयार्यां पुनरुपकर्तुं कुतोऽवसरः ॥

[२१]

इत्यादि [ततः]स्तम्भनक-शत्रुञ्जय-उज्जयन्त-कल्पनया पार्थनाथ-ऋषमनाथ-नेमिनाथविम्बस्थानानि परिभा-  
 वनीयानि । उपरि अम्बिका देउली, तैले च गणधरादिस्थानं चिन्तनीयम् ।

३३. पेशाद् वागडे विहारक्रमः कर्तुमारब्धः । सुरकुनेन विहृतास्तत्र । पूर्वमेव तत्रत्यलोकाः श्रीजिनवल्लभसू-  
 रित्रिपये समाधानवन्तः सन्तस्तदेवलेकगमनमाकर्ष्य तेषां पदे ये संस्थापिता ज्ञानध्यानगुणोपेताः श्रीमहावीरवन्दना-  
 रविन्दनिर्गतस्यार्थतः स्रजतश्च सुधर्मस्यामिगणधररचितसिद्धान्तवेदिनः क्रियापराः श्रीजिनदत्तनामानः सुगुरवो युग-  
 प्रधानास्तीर्थकरकल्पास्तेऽत्र विहृताः श्रूयन्ते, तां दृष्ट्वा सर्वेषां समाधानं समजनिं । ततश्च ते श्रापका यद्यत् पृच्छ-  
 न्ति तत्कथयन्तः केवलिन इव श्रीजिनदत्तसूरयस्तेषां समाधानमुत्पादयन्ति । ततश्च लोकाः केचन सम्पत्वं, केचन  
 देशविरतिं, केचन सर्वविरतिं गृह्णन्ति तुष्टाः सन्तः । व्रतिनो बहवः कृताः । व्रतिन्यश्च तस्मिन् प्रस्तावे द्विपञ्चाशत्  
 कृताः श्रूयन्ते ।

३४. तस्मिन्नेव प्रस्तावे जिनशेखरमुपाध्यायं कृत्वा कतिचित्साधुसहितो रुद्रपल्ल्यां विहारक्रमे मुत्कलितः । स च  
 तपः करोति । स्वजनास्तत्र वसन्तीति तेषां समाधानहेतोः । तथेदं स्वरूपं श्रीजयदेवाचार्यैः सपरिवारैः स्वस्थानस्थितैः  
 श्रुतम्-श्रीजिनवल्लभसूरिपदे निवेशिताः श्रीजिनदत्तसूरयः सर्वगुणोपेता अत्र देशे विहृताः । भद्रं जातम् । पूर्वमेव तेषां  
 श्रीजिनवल्लभगणैर्वसतिनिवासप्रतिपत्तिं श्रीमदभयदेवसूरिपार्थे कृतां श्रुत्वा वसतिनिवासाभिप्राय उत्पन्न आम्नीदिदानी-  
 [मत्रागताः] दृश्यन्ते सुगुरस्ततः सपरिवारा वन्दनार्थं समाजगुणैः । वन्दिताः सविनयं श्रीजिनदत्तसूरयः । तैश्च तथा  
 सम्भाषिताः सिद्धान्तमधुरवचनेर्यथेवंपरिणामोऽभूद्-भवे भव एत एव गुरवोऽस्माकं भूयासुः । पश्चाद् भव्यदिन उप-  
 सम्पदं गृहीतवन्तः । पेशाद्न विलोकितं सनत्कुमारचक्रवर्त्तिसुनिवत् । श्रीजिनप्रभाचार्या अपि केरलीपरिज्ञानेन सर्वज्ञ-  
 नप्रसिद्धाः, ते च तुरुष्कमूर्त्यां गता आसन् । एकेन तुरुष्केण ज्ञानिनो ज्ञात्वा पृष्टाः-'मदीयंहस्ते किमस्ति ?' तेनापि  
 गणयित्वा कथितम्-'वदामः, खटिकाखण्डं च बालश्च । स च बालं न जानाति । तेन दर्शितः करो । बालोऽपि  
 खटिकार्यां लभोऽस्ति । ततस्तुष्टो हस्तं गृहीत्वा लुम्बितवान्, चङ्गा चङ्गेति कथितवान् । आचार्येण ज्ञातं दुष्टा एते  
 भ्रान्ति कदाचिन्मारयिष्यन्तीति रात्रौ प्रपलाय्य स्वदेशे समागताः । तदाऽऽगतो जयदेवाचार्य वसतिमार्गप्रतिपचारं  
 श्रीजिनदत्तसूरिपार्थे श्रुत्वा तस्याप्यभिप्राय उत्पन्नः । परं गाढो मार्ग एतेषाम् । केरलीपरिज्ञानेन चिन्तयति । श्रीजिन-  
 दत्तसूरिरागच्छति युगप्रधानत्वेन । पुनश्चिन्तिते तदेवाऽऽगच्छति । तृतीयवेलाचिन्तनेऽग्निपुञ्जो ग[म]नात्पतितः, वा-  
 सुत्थिता-यदि धर्मं प्रयोजनं तत्र तदाऽऽगुं सुगुरुं प्रतिपद्य धर्मं कुरु । ततोऽङ्गीकृतवान् समाधानं जज्ञे । तत्रैव स्थि-

१ भणितं च सदैवात्र स्थातव्यम् । २-२ फल्लया स्थानानि कारितानि । ३-३ नास्ति प्र० । ४-४ एतद्द्वैतार्थतपाठ-  
 स्थाने-ततो वागडे विहृतास्ते । जिनवल्लभसूरिपदे समाधानवन्तो लोका ये ज्ञानध्यानगुणोपेतास्तेषां पदे ये स्थापितान्तेषामगमन-  
 माकर्ष्य दृष्ट्वा च देशानां च श्रुत्वा सर्वेषां समाधानमजनिं इत्येव प्र० । ५-५ नास्तीयं भक्ति प्र० । ६ तेषां सम्पत्तिर्ना । ७-७  
 एतद्विद्वितपाठस्थाने प्र० 'तथा जयदेवाचार्यैः सपरिवारैः जिनदत्तमुपागमनं श्रुत्वा वसतिनिवासाभिप्रायः कृतः' इत्येव पाठः ।  
 ८ भवन्तु । ९ भास्ति वाक्मविदं प्र० । १० नम करो । ११ कार्य । १२ ततो गन्धोपसम्पद् गृहीता ।

तानां श्रीजिनदत्तसूरीणामतिशयज्ञानिनां पार्श्वे विमलचन्द्रगणिदेवगृहनिवासी सोऽप्याचार्ययोर्वसति निवासप्रतिपत्तिं श्रुत्वा वसतिमार्गमङ्गीकृतवान् । तस्मिन्नेव प्रस्तावे जिनरक्षित-शीलभद्रौ मात्रा सह प्रव्रजितौ । तथा धिरचन्द्र-चरद-चनानामनौ आतरौ प्रव्रजितौ । जयदचनाना मुनिर्मन्त्रवादी । तस्य पूर्वजा मन्त्रशक्तियुक्ता आसन् । ते सर्वेऽपि कृष्टया देवतया विनाशिताः । एष पुनरुदथः श्रीजिनदत्तसूरीणां शरणागतो व्रतं गृहीतवान् । श्रीपूज्यैस्ततो रक्षितो देवतातो । गुणचन्द्रगणिः सोऽपि श्रीजिनदत्तसूरीभिर्दीक्षितः । पूर्वं स श्रावकः सन् तुरुक्नेर्नीत आसीत् । हस्तदर्शनेन चज्ञौ भाण्डारिको भविष्यतीति । नाशनभयात् संकलानिबद्धः । तेन च नमस्कारलक्षं गुणितम् । तत्प्रभावात् संकला स्वयमेव व्रुटिता । ततो निर्गत्य रात्रिपश्चिमप्रहरार्धे कस्याधिदृष्ट्वाद्या गृहेऽवातिष्ठत् । तथा च कृपया कोष्ठिकामध्ये प्रक्षिप्तस्तुरुक्कः प्रेक्षितो न लब्धः । रात्रौ निर्गत्य स्वदेशे गतः । तेन च संवेगेन व्रतं गृहीतम् । रामचन्द्रगणिर्जीवानन्दपुत्रसहितोऽन्यगच्छाद्भव्यं धर्मं ज्ञात्वा श्रीजिनदत्तसूरीणां प्रतिपन्नः । तथा ब्रह्मचन्द्रगणिव्रतं गृहीतवान् । एतेषां मध्याजिनरक्षित-धिरचन्द्रप्रभृतिसाधवः, श्रीमति-जिनमति-पूर्णश्रीगभृतिव्रतित्यथ धारायां प्रेषिता वृत्तिपञ्जिकादिलक्षणभणनार्थम् । तैश्च भणितं श्रावकसाहाय्येन । आत्मना श्रीजिनदत्तसूरीणो रुद्रपत्न्यां विहृताः । तत्र पथि गच्छतामेकस्मिन् ग्रामे श्रावक एकः प्रतिदिनं व्यन्तरेण प्रचण्डेन पीड्यते, तस्य पुण्येन श्रीजिनदत्तसूरीस्तत्रैवोचरितः । तेन निज्ञप्तं शरीरस्वरूपम् । परिभाषितं सूरिभिर्मन्त्रतन्त्रैः साध्यः पीडाकर्तव्यन्तरः । ततो गणधरसप्ततिकां कृत्वा, टिप्पणके लेखयित्वा, हस्ते टिप्पणकं दत्तम्, हृदयं दृष्टिश्चर निवेशनीया श्राद्धसाग्रे कथितम् । तेन च तथा कृतम् । स च व्यन्तरो विस्तरेण पीडयै समागतः खड्गसीमाम्, न शरीरे संक्रान्तो गणधरसप्ततिकाप्रभावात् । द्वितीयदिने द्वारतीर्था समागतस्तृतीयदिने नाऽऽगतः, श्रावकः स्वस्यो जातः, किं बहुना । रुद्रपत्न्यां प्राप्ताः । जिनशेखरोपाध्यायाः श्रावकैः सहिताः सम्भ्रुताः समाजगभृतिस्तरेण मध्ये प्रविष्टाः । विशत्सुचरं शतं कुडुम्बानां तत्र श्रीजिनरचने कारितम् । पार्श्वनाथ-ऋषयश्चैत्यद्वयं प्रतिष्ठितम् । श्रावकैः सम्पन्नमङ्गीकृते देशविरतरङ्गीकृता । सर्वत्रिरतिशय देयालगणितभृतिभिः श्रावकैः सङ्घिः परिगृहीता । तेषां समाधानमुत्पाद्यात्र जयदेवाचार्यं प्रेषयिष्याम इति भणित्वा पुनः पश्चिमदेशे विहृताः ।

३५. वागददेशे समायाताः तत्रापि व्याघ्रपुरे । श्रीजयदेवाचार्याः शिक्षां दत्त्वा श्रीरुद्रपत्न्यां मुक्तकलिताः । तत्र स्थितैश्च च री श्रीजिनरुद्रमन्त्ररिप्ररूपितश्रीचैत्यगृहविधिरूपया कृता । सा च टिप्पणके लेखयित्वा प्रेषिता.....वास-लप्रभृतिश्रावकाणां ज्ञानार्थम् । विक्रमपुरे देवधरपितृसहिष्णयागृहसमीपे पौषधशालाऽस्ति । तत्र श्रीजिन.....श्रावकैरुप-निश्योच्छोडितं चचरीटिप्पणकम् । 'चचरीटिप्पणकं कचरीटिप्पणकं' भणित्वा मदोन्मत्तं देवधरेण हस्तादुदात्तय द्विधा कृतम् । तस्य किमपि कर्तुं न शक्नुवन्ति । पितृग्रे वार्ता कथिता । तेनोक्तम्-गाढ एषः, तथापि वारयिष्यामः । पुनरपि पूज्यैभ्यो लेख्यो दत्तस्तत्र चचरीटिप्पणकरूपं लिखितम् । श्रीपूज्यैलेखकरूपं परिभाष्य द्वितीयटिप्पणकं प्रेषितम्, लेख्यं प्रेषितः । इदं च लिखितम्-देवधरस्योपरि निरूपकं न भगनीयम्, देवगुल्यसादाद्भव्यो मरिष्यति । द्वितीय-टिप्पणकं प्राप्तं तेषाम् । प्रतिपश्योच्छोडितं वाचितं समाधानं जज्ञे । देवधरेण चिन्तितम्-यद्यपि मया स्फाटितं टिप्पणकं तथापि पुनरपि प्रेषितम्, कारणेन भरितव्यम् । किं तत्राऽलेखि प्रच्छन्नं परिभारयाम्येकान्ते । यदा श्राद्धाटिप्पणकं स्थापनाचार्यालके मुच्यता द्वारं स्वयमित्वा गतास्तदोपरि पाटके स्वगृहात् प्रविश्य बहिर्द्वारं स्थगितेऽपि टिप्पणकं गृहीतम् । वाचयितुं प्रवृत्तः । यथा यथाऽर्धानवधारयति तथा तथा मनस आहाद उत्पद्यते । अनापतनं निम्बम्, स्त्री पूजा न

१ 'गुरुणा' इत्येव प्र० । २ विमलचन्द्राचार्यं चैत्यवासिभिरसतिगमोऽप्रीकृत. । ३-३ एतदङ्गाङ्गिला पत्तिर्नास्ति प्र० । ४-४ एतदङ्कितपाठस्थाने प्र० 'गुणचन्द्र सोऽपि दीक्षित । पूर्वं श्राद्धं सन् तुरुक्नेर्नीतो हस्तदर्शनात् भव्यो भाषारि भविष्यति । नाशनभयात्संकलया बद्धः । नमस्कारलक्षं गुणितं । संकला स्वयमेव व्रुटिता । रात्रौ निर्गत्य स्वदेशे गतो गुरु इहा संवेगेन व्रतं गृहीतम् । इत्येव पाठो लभ्यते । ५-५ नास्ति पंक्तिरियं प्र० । ६-६ ततो विहृताः । ७-७ एतदङ्गाङ्गिते प्रवरणं नास्ति प्र० ।

करोतीति सन्देहद्वयं प्रच्छनीयमन्यत्सर्वं भव्यम् । पश्चाद् यत् कथयिष्यति तत् करिष्यामि । अग्रे श्रीपूज्यैर्वागडदेशे स्थितैरेषं धारायां प्रेषिता आसन् तत् सर्वेऽप्यानायिताः, सिद्धान्तं श्राविताः । ततः स्वदीक्षितो जीवदेवाचार्यो मुनीन्द्र-पदे निवेशितः । तथा दश वाचनाचार्याः कृताः । वा० जिनचक्रित (चन्द्र ?) गणिः, वा० शीलभद्रगणिः, वा० स्थिर-चन्द्रगणिः, वा० ब्रह्मचन्द्रगणिः, वा० विमलचन्द्रगणिः, वा० वरदत्तगणिः, वा० भुवनचन्द्रगणिः, वा० वरणागगणिः, वा० रामचन्द्रगणिः, वा० माणिभद्रगणिरैते दश । श्रीमति-जिनमति-पूर्णश्री-जिनश्री-ज्ञानश्रियः पञ्च महत्तराः । हरिसिंहाचार्याणां शिष्यो मुनिचन्द्राभिध उपाध्याय आसीत्, तेन जिनदत्तद्वरिः प्रार्थित आसीद्-यदि कश्चिन्मदीयः शिष्यो भवतां समीपे समागच्छति योग्यस्तदाऽऽचार्यपदं दातव्यमेवं प्रतिपन्नम् । तस्य शिष्यो जयसिंहनामा चित्र-कूटे मुनीन्द्रपदे निवेशितः । तस्मापि शिष्यो जयचन्द्रनामा पचने समवसरणे मुनीन्द्रपदे स्थापितः । भणितं द्वयोर-प्यग्रे-रीत्या प्रवर्तितव्यम् । तथा जीवनन्द उपाध्यायपदे निवेशितः । यद्याचार्योपाध्यायवाचनाचार्यपदानां प्रत्येकं स्थानादिविशेषो भण्यते तदा विस्तरो भवति तेनैकत्रैव भणितम् । सर्वेषु पदस्थेषु शिक्षां दत्त्वा विहारदिस्थानानि भणित्वा स्वयमजयमेरौ विहृताः । विस्तरेण प्रवेशो जातः ।

३६. ततः श्रावकैश्चैत्यगृहत्रयाम्बिकास्थानानि पर्वते प्रगुणीकारितानि । ततः श्रीजिनदत्तद्वरिः शोभने लगे देव-गृहेषु मूलनिवेशे वासान् प्रक्षिप्तवान् । ततः शिखरादिनिवेशं कारितवन्तः-श्रावकाः । ततो विक्रमपुरे सण्ढियापुत्र-देवधरेण स्वकुटुम्बानां पञ्चदश श्रावकसमुदायं कृत्वा स्वपितृश्रेयोऽर्थम्, आसदेवादयः श्रावका भणित्वा-मयाऽत्र श्रीजिनदत्तद्वरयो विहारक्रमं कारयितव्याः । तस्माग्रे कोऽपि किमपि भणितुं न शक्नोति । आद्भसमुदायेन निर्गतो नागपुरे प्राप्तः ।

३७. तस्मिन् प्रस्तावे तत्र देवाचार्यो विशेषेण प्रसिद्धो वर्चते । देवधरोऽपि प्रसिद्धो विक्रमपुरादागतः श्रुतः । पश्चा-द्देवगृहे व्याख्यानप्रस्तावे देवाचार्य उपविष्ट आस्ति । देवधरोऽपि पादप्रक्षालनादिशौचं कृत्वा देवगृहे गतः । आचार्यो वन्दितस्तेनापि क्षेमवार्ता पृष्टा । ततः प्रथमत एव देवधरेण पृष्टः-‘भगवन् । यत्र रात्रौ देवगृहे स्त्रीप्रवेशादि प्रवर्तते तत्कीदृशं चैत्यं भण्यते ?’ इति प्रश्नकृते चिन्तितं देवाचार्येण-‘कथञ्चिजिनदत्ताचार्यमत्रोऽस्य कर्णं प्रविष्टोऽतस्तद्वा-सित इव लक्ष्यते’ इति विचिन्त्योक्तम्-‘श्रावक ! रात्रौ स्त्रीप्रवेशादिकं संगतं न भवति’ । देवधरः-‘तर्हि किं न वार्यते ?’ आचार्यः प्राह-‘लक्षसंख्यलोकानां मध्ये को वार्यते ?’ देवधरः-‘भगवन् । यत्र देवगृहे जिनाज्ञा न प्रवर्तते, किं तर्हि जिनाज्ञानिरपेक्षः स्वच्छया जनो वर्तते, तज्जिनगृहं जनगृहं वा प्रोच्यत इति प्रतिपादयध्वं यूयम्’ । आचार्यः-‘यत्र साक्षाजिनोऽन्तर्निविष्टो दृश्यते तत्कथं जिनमन्दिरं नोच्यते ?’ देवधरः-‘आचार्य ! धयं तान्मूर्खाः, परमेतद् वयमपि जानीमो यदुत यत्र यस्माज्ञा न प्रवर्तते तद्गृहं तदीयं नोच्यते । एवं च पाषाणरूपार्द्धिम्बमात्रान्तर्निवेश-नेन भगवदाज्ञापरिहारेण स्वच्छया व्यवहारे कथं नाम तज्जिनमन्दिरमुच्यते । परमेवं जानाना अपि यूयं प्रसाहसार्गं न निवारयध्वे प्रत्युत पोषयध्वे, तदेते वन्दिता अनुज्ञापिताश्च मया यूयम्-यत्र तीर्थंरराज्ञा प्रवर्तते स मार्गो मयाऽभ्यु-पेतव्यः’-इत्यभिधायोरित्येतो देवधरः । सहानीतस्वकुटुम्बरूपश्रामकानां जातं स्थिरिकरणं विधिमार्यविषये । प्राप्तः श्रावकसमुदायमहितोऽजयमेरौ । वन्दिता भावसारं श्रीजिनदत्तद्वर्यस्तदभिप्रायान्गमपूर्वकं कृत्वा पूज्यदेशना । जातो-ऽसौ निःसन्देहः । अम्पार्थिताः प्रभयः श्रीविक्रमपुरविहारं प्रति । ततो विस्तरेण तत्र देवगृहविम्बाम्बिकागणधरादि-प्रतिष्ठा विषया समागताः श्रीदेवधरेण मह विक्रमपुरे । प्रयोधितस्तत्रत्यो जनो बहूः । म्यापिता श्रीमहार्गप्रतिमा ।

३८. तत्र उचायां गच्छतामन्तराये भूतादयस्तेऽपि प्रतिबोधिताः । किं पुनश्चरुषीपलोरुः । ततो नरहरं विहृताः । ततश्चिह्ननगिरौ, प्रतिबोधितस्तत्र इमारपालो नाम राजा । कृतस्तत्र प्रचुरतरपतिवजनिहारः । प्रतिष्ठितो भगवान् शान्ति-नायदेवः । तपोऽपिन्या विहारेण प्रतिबोधितं पूज्यैर्गोमिनीचक्रम् । तथैकदा श्रीचित्ररूपप्रवेशकं दुर्दरपद्मनायकं सम्-

स्वीकृतो रश्मिबद्धः कृष्णभुजङ्गमः । ततो मन्दीभूतानि गीतवादित्रादीनि । श्रावका अद्याहो न सुन्दरमिति जाताः सविपादाः । ततः प्रोक्तं ज्ञानदिवाकरैः श्रीजिनदत्तसूरिभिः—‘भो किमेवं विमनस्का यूयम् ? यथैष कृष्णभुजङ्गो रश्म्या बद्धः, एवमन्येऽपि ये केचनासह्युत्पत्तौ बन्धनं पतिप्यतीति प्रेरयिताऽतीव सुन्दरं शकुनमेतत् । पुनरग्रतो गच्छतां दुष्टैरेका कृचनासिका दुर्निमित्तविधानाय प्रेषिता । सा चाग्रतः स्थिता दृष्टा पूज्यपादैर्जल्पिता च यथा ‘आई ! भल्ली ?’ ततस्तया दुष्टरुण्डया दत्तं प्रतिवचो यथा ‘भइइ धाणुकइ मुकी’ । पुनरुक्ता किञ्चिद्विहस्य सप्रतिवैः श्रीपूज्यैर्यथा—‘पम्सहरा तेण तुह छिन्ना । ततः सा गयविलम्बा उचर निक्खुट्टी (?)’ । इत्यनेकाश्रयनिधानानां निरन्तरं किङ्करैरिव सूरैः सर्वदोषास्यमानपादानां करुणासमुद्राणां धारापुरी-गणपद्मदिस्त्रानेषु प्रतिष्ठितवीरपार्श्वशान्त्यजितादितीर्थकृद्विम्ब-देवगृह-शिखराणां स्वज्ञानबलदृष्टनिजपद्मोद्धारकारिरासलाङ्गरुहाणां भास्करचन्द्रिवोधितभुवनमण्डलभय्याम्भोरुहाणां श्रीजिनदत्तसूरीणां चरित्रलेशः प्रतिपादितः । ततो महता विस्तरेण श्रीचित्रकूटे प्रविष्टाः । ततः श्रीजिनविम्बप्रतिष्ठादि-महामहोत्सवाः कृताः । ततः सं० १२०३ अजयमेरौ फाल्गुन सुदी ९ जिनचन्द्रसूरिदीक्षा । सं० १२०५ वैशाखशुक्ल-पष्ठ्यां विक्रमपुरे, इतरजनदुःसाध्यध्यानतपोबलावलोक्तितानवद्यविद्यामन्त्रतन्त्रप्रभावैथिन्तामणिगणायमानाः—चिन्ता-मणिगणा इवाचरन्ति चिन्तामणिगणायन्ते, चिन्तामणिगणायमाना उपदेश्या येषां ते तथा तैर्देशैः—श्रीजिनदत्तसूरिभिः स्वकीयपदे सा० रासलकुलव्योममण्डलायमाननववर्षयोमानविवुधजनमनोहारिसौभाग्यभाग्यारोग्यादिगुणगणनिधान-श्रीजिनचन्द्रसूरय उपवेशिताः । सं० १२११ आपाठ वदि ११ जिनदत्तसूरयो दिवं गताः ।

३९. सं० १२१४ श्रीजिनचन्द्रसूरिभिस्रिभुवनगिरौ श्रीशान्तिनाथशिखरे सजनमनोमन्दिरे प्रमोदारोपणमिव सौवर्णदण्डकलशध्वजारोपणं महता विस्तरेण कृत्वा, हेमदेवीगणिन्याः प्रवर्तिनीपदं दत्त्वा, मधुराया पात्रां कृत्वा, सं० १२१७ फाल्गुनशुक्लदशम्यां पूर्णदेवगणि-जिनरथ-वीरभद्र-वीरजय-जगद्विह-जयशील-जिनभद्रैः साधुं श्रीजिनप-तिस्त्रयो दीक्षिताः । सा० क्षेमन्धरः प्रतिवोधितः । वैशाखशुक्लदशम्यां मरुकोट्टे चन्द्रप्रभस्वामिविधिचैत्ये साधुगोष्ठक-कारितसौवर्णदण्डकलशध्वजारोपणं कृतम् । तत्र च सा० क्षेमन्धरेण पारुथ्यद्रमशतपञ्चकेन माला गृहीता । सं० १२१८ उचायां ऋषभदत्त-विनयचन्द्र-विनयशील-गुणवर्धन-वर्धमानचन्द्रसाधुपञ्चकं जगथी-सरस्वती-गुणश्रीसाध्वी-त्रयं च दीक्षितम् । अनेन क्रमेण साधवो [बहव]श्च कृताः । सं० १२२१ सागरपाटे सा० गयधरकारिता श्रीपार्श्वनाथ-विधिचैत्ये देवकुलिका प्रतिष्ठिता । अजयमेरौ श्रीजिनदत्तसूरिस्तूपः प्रतिष्ठितः । बच्चैरके च वा० गुणभद्रगणि-अभय-चन्द्र-यशश्चन्द्र-यशोभद्र-देवभद्रा दीक्षिताः । देवभद्रभार्याऽपि दीक्षिता । आशिकायां नागदत्तस्य वाचनाचार्यपदं दत्तम् । महावने श्रीअजितस्वामिविधिचैत्ये प्रतिष्ठा देवनागकारिता । इन्द्रपुरे शान्तिनाथविधिचैत्ये सौवर्णदण्डकलश-प्रतिष्ठा वा० गुणभद्रगणपितामहलालेथावककारिता । तग(?)लाग्रामेऽजितस्वामिविधिचैत्यं प्रतिष्ठा च । कृताश्च सर्वा अपि श्रीजिनचन्द्रसूरिभिः । सं० १२२२ वादलीनगरे श्रीपार्श्वनाथभवने वा० गुणभद्रगणपितामहलालेथावककारि-तसौवर्णदण्ड-कलशो प्रतिष्ठाप्याम्बिकाशिखरयोग्यं सौवर्णकलशं च प्रतिष्ठाप्य, रुद्रपत्न्यां विहृताः । ततोऽपि परतो नरपालपुरे कञ्चिज्योतिःशास्त्रसम्यक्परिज्ञानाभिमानादागतं ज्योतिषिकं वृषलप्रसक्तैकोनविंशान्निशांशो मृगशीर्षगृहं पदसप्तत्यधिकवर्षशताचलस्थित्यधिप्रदानप्रतिज्ञया श्रीपार्श्वनाथदेवगृहपुरतो रङ्गायामेकां शिलां स्थापयित्वा जितवन्तः । तच्छिलोपरितना भित्तिद्याऽपि तथैव वर्तते ।

४०. पुनरपि रुद्रपत्न्यां विहृताः । तत्र चान्यदा कदाचिन्मुनिमण्डलीमण्डितपार्श्वदेशाह्युवयतो बहिर्भूम्यां गच्छ-तः श्रीजिनचन्द्रसूरीन् दृष्ट्वा श्रीपद्मचन्द्राचार्यो मत्सरवशात् वृच्छति स्म—‘आचार्यमिथाः ! यूयं भद्राः स्व ?’ श्रीमत्पू-ज्यैरुक्तम्—‘देवगुरुप्रसादात्’ । पुनरपि स प्राह—‘साम्प्रतं किं किं शास्त्रं वाच्यमानमस्ति ?’ पार्श्वस्थेन मुनिना भणितम्—‘साम्प्रतं श्रीमत्पूज्या न्यायकन्दलीं चिन्तयन्ति’ । स प्राह—‘आचार्यमिथाः ! तमोवादाधिनित्तः ?’ श्रीपूज्यैरुक्तम्—

'चिन्तितः' । स प्राह 'हृदयेऽवगतः ?' श्रीमत्पूज्यैरुक्तम्—'अवगतः' । स प्राह 'तर्कितं तमो रूपविशेषमेव ?' श्रीपूज्यैरुक्तम्—'ननु भवतु स्वस्वरूपेण यादृशं तादृशं तमः, परं वादव्यवस्थया राजसभायां प्रधानसम्पत्समक्षं वादिना कदापि क्रीदयं स्याप्यते, नतु स्थापनामात्रेण वस्तु स्वस्वरूपं त्यजति' । पुनरपि स प्राह—'मा त्याक्षीतुं स्थापनामात्रेण वस्तु स्वस्वरूपम्, परं परमेश्वरैस्तीर्थकरैस्तमो द्रव्यमेवोक्तम्' । श्रीपूज्यैरुक्तम्—'को नाम न मन्यते द्रव्यत्वं तमसः । परमाचार्य-दर्पिष्ठ । प्रतिवादी यथा तथा जितो विभीय ( ? ) ।' तदनन्तरं कोपावेगाद्रक्षीभवक्षेत्रः कम्पमानगात्रः सन् स इदमाह—'प्रमाणरीत्या द्रव्यमेव तम इति स्थापयति सति मयि, तव योग्यताऽस्ति सम्मुखी भवितुम् ?' श्रीपूज्यैरुक्तम्—'कस्याऽपि योग्यताऽस्ति, कस्याऽपि नास्तीति ज्ञास्यते राजसभायाम् । पशुप्राणामेवारण्यं रणभूमिः । तथाऽऽचार्य ! माऽस्मान् लघुवयसो दृष्ट्वा स्वशक्तिं स्फोरयः; लघुरपि सिंहः पर्वतसमानोपममतङ्गजानुव्रासयति' । एवं च विवदतां तेषां कौतुकदर्शनार्थं मिलितः सर्वोऽपि नागरिको लोकः । उभयभक्तश्रावकाश्च निजनिजाचार्यपक्षपातेन परामहङ्कार-कोटिमारूढाः । किम्बहुना राजलोकसमक्षं व्यवस्थापत्रे लिखिते सति सावटम्पेपु च श्रीजिनचन्द्रस्वरिपु सत्सु, वाद-वार्तायाऽपि भग्नं श्रीपद्मचन्द्राचार्यं दृष्ट्वा सर्वलोकसमक्षं राजलोकैर्दत्तं जयपत्रं श्रीजिनचन्द्रस्त्रीणाम् । जयकारश्चक्रे । लोके महती प्रभावना संजाता जिनशासने । महानन्दभरनिर्भरैश्च श्रावकैर्बृहद्वर्धापनकं कारितम् । तदनन्तरं श्रीपूज्य-भक्तश्रावका 'जयतिहृष्ट' इति नाम्ना प्रसिद्धिं गताः । पद्मचन्द्राचार्यभक्ताश्च श्रावकाः सर्वैरपि लोकैस्तर्क्यमाना हस्य-मानाः 'तर्कहृष्ट' इति नाम्ना प्रसिद्धिं गताः । अनया रीत्या कानिचिद्दिनानि स्थित्वा, सिद्धान्तोक्तविधिना सुमार्थेन सह ततः प्रचलिताः ।

४१. मार्गे च चौरसिदानकग्रामसमीपे उचरितः संघातः । तत्र च म्लेच्छभयादाकुलीभूतं संघातलोकं दृष्ट्वा श्रीपूज्यैरुक्तम्—'किमिति भो ! युयमाकुलीभूताः ?' तैरुक्तम्—'प्रभो ! म्लेच्छकटकमगच्छदस्ति, पश्यता-ऽस्मां दिशि गगनतलावलम्बिनीं धूलिम्, शृणुत निखानशब्दम्' । श्रीपूज्यैरवधानं दत्त्वा भणितम्—'अहो सार्थिक-लोक ! विश्वस्तीभवत, सर्वमपि वस्तु घृपभादिचतुष्पदादिकमेकत्र कुलत, प्रभुश्रीजिनदत्तस्वरिभलिम्पति' । तदनन्तरं श्रीपूज्यैर्मन्त्रध्यानपुरस्सरं निजदण्डकेन संघातकस्य चतुर्दिक्षु कोष्ठाकारा रेखा कृता । सार्थिलोकश्च सर्वोऽपि गोणीपू-पविष्टः । संघातनिकटदेशे बहमानान् तुरगाधिरूढान् सहस्रसंख्यान् म्लेच्छान् पश्यति, म्लेच्छाश्च संघातं न पश्य-न्ति, केवलं कोङ्ठं पश्यन्तो दूरं गताः । निर्भये सति ततः स्वानात् प्रचलितान् दृष्ट्वाग्रे संघातेन सहाऽऽगताम् श्रीपू-ज्यान् युक्ता दिङ्घीवास्य ठं लोहट-सां पावहण-सां कुलचन्द्र-सां गृहचन्द्रादिसंघमुख्यश्रावका महता विस्तरेण वन्दनार्थं सम्मुरं प्रचलिताः । तांश्च प्रधानवेपान् प्रधानपरिवारान् प्रधानवाहनाधिरूढान् दिङ्घीनगराद्दिर्गि-च्छन्तो दृष्ट्वा स्वप्रसादोपरि वर्तमानः श्रीमदनपालराजा विस्मितः सन् स्वकीयराजप्रधानलोकं पश्यञ्च—'किमित्येष नगरवास्तव्यलोकः सर्वोऽपि बहिर्गच्छति ?' राजप्रधानैरुक्तम्—'देव ! अतीवरमणीयरूपोऽनेकशक्तिपुक्तो गुरुर्तेषां समागतोऽस्ति । तस्य सम्मुखं भक्तिप्रशान्त्येते ।' तदनन्तरं कुतूहलिनैरेन राज्ञोक्तम्—'महामाधनिक ! प्रणुण्य पट्ट-तुरङ्गम्, वादय च काहलिकहस्तेन काहलां यथा सर्वोऽपि राजलोकः प्रभूय प्रभूय शीघ्रमत्राऽऽगच्छति' । आदेशान-न्तरं सहस्रसंख्यपोटकाधिरूढसुमंटेरलंक्रियमाणः श्रीमदनपालराजा श्रावकलोकान् प्रथममेव श्रीपूज्यानां पार्थं गतः । एत्र च सार्थमध्यस्थितलोकैः प्रभूतदौकनिकदानपुरस्सरं राजा ज्योत्कृतः; श्रीपूज्यैश्च कर्णसुरकारिण्या वाण्या धर्मदे-शना कृता । राजा चोक्तम्—'आचार्याः ! वृतः स्वानाद्ययमत्राऽऽगताः ?' श्रीपूज्यैरुक्तम्—'हृदपाहीनः' । राज्ञोक्तम्—'आचार्याः ! उचिष्ठत युयम्, पवित्रीरुक्त मदीयं नगरम्' । श्रीपूज्यैः प्रभुश्रीजिनदत्तस्वरिचोपदेशमण्णात् किमपि भणितम् । पुनरपि राज्ञोक्तम्—'आचार्याः ! किं न हृतं युयम्, किं मदीये नगरे घुम्पकं प्रतिपन्त्यां कथितवतं ? आहो-

श्वित् परिवारोपयोग्यन्नपानादि न लभ्यतेऽथवाऽन्यत्किमपि कारणं वर्तते यद्युयं भार्गमुत्तु आगतमपि मदीयं नगरं परिहृत्याऽन्यत्र व्रजथ ?' श्रीपूज्यैरुक्तम्—'महाराज ! युष्मदीयं नगरं प्रधानं धर्मक्षेत्रम् ।' 'तर्ह्युचिष्ठत चलत डिह्यौ प्रति, न कोऽपि गुप्मानङ्गलिकयाऽपि संज्ञास्यतीत्यादि' । 'श्रीमदनपालमहाराजोपरोधाद् युष्माभिर्योगिनीपुरमद्ये कदापि न विहर्तव्यमि' त्यादिश्रीजिनदक्षरिदचोपदेशत्वागेन हृदये द्यमाना अपि श्रीपूज्याः श्रीदिह्यौ प्रति प्रस्थिताः । बाधमानासु चतुर्विंशतिषु निखानयुगलीषु, त्रिदावलीं पठत्सु भङ्गलोकैषु, धवलेषु दीयमानेषु, वसन्तादिमाङ्गलिक्यरागेण गायत्सु गायनेषु, नृत्यमानासु नर्तकीषु, ऊर्ध्वाकृतेऽालम्बसहस्रेषु, मस्तकोपरि ध्रियमाणञ्जैल्लक्षसंख्यलोकैरनुगम्यमानैः श्रीमदनपालमहाराजदक्षरिः श्रीजिनचन्द्ररिभी राजादेशात्कृततलिकातोरण्यादिमहाशोभे श्रीयोगिनीपुरे प्रवेशः कृतः ।

४२. तत्र चान्यदा कदाचिदत्यन्तभक्तं कुलचन्द्रश्रावकं दुर्वलं दृष्ट्वा करुणार्द्रहृदयैः श्रीपूज्यैर्दत्तो द्रवरूपीकृत-कुङ्कुमकस्तूरिकागोरोचनादिसुरभिरद्वयलिखितानेकमन्त्राधरो यन्त्रपटः, भणितं च तस्याप्रतः—'महानुभावकुलचन्द्र ! निजमुष्टिप्रमाणैर्वासरेप पटो दिने दिने पूजनीयः, निर्माल्यीभूताश्चैते वासाः पारदादिसंयोगात् सुवर्णा भविष्यन्ति' । स च गुरुपदिष्टरीत्या पटं पूजयन् कोटीध्वजः सञ्जातः ।

४३. अन्यदोत्तरप्रतोल्यां बहिर्भूमौ गच्छद्भिः श्रीपूज्यैर्महानवमीदिने मांसनिमित्तं मिथ्यादृष्टिदेवताद्वयं महासं-म्भेण युध्यमानं दृष्ट्वा करुणयाऽधिगालिनाम्नी देवता प्रतिबोधिता । तथा चोपशान्तचित्तया श्रीपूज्या विश्रान्तः—'भग-वन्तो ! मया परित्यक्तो मांसवलिः, परं मम किञ्चिद्वासस्थानकं दर्शयत यथाऽहं तत्र स्थिता युष्पदादेशं प्रतिपालयामि' । श्रीपूज्यैस्तदप्रतो [भणितम्—] 'महानुभावे ! श्रीपार्श्वनाथविधिवैतै प्रविशतां दक्षिणस्तम्भे त्वयाऽवस्थातव्यम्' इत्युक्त्वा पौषधशालायां चाऽऽगत्य सा० लोहड सा० कुलचन्द्र सा० पाल्हणादिप्रधानश्रावकाणामग्रे कथितम् यथा—'श्रीपार्श्व-नाथप्रासादे प्रविशतां दक्षिणस्तम्भेऽधिष्ठायकर्मचिमुत्कारयतेति' । आदेशानन्तरं श्राद्धैस्तथैव सर्वं कारितम् । महावि-स्तरण श्रीपूज्यैस्तत्र प्रतिष्ठा कृता । 'अतिवल' इति नामाऽधिष्ठापकस्य कृतम् । श्रावकैश्च तस्य महान् भोगः कर्तुं प्रारंभे । अतिवलोऽपि श्रावकाणां चाञ्छितं पूरयितुं प्रयुक्तः ।

सं० १२२३ समस्तलोककृतव्रामणापूर्वकमनशनविधिना द्वितीयभाद्रपद वदी १४ देवीभूताः श्रीजिनचन्द्रश्रयः ।

४४. तदनन्तरं श्रावकैर्महाविस्तरणानेकमण्डपिकामण्डिते विमान आरोप्य 'यत्र काप्यम्प्राकं संस्कारं करिष्यत युयं तावतीं भूमिकां यावन्नगरवसतिर्भविष्यती' त्यादिगुल्वाक्यसृष्टेरेतीव द्रुभूमौ नीताः । तत्र च भूमौ धृतं श्रीपूज्यविमानं दृष्ट्वा जगद्भयानन्ददायकश्रीपूज्यगुणसरणात् समञ्जलत्परमगुरुलहाच—

चातुर्वर्ण्यमिदं मुदा प्रपतते त्वद्रूपमालोकितं,

माहृक्षाश्च महर्षयस्तत्र वचः कर्तुं सदैवोद्यताः ।

शाक्तोऽपि स्वयमेव देवसहितो युष्मत्प्रभामीहते,

तत्किं श्रीजिनचन्द्रसूरिसुगुरो ! स्वर्गं प्रति प्रस्थितः ॥

[२२]

साहित्यं च निरर्थकं समभवद्भिलक्षणं,

मन्त्रैर्मन्त्रपरैरभूयत तथा कैवल्यमेवाश्रितम् ।

कैवल्याज्जिनचन्द्रसूरिवर ! ते स्वर्गाधिरोहे हृहा !,

सिद्धान्तस्तु करिष्यते किमपि यत्तद्यैव जानीमहे ॥

[२३]

प्रामाणिकैराधुनिकैर्विधेयः, प्रमाणमार्गः स्फुटमप्रमाणः ।

हृहा ! महाकाष्ठमुपस्थितं ते, स्वर्गाधिरोहे जिनचन्द्रसूत्रे ! ॥

[२४]

इत्यादि मणिला बृहदसमाधानवशादुच्चैःस्वरेणाऽधुपातं कर्तुं प्रवृत्तः प्रवर्तकसाधुगुणचन्द्रगणिः । तदनन्तरमित-  
रेऽपि सार्धवो निजगुरुन्तेहविह्वलाः परस्परपराङ्मुखीभूयाधुपातं कर्तुं लभाः, श्रावका अपि प्रच्छादिकाञ्चलं नेत्रयो-  
रग्रे दत्त्वा तथैव भावं कर्तुं प्रवृत्ताः । क्षणान्तरे तादृशमसमञ्जसं दृष्ट्वा संयं धैर्यमवलम्ब्य च—‘भो ! भो ! महासत्त्वाः  
साधवो ! माऽसमाधानं कुरुत, श्रीपूज्यैर्मम सर्वाऽपि शिक्षा दत्ताऽस्ति, यथा युष्मन्मनोरथाः सेत्स्यन्ति तथा विधास्ये-  
ज्जो मेम पृष्ठलग्ना यूयमागच्छत’ इत्याश्वास्य सर्वसाधुसमेतः कृतकर्तव्यक्रियाकलापः समाजगाम पौषधशालायां सर्व-  
जनमान्यो भाण्डागारिकगुणचन्द्रगणिः । कतिचिद्दिनानन्तरं चतुर्विधसंघसमेतः श्रीचन्द्रके विहृतः ।

४५. तत्र च सं० १२१० विक्रमपुरे जिनपतिद्वरेर्जन्म, सं० १२१७ फाल्गुन शुक्लदशम्यां व्रतम्, सं० १२२३  
कार्तिकसुदि १२ अनेकदेशसमागतानेकसंघसम्मत्या प्रधानशकुनप्रेरणया श्रीजिनदत्तस्वरिपादोपजीविश्रीजयदेवाचार्य-  
हस्तेन श्रीजिनचन्द्रस्वरिपट्टे चतुर्दशवर्षप्रमाणः पट्टत्रिंशदाचार्यगुणालङ्कृतो महाप्राज्ञो नरपतिनामा क्षुल्लको महता महोत्स-  
वेनोपवेशितः श्रीजिनपतिस्वरिरिति नाम कृतम् । तस्य च द्वितीयस्थानीयः श्रीजिनचन्द्रस्वरिवाचको मुनिः श्रीजिनभ-  
क्ताचार्यनामाऽऽचार्यः कृतः । तत्र च तत्रत्यसमुदायसहितेन सा० मानदेवेन देशान्तरीयसमुदायसत्कारपूर्वकं सहस्रसं-  
ख्यद्रव्यव्ययेन महामहोत्सवः कारितः । तत्रैव स्थाने श्रीजिनपतिस्वरिभिः पद्मचन्द्र-पूर्णचन्द्रयोर्व्रतं दत्तम् । सं० १२२४  
विक्रमपुरे गुणधर-गुणशीलयोः पूर्णरथ-पूर्णसागरयोर्वीरचन्द्र-वीरदेवयोः क्रमेण दीक्षानन्दित्रयं कृतम् । जिनप्रि-  
यस्य चोषाध्यायपदं दत्तं श्रीजिनपतिस्वरिभिः । सं० १२२५ श्रीपूज्यैः पुष्करिणां सभार्यस्य जिनसागरस्य जिनाकर-  
जिनवन्धु-जिनपाल-जिनधर्म-जिनशिष्य-जिनमित्राणां व्रतं दत्तम् । पुनर्विक्रमपुरे जिनदेवगणिदीक्षा । सं० १२२७  
श्रीपूज्यैरुच्चायां धर्मसागर-धर्मचन्द्र-धर्मपाल-धनशील-धर्मशील-धर्ममित्राणां धर्मशीलमातुश्च व्रतम्, जिनहितस्य  
वाचनाचार्यपदं दत्तम् । तथा मरुकोट्टे शीलसागर-विनयसागरयोः, शीलसागरभगिन्यजितश्रीगणिण्या व्रतं दत्तम् ।  
सं० १२२८ सागरपाटे दु० सा(दुसाक्ष ?) सादलसेनापत्याम्बडकारिता अजितस्वामि-शान्तिनाथचैत्ययोः प्रतिष्ठा कृता  
च श्रीपूज्यैः । तत्रैव वर्षे चन्द्रके विहारः । आसिकापां चाऽऽसिकासमीपवर्तिग्रामागतान् श्रीपूज्यान् श्रुत्वा प्रमोदाति-  
शयादासिकावास्तव्यसमुदायेनाऽऽत्मना सार्धं श्रीभीमसिंहनामा राजाऽपि सम्मुखमानीतः । तत्र च सर्वातिशायिरूपान्  
लघुवयसः श्रीपूज्यान् दृष्ट्वा हर्षप्रकर्षाञ्छ्रीभीमसिंहभूपतिः कुशलवार्ताप्रश्नव्याजेन जिह्वापाटवदर्शनकृतहृल्लादालापया-  
मास । श्रीपूज्यैश्च राजनीत्युपदेशितद्वारेण विस्तरेण धर्मदेशना कृता । लम्बावसरेण राज्ञा केलिवशादुक्तम्—‘आचार्य !  
अस्माकं नगरे महाविद्वान् दिग्गम्बरो वर्तते तेन सार्धं वादं ग्रहीष्यसि ?’ पार्श्वोपरविष्टेन श्रीजिनप्रियोपाध्यायेनोक्तम्—  
‘महाराज ! अस्माकं दर्शन उपेत्य केनापि सह वादो न क्रियते, परं यदि कदापि कोऽपि पण्डितमानी स्वशक्तिं  
स्फोरपन् जैनदर्शनं वाञ्छहेलपन्नसाशुद्वेजपति तदा पश्चाद् न भूयते, किं बहुना यथातथा तस्मिन्निर्लोठित एवाऽस्माकं  
शरीरे सुप्तं भवति ।’ श्रीपूज्यानुद्दिश्य राज्ञोक्तम्—‘आचार्य ! एवम् ?’ श्रीपूज्यैरुक्तम्—‘महाराज ! एवमेव । पुनरप्यु-  
पाध्यायेनोक्तम्—‘महाराज ! ज्ञानवाद्बुद्धेनासद्गुरव एव समर्थाः, परं दर्शनमर्थादया ज्ञानामिमानं न कुर्यान्तोऽपि  
दर्शनविल्लवकारिणं प्रतिवादिनं स्वशक्त्या सकललोकममक्षं मानपर्यतादुचार्यं मुञ्चन्ति । राज्ञोक्तम्—‘आचार्य ! किमप-  
माचष्टे युष्माकं पण्डितः ?’ श्रीपूज्यैरुक्तम्—‘महाराज !

ज्ञानं मददर्पहरं भावति यस्तेन तस्य को वैद्यः ? ।

अमृतं यस्य विपापयति तस्य चिकित्सा कथं क्रियते ? ॥१॥

[२५]

इत्यादिदेशनाय गाढतरमार्वाजितो राजोक्तवान्—‘आचार्य ! किमिति विलम्बः कियते ?; नगरप्रवेशेऽपि बृहती वेला लगिष्यतीति’ । तदनन्तरं चतुर्विधसंघेन पृथ्वीपतिश्रीभीमसिंहेन च सार्धं पूर्वोक्तदृष्टीप्रवेशकरीत्या श्रीआसिकायां श्रीपूज्याः प्रविष्टाः ।

४६. तत्र चान्यदा बहिर्भूमौ गच्छतां साधुवृन्दालङ्कृतपश्चाद्भागानां श्रीपूज्यानां प्रतोलीप्रदेशे मिलितः सम्मुखमागच्छन् महाप्रामाणिको दिगम्बरः । सुखवार्ताश्रव्याजेनाऽऽलाप्य श्रीपूज्यैः सज्जनस्वरूपप्रतिपादकवृत्तेषु व्याख्यायमानेषु मिलितः कुतूहलात् सर्वोऽपि नागरिकलोको राजलोकश्च । तत्र च श्रीपूज्यानां स्फुरितं दृष्ट्वा लोकः सर्वोऽपि लघुनाऽपि श्वेताम्बराचार्येण जितो दिगम्बरः पण्डितराज इति परस्परं वार्तायामास । राजप्रधानदिदा-ककरिउ-कालाद्य राजसभायां गत्वा राजश्रीभीमसिंहस्याग्रे कथयामासुः—‘देव ! यस्याऽऽचार्यस्य सम्मुखं तस्मिन् दिने यूर्यं गता आसन् तेनाऽऽचार्येण लघुनाऽप्यत्रत्यो दिगम्बरो जित इति’ । राजा हर्षवशाद् विकसितवदनः प्राह—‘सत्यम् ?’ ते प्राहुः—‘देव ! सत्यं, नास्त्यत्र हास्यम्’ । राजोवाच—‘भोः कथं कथम् ?’ ते च हर्षविगात् परवशा इवोत्तुः—‘देव ! प्रतोलीप्रदेशे सर्वलोकसमर्क्षं तैरित्यमित्यं दिगम्बरो जितः’ । राजा प्राह—‘अहो ! पौरुषमेव प्राणिनां सर्वसम्पदो हेतुर्न लघुत्वं महत्त्वं वा । मया तस्मिन्नेव दिने तदाकृतिं दृष्ट्वा सम्भावितं यदस्याप्रतो दिगम्बरो वाऽन्यो वा विद्वान् ध्यातुं न शक्यते’—इत्यादिकां बहूनि प्रस्तां कृतवानिति । फाल्गुनशुक्लतृतीयायां देवगृहे श्रीपार्श्वनाथप्रतिमां स्थापयित्वा श्रीसारगपाटे देवकुलिकां प्रतिष्ठिता श्रीपूज्यैः ।

४७. सं० १२२९ धानपाल्यां श्रीसंभवस्थापना शिखरप्रतिष्ठा च कृता । सागरपाटे च यं० माणिभद्रपदे विनयभद्रस्य वाचनाचार्यपदं दत्तम् । सं० १२३० विक्रमपुरे थिरदेव-यशोधर-श्रीचन्द्राणाम्, अभयमति-जयमत्यासमति-श्रीदेवीसाध्वीनां च दीक्षा दत्ता । सं० १२३२ फाल्गुनसुदि १० विक्रमपुरे भाण्डागारिकगुणचन्द्रगणिस्तूपः प्रतिष्ठितः । तत्रैव वर्षे निजप्रभुप्रसादननिमित्तसमागतमण्डलीकभूपमण्डलीमण्डितमण्डलाकारस्कन्धावारवरोपशोभितकोट्टबहिःप्रदेशस्वकीय-प्रासादमध्यवर्तमानचक्रवर्तिराजधानीसमानलक्ष्मीकतत्कालिन्पन्नश्रीपार्श्वनाथमन्दिरशिखरहिरण्यमकलशदण्डप्रभृति-प्रभूतधर्मस्थानार्थप्रारब्धप्रतिष्ठामहोत्सवदर्शनकुतूहलवलिमिलितनानादेशवास्तव्यभ्यलोकसंघसंघाताकारसन्निवेशविशेष-शोभमानबहिःपरिसरश्रीमदासिकायां चत्वारिंशत्संख्यसर्वानवद्यविद्याभ्यासजितवाचस्पतिमित्युपतिजनमनःकुमुदखण्ड-मार्तण्डमण्डलायमानोपदेशैः श्रीपूज्यैर्विक्रमपुरीयसमुदायेन सार्धं विज्ञे । तत्र च ज्येष्ठानुक्रमेण समकालपुरःप्रारब्धपृथक्पृथक्प्रेक्षणीयकपञ्चशब्दवादनदिवर्धोपनकहर्षभरनुत्यमानस्तोकलोकौ चारितनिरुच्छनकदानगीयभानुगप्रधानगुरुनामश्रवणानन्तरवित्तीर्यमाणार्थसाधंतिरस्कृतैव श्रवणद्रव्यगर्वगान्धर्विकलोकौपश्लोक्यमग्ननिजनिजदेशपूर्वजनामधेयाकर्णोच्छलदमन्दानन्दामृतसरस्वरङ्गभङ्गिसङ्गसुखीभवदङ्गसमग्रहानुगम्यमानानां श्रीपूज्यानां प्रवेशः सञ्जातो ज्येष्ठशुक्लतृतीयायाम् । वादलच्छिन्नलक्षजगन्मध्याध्याममाधुशदाशीतिसंख्यसाधुमधुपयुर्पास्यमानकमकमलैः श्रीपूज्यैर्महता विस्तरेण प्रतिष्ठिते श्रीपार्श्वनाथशिखरे प्रतिष्ठितौ सुवर्णदण्ड-कलशावध्यारोपितौ । तस्मिन्नेव समये दुसाज्ञसाङ्गलघुज्या साङ्गश्राविकया पारुत्यद्रमशतपञ्चकेन माला गृहीता । धर्मसारगणि-धर्मरुचिगणी प्रतिनी कृता । आपाह-मासे च कन्यानयने विधिचैत्याले ये गृहस्थावस्त्रजिनपतिस्त्रिपितृव्यविक्रमपुरवास्तव्यसा० मानदेवकारितश्रीमहावीरदेवप्रतिमा स्थापिता । व्याघ्रपुरे पार्श्वदेवगणिर्दीक्षितः श्रीपूज्यैः । सं० १२३४ फलवर्धिकायां विधिचैत्ये पार्श्वनाथः स्थापितः । लोकयात्रादिकारणकलापभावि विज्ञस्वकीयधर्मध्यानशास्त्रपरिज्ञानहानिसंभावनानदीकृतलम्पमानाचार्यपदानुमेयजगद-साधारणगुणगणस्य जिनमतस्य चोपाध्यायपदं दत्तम्, गुणश्रीगणिन्या महत्तरापदं च, श्रीसर्वदेवाचार्याणां च दीक्षा जयदेवीसाध्याश्च । सं० १२३५ अजयमेरौ चतुर्मासी कृता । श्रीजिनदक्षरिस्तूपः पुनरपि महाविस्तरेण प्रतिष्ठितः । देवप्रभो दीक्षितस्तन्माता चरणमतिगणिनी च । सं० १२३६ अजयमेरौ पासटकारितमहावीरप्रतिमा प्रतिष्ठिता, अम्बि-

काशिखरश्च । सागरपाटेऽप्यम्बिकाशिखरः । सं० १२३७ बच्चेरके जिनरथो वाचनाचार्यः कृतः । सं० १२३८ आसिकायां बृहज्जिनयुगलं स्थापितम् ।

४८. सं० १२३९ फलवर्धिकायां भक्तिवशादनेकश्रावकैरनुगम्यमानान् वहिर्भूमौ गच्छतः श्रीजिनभक्ताचार्यान् दृष्ट्वा मत्सरवशाद्ज्ञानाद्वा महर्द्धिकश्रावकदर्पाद्वा कुर्मपरिपाकाद्वा नटभटपटलवेष्टित उकेशगच्छीयः पद्मप्रभनामा पण्डितमन्य आत्मनः पुरः पद्मप्रभेण जितो जिनपतिद्वरि रिति भट्टान् पाठयितुं लभ्यः । तदनन्तरं कोपावेगादुचालगत्या गत्वा श्रीपूज्यभक्तश्रावकैरालापितः स-‘आः पाप ! अलीकभापिन् पद्मप्रभ ! कस्मिन् काले जितस्त्वया जिनपतिद्वरि-र्यदेवं भट्टान् पाठयसि ?’ तेनोक्तम्-‘यद्यलीकं मन्यथ तदा पुनरप्यानयत स्वगुरुमिदानीमपि जेष्यामीति’ । तैरुक्तम्-‘आस्ताम[स]भमीमसमप्रकृते दुरात्मन् ! गृगालोऽपि सन् सिंहेन सह स्पर्धमानो निश्चितं मुमूर्षी’ त्यादिवद-त्सु तेषु, मिलिता उभयभक्तश्रावका अहङ्कारवशात् पणत्यागपूर्वकं चक्रुर्वीदव्यवस्थाम् । श्रुता च वार्ताऽजयमेरौ श्रीपू-ज्यैः, प्रेषितश्च तत्र तद्विजयार्थं संघप्रमोदायै च श्रीजिनमतोपाध्यायः । पुनरपि तत्रत्यसमुदायेन चिन्तितम्-‘एष दुरात्मा मृषाभापी कथयिष्यति मया पूर्वं जिनपतिद्वरिर्जितोऽतो ममाग्रे स्यात्तुमत्रवपुवन् स्वकीयपण्डितं प्रेषितवानि-त्यादि’ । तस्माच्छ्रीपूज्याः श्रीमुखेन जयन्त्वेनमिति विचार्य समुदायः श्रीजिनमतोपाध्यायेन सहाजयमेरौ गतः । तत्र च राजमान्येन श्रा० रामदेवेन विज्ञप्तः श्रीपृथ्वीराजः पृथ्वीपतिः-‘देव ! अस्मद्गुरूणां श्वेताम्बरैर्णैकेन सह वाद-व्यवस्था निष्पन्ना वर्तते, अतो यथा महापण्डितमण्डलीमण्डिते युष्माकं समामण्डपे फलवती भवति तथा प्रसादं कुरुतावसरं प्रयच्छतेति’ । केलिप्रियेण राज्ञोक्तम्-‘इदानीमेवावसरः’ । श्रे० रामदेवेन विज्ञप्तम्-‘गोस्वामिन् ! द्वितीयः श्वेताम्बरः पद्मप्रभनामा फलवर्धिकायां वर्तते’ । कौतुकाथिना राज्ञोक्तम्-‘तद्विषयेऽहं भलिष्यामि, स्वकीयान् गुरुन् प्रगुणयेति’ । श्रे० रामदेवेनोक्तम्-‘देव ! अस्मद्गुरोःऽत्रैव वर्चन्त इति’ । तदनन्तरं राजा भट्टयुवाय प्रेष्य पद्मप्रभ आनायितः । तस्मिंश्चागते दिग्बिजयार्थं नरानयने प्रस्थानीभूतः सकलबलसमेतः श्रीपृथ्वीराजः । तत्र पुनरपि श्रेष्ठि-रामदेवेन विज्ञप्तो राजा-‘देव ! अस्मद्भिन्निकविषये कीदृश आदेशः ?’ प्रतिपद्मप्रतिपालकेन राज्ञोक्तम्-‘प्रगुणय स्वगुरुन्, कार्तिकगुरुकृष्णमीदिने वादावसरः’ । श्रे० रामदेववचनात्तद्दिनोपरि श्रीअजयमेरुतः श्रीजिनमतोपाध्याय-पं० थिरचन्द्र-वा० मानचन्द्रादिसापुत्रद्वन्द्वपरिकरिताः श्रीजिनपतिद्वरयो नरानयने राजसभायां प्रभूताः, पद्मप्रभोऽपि भट्टयुवसमेतस्तत्र समागतः । ‘यावदहमागच्छामि तावत्तया वागीश्वर-जनार्दनगौड-विद्यापतिप्रभृतिपण्डितसमक्षमेतौ वादयितव्यौ’ इत्यादेशं मण्डलेश्वर-कहमास्सख दत्त्वा स्वयं राजा श्रमकृते श्रमस्थानं गतः । अतीव्रमणीयां श्रीपूज्यानां मूर्तिं दृष्ट्वा हर्षादाह मण्डलेश्वरः-‘अहो ! एके ईदृशा दर्शनिनः सन्ति ये दृष्टाः सन्तो नेत्रयोरानन्दं जनयन्ति, निर्वा-साथ दिग्गम्यराः पिशाचप्रया दृष्टाः सन्तो नेत्रयोरेकगुण्युत्पादयन्तीति’ । तदनन्तरं श्रीपूज्यैरुक्तं मण्डलेश्वरं [प्रति]-

पञ्चैतानि पवित्राणि सर्वेषां धर्मचारिणाम् ।

अहिंसा सत्यमस्तेषु त्रयागो नैद्युनचर्जनम् ॥

[२६]

अतो दर्शनानां निन्दा न कर्तव्येत्यादि व्याचख्त्वानेषु पूज्येष्वन्तरैवेव्याविशादुचालः पण्डितपद्मप्रभो वृत्तं पठितुं प्रवृत्तो मण्डलेश्वरं [प्रति]-

प्राणा न हिंसा न पिबेच्च मद्यं, वदेच्च सत्यं न हरेत्परस्वम् ।

परस्य भार्या मनसा न वाञ्छे, स्वर्गं यदीच्छे विधियत्प्रविष्टुम् ॥

[२७]

-इति । श्रीपूज्यैरुक्तम्-‘अहो युद्धपाठकता’ । स प्राह-‘आचार्य ! मामुपहससि ?’ श्रीपूज्यैरुक्तम्-‘महानुभाव पद्म-प्रभ ! कलाधिकले फालेऽस्मिन् क एक उपहस्यते को वा नोपहस्यते’ । स प्राह-‘तर्हि किमित्यहो युद्धपाठकतयुक्तम् ?’ श्रीपूज्यैरुक्तम्-‘महामत्त ! पण्डितसभायां शुद्धमेव पठ्यमानं मुखालङ्कृत्ये भवति । स प्राह-‘किं कथित् मोऽप्यलित



निर्वचनीकृतः पद्मप्रभः प्रोक्तवान् यथा—‘महाराज ! यदि यौष्माकीर्णं वचनं भवति तदिदानीमत्रोपविष्टविशिष्टलोक-  
प्रमोदैत्पादनाय कुतूहलानि दर्शयन्ते; तद्यथाऽऽकाशमण्डलादवतीर्थं युष्मदुत्तङ्गे निविष्टामतिरूपपात्रामेकां विद्या-  
धरीं दर्शयामि, पर्वतमङ्गलमयं कृत्वा दर्शयामि, नभस्तल इतस्ततो नृत्यमानान् हरिहरादीन् देवान् दर्शयामि, उच्छ-  
लत्कण्डोलमालाकरालं पारावारं समागच्छन्तं दर्शयामि, सकलमपीदं नगरमाकाशस्थितं दर्शयामीत्यादि’ । सम्भैर्विह-  
स्योक्तम्—‘पण्डित पद्मप्रभ ! यदि भवतेदृशेन्द्रजालकला शिक्षिता तत्किमाचार्यैः सह वादः प्रारब्धः । श्रीपृथ्वीराज-  
दानलाभाभिप्रायनिरन्तरसमागच्छदपरलक्षसंख्येन्द्रजालिकैः समं प्रारभ्यताम्’ । हर्षकुलचित्तेन तेनोक्तम्—‘पण्डित-  
मिश्रा ! अयमाचार्यः सर्वकलाकुशलमात्मानं मन्यतेऽतो यद्यद्य श्रीपृथ्वीराजसभायां युष्माकं समक्षं गर्वपर्वतान्नोचार-  
यिष्यते तदैव वातेन मिथ्यमानो धर्तुमपि न शक्यते’ । विहसितवदनात् श्रीपूज्यान् दृष्ट्वा तेनोक्तम्—‘आचार्य ! किं वि-  
लक्षं हससि ? अयं सोऽस्यसरो यदि काचिच्छक्तिरस्ति तदा दर्शय सर्वलोकचेतश्चमत्कारि किमपि कलाकौशलं स्वकी-  
यम्, किं वाऽमुष्याः सभातो बहिर्निःसरति’ । तदनन्तरं श्रीपूज्यैर्जिनदत्तशूरिनराममन्त्रसरणपूर्वमुक्तम्—‘पद्मप्रभ ! त्वं  
तावदात्मशक्तिस्फोरणानुसारेण यथोक्तमिन्द्रजालं प्रथमं निष्कासय, पश्चाद् वर्तमानकालोचितं किमपि वयमपि क-  
रिष्यामः’ । कुतूहलावलोकनाभिलाषाकुलतया श्रीपृथ्वीराजेन सौत्सुक्यमुक्तम्—‘पद्मप्रभ ! आचार्येणानुमतिर्दत्ताऽ-  
स्त्यतो वेगं कृत्वा स्वेच्छानुसारेण दर्शय नानाविधानि कौतुकानीति’ । तदनन्तरमन्तःशून्यत्वादाकुलव्याकुलेन श्रीम-  
त्पूज्यपुण्यप्रारम्भारप्रेरितेन च पद्मप्रभेणोक्तम्—‘महाराज ! अद्य रात्रौ देवीं पूजयित्वाऽभीष्टदेवताह्वानमन्त्रमेकाग्रचित्तेन  
ध्यात्वा कल्पे नानाविधमिन्द्रजालं दर्शयामि’—इति श्रुत्वा च हास्यसौत्कार्योच्छलदमन्दानन्दाश्रुव्यापूर्णनयनैः सर्वरपि  
लोकैर्देवीक्यभाषणपूर्वकं गाढतरस्युपहसितः पद्मप्रभः । तत्पश्चान्निर्लज्जकूडामणिना तेन सविक्राशवदनात् श्रीपूज्यानवे-  
क्ष्योक्तम्—‘आचार्य ! किं हससि ?, यदि त्वं भद्रोऽसि तदिदानीमेव किमपि दर्शय’ इति विहस्य श्रीपूज्यैरुक्तम्—  
‘पद्मप्रभ ! स्थिरीभूय ब्रूहि, किमिन्द्रजालमुच्यते ?’ तेनोक्तम्—‘त्वमेव ब्रूहि’ । श्रीपूज्यैरुक्तम्—‘दिवानाम्प्रिय ! असंभ-  
वद्वस्तुसत्ताविर्भावः’ । ‘तत् किम् ?’ श्रीपूज्यैरुक्तम्—‘पद्मप्रभ ! तदिदमद्य तवैव प्रत्यक्षीभूतं किं न पश्यसि ?’ तेनो-  
क्तम्—‘किमिति ?’ तदन्तरं श्रीपूज्यैः सौत्कार्यमुक्तम्—‘महानुभाव ! किं त्वया स्वमन्तरेऽपि संभावितमिदं कदाचिद्,  
यदहं विशिष्टासनोपविष्टसहस्रसंख्यमुकुटवद्भराजराजिधिराजितायां श्रीपृथ्वीराजसभायां गत्वा यथेच्छया वक्ष्यामीति;  
परमिदमसंभाव्यमपि देवनिर्गोदादस्तस्मान्निध्यादद्य संजातमिति, कोऽस्येन्द्रजालाद् भवच्चिकीर्षिताद् भेद इति ?’ । पुन-  
रपि क्रूराशयतया लोकोपहासमवगणय्य राजानमुद्दिश्य तेनोक्तम्—‘महाराज ! अनाक्रमणीयपराक्रमाक्रान्तिजपदाद्यः—  
कृतप्रतापप्रचण्डप्रभूतभूपतिव्रातसततमृग्यमाणादेशामृतसर्वस्वे त्वपि सकलमपि पृथ्वीं शासति युगप्रधान इति विरु-  
दमात्मन्ययमाचार्यैः प्रचुरत्यागदानवशीकृतसप्तभट्टलोकश्रुत्वेन पाठयति’ । राज्ञोक्तम्—‘पद्मप्रभ ! युगप्रधान इत्यस्य  
कः शब्दार्थः ?’ सहर्षेण तेनोक्तम्—‘महाराज ! युगशब्देन वर्तमानः कालो भण्यते, तस्मिन् यः प्रधानः सर्वोत्तमः स  
युगप्रधानशब्देनोच्यते’ । अत्रान्तरे श्रीपूज्यैर्वेगादेवोक्तम्—‘भूलै पद्मप्रभ ! यदपि तदपि भणित्वाऽस्माकं श्रुतोपरि  
राजानमुच्छलपितुमिच्छसि ?’ । श्रीपृथ्वीराजराजानमुद्दिश्य चोक्तम्—‘महाराज ! भिन्नरुचयः सर्वेऽपि प्राणिन इति  
केपांचित् कोऽपि सुरापयते । ततो यः क्षधिपेपामभीष्टो भवति तं प्रति नानाविधान्तरङ्गरङ्गवृक्षकानेकविरुदन्त्यासम-  
नोहरान् प्रधानशब्दानुचरन्ति ते । यथा त्वामाश्रित्य—जीवाऽऽदिश, पादावधार्यताम्—इत्यादिशब्दान् मण्गति मय-  
त्पादाविन्दाराधनैकमावधानमानसश्रीकृद्वासमण्डलेधरप्रमुपराजप्रधानलोकः, तथैतानुद्दिश्य यथोक्तान् शब्दानुचार-  
यन्त्येतत्सेवका इति । एवं तेषामपि सेवकाः प्रवर्तन्ते । अन्योऽपि लोकः सर्वोऽपि स्वगच्छमजनं नानाविधैर्वर्चनैर्वाद्यति  
परं न कोऽपि तेषां दोषमुद्घाटयति । अयं च पद्मप्रभोऽस्मां सभायामित्यं यदपि तदप्युल्लंघ्यं वदन् स्वस्य सर्वजनप्रत्य-

नीकवां प्रकाशयति' । तदनन्तरम् 'अयमाचार्यो लोकाचारानुसारेण युक्तं भाषते, पद्यप्रमथं वैलक्ष्यात् पेश्यन् प्रकटयतीति विचिन्त्य श्रीपृथ्वीराजेनोक्तम्—'जनादेन-विद्यापतिप्रभृतयः पण्डितमिश्राः । सावधानीभूय व्युत्पन्नयोः परीक्षां कुरुत, यथा यो महाविद्वान् भवति तस्मै जयपत्रं दीयते सत्कारश्च क्रियते' । पण्डितैरुक्तम्—'दिव । तर्कविद्या-विषये महाशुष्णमतिराचार्य इति परीक्षितम्, इदानीं युष्मदादेश्यात् साहित्यविषये परीक्षां कुर्मः । पण्डितमिश्रा ! युवां श्रीपृथ्वीराजेन भादानकोर्वीपतिर्जित इति वर्णयतम्' । श्रीपूज्यैः धणमेकमेकाग्रीभूय—

यस्याऽन्तर्वाङ्मुगेहं बलभृतककुभः श्रीजयश्रीप्रवेशे,  
दीप्रप्रासप्रहारप्रहृतघटतटप्रस्तमुक्तावलीभिः ।

नूनं भादानकीयै रणभुवि करिभिः स्वस्तिकोऽपूर्यतोच्चैः,  
पृथ्वीराजस्य तस्यातुलवलमहसः किं वयं वर्णयामः ॥

[२९]

इति वृत्तं पठित्वा व्याख्यातम् । पद्यप्रमेणापि लाघवमीरुगा पौर्वापर्यमनालोच्य शीघ्रं वृत्तं पठितम् । श्रीपूज्यै-रुक्तम्—'वृत्तं चतुष्पदमेव दृष्टं श्रुतं किमेतत् पञ्चपदं कृतम् ?' सभ्यानां च तत्पठिते वृत्ते पञ्चापशब्दा दर्शिताः । ईर्ष्या-वशात् तेनाव्युक्तम्—'पण्डितमिश्रा ! यस्यान्तर्वाङ्मुगेहमित्यादिवृत्तमाचार्येणोदानां न कृतं पूर्वपठितमेव पठितम्' । पण्डितैरुक्तम्—'स्यीरमव ज्ञायते लग्नम्' । 'आचार्य ! श्रीपृथ्वीराजसभामण्डपं गद्यवन्देन वर्णय' । श्रीपूज्या मनसि स-भावर्णनं कृत्वा खटिकया भूमौ लिखितुं प्रवृत्ताः, यथा—'चञ्चन्मेचकमणिनिचयरुचिरचरनारचितकुट्टिमोचरन्मरीचिप्रप-ञ्चखचितदिक्चक्रबालम्, सौरभरसम्भृतलोभवशब्दभ्रम्यमाणझङ्कारभूतभुवनभयानभ्यन्तरभूरिभ्रमरसम्भृतविकीर्णकुंभु-मसम्भारविभ्राजमानप्राङ्गणम्, महानीलश्यामलनीलपट्टचेलेल्लसदुल्लोछाञ्चललम्बमानानिलविलोलवलहलविमलमुक्ताफल-मालातुलितजलपटलाविरलविगलदुज्ज्वलसलिलधारम्, दिग्विक्षिप्तवलक्षचक्षुःकटाक्षलक्षविक्षेपक्षोभितकामुकपक्षामुक्तमौ-क्तिकाद्यनर्घपञ्चवर्णनूतनरत्नालङ्कारविसरनिःसरकिरणिकुरुम्बचुम्भिताम्यरान्धनिरालम्बनविचित्रकर्मप्रशिक्षत्सुमायु-धराजधानीविलासवारविलासिनीजनम्, क्वचिच्छृत्वाङ्कुरसास्वादमदकलकण्ठकलरवसमाननवगानगानकलाकुशलगाय-नजनप्रारब्धललितकाकलीगेयम्, क्वचिच्छृचिचरित्रचारुचनरचनाचातुरीचञ्चुनीतिशास्त्रविचारविचक्षणसचिवचक्र-चर्च्यमाणानाचारानाचारविभागम्, क्वचिदासीनोद्दामप्रतिवाद्यमन्दमदभिदुरोद्यदनवद्यहृद्यसमप्रविद्यासुन्दरीचुम्बमाना-वदावदनारविन्दकोविदवृन्दारकवृन्दम्, उद्धतकन्धरविधिमागधवर्षमानोद्भुरधैर्यशौर्वादायवधिष्यु, सुधाधामदीधि-तिसाधारणयशोराशिधवलितवसुन्धराभोगनिविशमानसामन्तचक्रम्, प्रसरन्नानामणिकिरणनिकरिवरिचितवासवशरसन-सिंहासनासीनदोर्दण्डचण्डिमाडम्बरखण्डिताखण्डवैरिभूमण्डलनमन्मण्डलेश्वरपटलस्यर्षाद्भट्टकिरीटतटकोटिसंकटविष-टितविसंकटपादविधरभूपालम् ; अपि चोद्यानमिव पुष्पागालङ्कृतं श्रीफलोपशोभितं च, महाकविकाव्यमिव वर्णनीयव-र्णकीर्णं व्यञ्जितरसं च, सरोवरमिव राजहंसान्तसं पद्मोपशोभितं च, पुनन्दरपुरमिव सत्या(?)धिष्ठितं विवुषकुलसङ्कुलं च, शगनतलमिव लसन्मङ्गलं कथिराजितं च, कान्तावदनमिव सदलङ्कारं विचित्रचित्रं च' । अत्रान्तरे पण्डितैरुक्तम्—'आचार्य ! समर्थं वर्णनं स्यालीपुलाकन्यायेन, ज्ञास्यते युष्माकं श्रुतितः' । तदनन्तरं श्रीपूज्यैः—'एवंविधे श्रीपृथ्वी-राजसभामण्डपमवलोक्य कस्य न चित्रीयते चेतः'—इति समर्थनं कृतम् । पुनरापि वाचयित्वा विस्तरेण व्याख्यातं च । श्रुत्वा च पण्डितैर्विष्णुपयशान्निजशिरो धूनिवम् । पद्यप्रमेणोक्तम्—'पण्डितमिश्राः ! एतदापि कादम्बयादिकथा-सम्यन्धि सम्भाव्यते' । पण्डितैरुक्तम्—'सूर्य ! कादम्बयादिकथाः सर्वा अस्माभिर्वाचिताः सन्ति, अतस्त्वं मौनं कुरु । मा भार्यासदस्तेन स्वं सुर्यं धूलिभिः' ।

५०. पूज्यानुदिश्योक्तम्—'आचार्य ! प्राकृतभाषया गद्यावन्देन श्लेषालङ्कारेण श्रीपृथ्वीराजमत्कान्तःपुरमुभटौ वर्णय' । श्रीपूज्यैश्चेहर्तमेकं चिन्तयित्स्वोक्तम्—

वरकरवाला कुचलयपसाहणा उल्लसंतसत्तिलया ।

सुंदरिबिंदु वव नरिंद ! मंदिरे तुह सहंति भडा ॥

[३०]

इति गाथाया विस्तरेण व्याख्याने च श्रीपूज्यमुखसम्मुखमतिकुतूहलतु सकलमपि लोकमवलोकमानमवलोक्य वैलक्ष्यात् पद्मप्रभेणोक्तम्—‘आचार्य ! मया सह वादमारभ्येदानीमन्यतराणामग्रे आत्मानं भद्रं भावयसि ?’ श्रीपूज्यैश्च नन्दिनीनाम्ना छन्दसा—

पृथिवीनरेन्द्र ! समुपाददे रिपोरवरोधनेन सह सिन्धुरावली ।

भवतां समीपमनुतिष्ठता स्वयं नहि फलगुचेष्टितमहो ! महात्मनाम् ॥

[३१]

इदं नवं वृत्तं पठितोक्तम्—‘पद्मप्रभ ! किमिदं छन्दः ?’ पण्डितैरुक्तम्—‘आचार्य ! अनेनाज्ञानेन सह श्रुवाणस्त्वमात्मानमेव केवलं क्लेशयति न फलं किञ्चिद्भवति । तथाऽऽचार्य ! खल्वन्येन चित्रकाव्यं कुरु’ । तदनन्तरं श्रीपूज्यैः खटिकया भूमौ रेखाकारं खड्गं कृत्वा तात्कालिकम्—

लसद्यशःसिताम्भोज ! पूर्णसम्पूर्णविष्टप ! ।

पयोधिसमगाम्भीर्य ! धीरिमाधरिताचल ! ॥

[३२]

ललामविक्रमाक्रान्तपरक्ष्मापालमण्डल ! ।

लब्धप्रतिष्ठ ! भूपालावनीमव कलामल ! ॥

[३३]

इत्येवंरूपश्लोकद्वयाक्षरलिखनेन भरितम् । तच्च चित्रकाव्यं वाचयित्वाऽतिहृष्टैः पण्डितैः प्रशंस्यमानान् श्रीपूज्यान् दृष्ट्वाऽमर्षवशाद्वाह पद्मप्रभः—‘पण्डितमिश्रा ! द्रम्ममहस्रमेकं दातुमहमपि समर्थो वृत्तंस्तो मामपि प्रशंसयत’ । मण्डलेश्वरकइमारोनेोक्तम्—‘रे शुण्डिक ! श्रीपृथ्वीराजसमक्षं यदपि श्रुवाणस्त्वमात्मानं गले ग्राहयसि’ । राज्ञोक्तम्—‘पण्डितमिश्रा ! एनमपि वराकं समदृष्ट्या वादयत’ । तैरुक्तम्—‘देव ! यदि गोरूपः किमपि वेत्ति तदैपोऽपि वेत्ति’ । राज्ञोक्तम्—‘मूर्त्याऽपि दृष्टया ज्ञायत आचार्यो विद्वान्, परमस्मत्समायां न्यायमय्यां वचनीयता यथा न भवत्यतः कारणात् पद्मप्रभोऽपि सर्वविषये युष्माभिः परीक्षयितव्यः’ । पण्डितैरुक्तम्—‘गोखामिन् ! पद्मप्रभः काव्यं कर्तुं न जानाति, आचार्यपठिते वृत्ते छन्दो नोपलक्षयति, आचार्येण तर्करीत्या वामावतारान्त्रिकवतारणे स्थापिते प्रत्युत्तरं किमपि न दत्तवान्, तर्कमार्गमपि न परिछिनत्ति, केवलं विरुपं भाषितुं वेत्ति, तथापि युष्मन्निरोधाद् विशेपेण समदृष्ट्या प्रक्ष्यामः’ । ‘आचार्य ! पण्डितपद्मप्रभ ! युवाम्—

“चकर्त दन्तद्वयमर्जुनं शरैः क्रमादसुं नारद इत्यवोधि सः ।”

इति समस्यां पूरयतमिति । क्षणादेव श्रीपूज्यैरुक्तम्—

चकर्त दन्तद्वयमर्जुनं शरैः क्रमादसुं नारद इत्यवोधि सः ।

भूपालसन्दोहनिषेवितक्रम ! क्षोणीपते ! केन किमत्र संगतम् ॥

[३४]

—इति । सम्भैरुक्तम्—‘आचार्य ! न किमपि लभ्यते, ईदृशया समस्या पूरिताया; यदस्माभिरसंगत्युच्चारणाय युवां पृष्टौ, त्वया च सैव समर्थितेति । तथा सरलकाव्यादेतदेव समस्याया दुःखत्वं यद्सांगत्यमपनीयते’ । पूज्यैरुक्तम्—‘पण्डितमिश्रा ! एवमपि समस्या पूर्यत एव; यतः श्रीभोजदेवसमायां केनाप्यागन्तुकपण्डितेन—

“सा ते भवाऽनुसुप्रीनाऽव्यचित्रकनागरैः । आकाशेन यका यान्ति”.....

इति समस्यापादत्रयं कथितम्; ‘देव ! किं केन संगतम्’ इति चतुर्थपादप्रक्षेपेण श्रीभोजराजसत्कपण्डितेन पूरिता’ । पण्डितैरुक्तम्—‘एवमपि पूर्यत एव, यदि पद्मप्रभसदृशः कोऽपि पूरको भवति; युष्मादृश्यानां त्रैविधिककाव्य-

शक्तियुक्तानां न युज्यत इदृशीं सम्यक्सां पूरयितुमिति । तदनन्तरं श्रीपूज्यैः क्षणमेकं विमृश्योक्तम्—  
चकर्त दन्तद्वयमजुंनः शरैः कीर्त्या भवान् यः करिणो रणाङ्गणे ।  
दिदृक्षया यान्तमिलाप दूरतः क्रमादसुं नारदमित्यबोधि सः ॥ [३५]

इत्येतद्व्याख्यानावसाने च विस्मयरसपरवशैः पण्डितैरुक्तम्—‘आचार्य ! भगवती सरस्वती तस्यैवैकस्मिन्नुदा,  
यदेवं चिन्तितान् पदान् ददाति’ । पार्श्वोपविष्टश्रीजिनमतोपाध्यायेनोक्तम्—‘पण्डितमिश्राः ! सत्यमेतद् यदाचार्यविषये  
परमेश्वरी श्रीवाग्देवी प्रसन्नाऽभूदिति, कथमन्यथैषा भगवती निजपुत्रैर्युष्माभिः सहाचार्यस्य साङ्गत्यमकारयत्’ ।  
पण्डितैरुक्तम्—‘पद्मप्रभ ! त्वमपि किमपि ब्रूहि’ । स प्राह—‘क्षणमेकं प्रतीक्षध्वं चिन्तयन्नसि’ । तैश्च स—‘पन्मासान्  
यावच्चिन्तयेरि’त्युपहसितः । तथा भणितम्—‘सर्वाधिकारिन् ! मण्डलेधरकइमास ! आचार्यसदृशः कोऽपि विद्वान्  
दृष्टः ?’ स प्राह—‘अद्याग्रतो न दृष्टः’ । अहुल्या निजतुरङ्गमान् दर्शयता राज्ञोक्तम्—‘आचार्य ! परतः पश्य पश्येत्यमी  
पट्टघोटकाः केन कारणेनोत्पतन्ति ?’ श्रीपूज्यैर्विमृश्योक्तम्—‘शृणु महाराज !

ऊर्ध्वस्थितश्रोत्रवरोत्तमाङ्गा जेतुं हरेरश्वमिवोद्दधुराङ्गाः ।

खमुत्प्लवन्ते जवनात्तुरङ्गास्तवाऽवनीनाथ ! यथा कुरङ्गाः ॥ [३६]

एतदर्थश्रवणे च प्रसन्नवदनं राजानं दृष्ट्वा पण्डितैरुक्तम्—‘आचार्य ! उदयगिरिनाम्नि हस्तिन्यध्वारूढः कीदृशः  
पृथ्वीराजः शोभत इति वर्णय’ । पूज्यैर्हृदये विमृश्योक्तम्—

विस्फूर्जद्दन्तकान्तं लसदुरुकटकं विस्फुरद्वातुचित्रं,

पादैर्विभ्राजमानं गरिमभृतमलं शोभितं पुष्करेण ।

पृथ्वीराजक्षितीशोदयगिरिभिभिविन्यस्तपादो विभासि,

त्वं भास्वान् ध्वस्तदोषः प्रवलतरकराक्रान्तपृथ्वीभृदुच्चैः ॥ [३७]

इति वृत्तार्थं श्रुत्वा प्रसाददानामिमुखे राजनि सति पण्डितैरुक्तम्—‘देव ! इतः स्थानाच्चतुर्दिक्षु योजनशतमध्ये ये  
केचन विद्वांसो विद्यावाहुल्यस्फुटदुदरोपरिदत्तसुवर्णपट्टाः श्रूयन्ते तेभ्यः सर्वेभ्य एव लक्षणस्पृत्या साहित्यपरिचयेन  
तकोभ्यासेन सिद्धान्तावगत्या लोकव्यवहारपरिज्ञानेनायमेवाचार्यः समधिकः । किम्बहुना, सा विद्यैव नास्ति या-  
ऽस्य मुखाम्भोजे सुखासिक्रया न विलसति’ । समस्यामपूरयित्वाऽपि पद्मप्रमेणोक्तम्—‘महाराज ! केषांचिन्मानुषाणां  
पार्श्वे विद्या असन्त्य एव भद्राः, यतस्ते तद्विद्यावलेन लोकैः सह निरन्तरं कलहायमानाः सकलमपि जगदुत्थ्र-  
यन्ति । यदुक्तम्—

विद्या विवादाय धनं मदाय प्रज्ञाप्रकर्षाऽपरवञ्चनाय ।

अभ्युद्यतिर्लोकपराभवाय चेपां प्रकाशे तिमिराय तेषाम् ॥ [३८]

श्रीपूज्यैरुक्तम्—‘भद्र पद्मप्रभ ! त्वदग्रे किंचिदभिहितं भणामि भगवन्तं मा रूप ! तेनोक्तम्—‘भण महानुभाव !  
‘इत्थमशुद्धं वृत्तादिकं पठन्तमेकमपि यतिनं दृष्ट्वा सर्वोऽपि मिथ्यादृष्टिलोको—अहो ! एते श्वेतपटाः शुद्धमपि पठितुं न  
जानन्ति किमन्यज्ज्ञास्यन्तीत्युपहसति—अतः कारणादस्मिन् वृत्तेऽद्य पश्चाद्भवता ‘प्रकर्षः परवञ्चनाये’ति ‘प्रकाश-  
स्तिमिराये’ति च पठनीयम् । तथाऽसिन्प्रस्तावे ‘विद्या विवादाये’त्यादिसुभाषितममम्बद्रयुक्तम्, यतो धर्मशील !  
किमस्माभिरुक्तं यच्चमस्माभिः सह वादं गृहाण, किं वा त्वयैवाऽसङ्गतथावकाणामग्रे कथितं यदहो ! अत्रानपत स्व-  
गुरुं यथेदानीमपि जयामीति’ । स स्वस्कन्धास्फालनपूर्वं प्राह—‘मया कथितम्’ । पूज्यैरुक्तम्—‘कस्य शक्या ?’ स प्राह  
‘सशक्या ।’ पूज्यैरुक्तम्—‘इदानीं सा किं काकैर्मक्षिता ?’ स प्राह—‘नहि नही’ति । पूज्यैरुक्तम्—‘तर्हि क गता ?’ म

प्राह—‘मम भुजयोर्मध्ये वर्तते, परमवसरमन्तरेण न प्रकाश्यते’ । पूज्यैरुक्तम्—‘अवसरः कदा भविष्यति ?’ । स प्राह—  
 ‘इदानीमेव’ । ‘तर्हि किमिति विलम्बः क्रियते ?’ स प्राह—‘राजानमालाप्य स्वशक्तिं स्फोरयिष्ये’ । पूज्यैरुक्तम्—‘वेगं  
 कुरु’ । तत्पश्चात् पद्मप्रभः स्वचेतस्येनाचार्येण निजशरीरसौभाग्येन वचनचातुर्येण विद्यावलेन वशीकरणादिमन्त्रप्र-  
 योगेण वा सर्वोऽपि राजलोकः स्वात्मनि सानुरामी कृतः, मया पुनरात्मभक्ताः श्रावका अपि तादृशराजप्रसादवर्णनो-  
 द्भूतविकाशमुखा अपि श्याममुखीकृताः, किं क्रियते ? कोऽप्युपायो न फलति; भवतु, तथापि “पुरुषेण सता पुरुष-  
 कारो न भोक्तव्यः” इति न्यायादिदानीमपि यदि किञ्चित्साहसं कृत्वाऽऽवयोर्द्वयोपि समश्रीकृता भवति तदाऽस्मिन्  
 देशे स्थातुं शक्यतेऽन्यथा महान्तं लोकपहासमसहमानानामस्माकं सश्रावकाणां देशत्याग एव भविष्यतीति विभाव्य,  
 राजानमुद्दिश्य चोक्तवान्—‘महाराज ! अहं पदत्रिंशत्संख्यदण्डनोपकायुधप्रकाराभ्यासेन मल्लविद्यायां कृतश्रमो चतैःस्तो  
 मया सममेनमाचार्यं बाहुयुद्धेन योधयेति’ । राजा च दर्शनिनामाचारानभिज्ञतया कौतुकदिदृक्षया च श्रीपूज्यमुखसं-  
 मुखमवलोकितवान् । पूज्यश्चाकारेङ्गितादिभिः श्रीपृथ्वीराजाभिप्रायमनुमीयोक्तम्—‘महाराज ! बाहुयुद्धादिकं दिक-  
 रिकाणामेव क्रीडा, यतो गलागलिलग्रा बालका एव शोभन्ते न महान्तः, शस्त्राशस्त्रि युध्यमाना राजपुत्रा एव शोभन्ते  
 न वणिजः, दन्तकलहेन युध्यमाना रण्डा एव शोभन्ते न राजदाराः, तत्कथमस्य वचनमुपादेयं सात् ? । पण्डिताथो-  
 च्छरप्रत्युत्तरदानशक्त्या परस्परं स्पर्धमानाः शोभन्ते’ । अत्रान्तरे पण्डितैरुक्तम्—‘देव ! वयमपि पाण्डित्यगुणेन युष्माकं  
 पार्थाद् दृष्टिं लभामहे न मल्लविद्याकुशलतया’ । पूज्यैरुक्तम्—‘पद्मप्रभ ! अस्यां सभायामेवं बुवाणः स्वदंष्ट्रिकयाऽपि  
 न लज्जे !; महाराज ! यद्यस्य शक्तिरस्ति तदैवोऽस्माभिः सह शुद्धया प्राकृतभाषया संस्कृतभाषया मागधीभाषया  
 पिशाचभाषया शरसेनीभाषया शुद्धयाऽप्यश्रमाभाषया शयेन वा पथेन वा लक्षणेन वा छन्दसा वाऽलङ्कारेण वा रसवि-  
 चारेण वा नाटकविचारेण वा तर्कविचारेण वा ज्योतिर्विचारेण वा सिद्धान्तविचारेण वा श्रुताम्, यदि पश्चाद् वयं  
 भवामस्तदा यादृशनेप कथयति तादृश एव वयम्, परं यदेषोऽस्माकं हस्तेन लोकविरुद्धं स्वदर्शनविरुद्धं मल्लयुद्धादि  
 कारयति तत्कथमपि न कुर्मः ! न चास्माकं तावन्मात्राकरणे लाघवम्; यतः कदाचित् कोऽपि हालिकादिः कथयि-  
 ष्यति—यदि यूयं पण्डितास्तदा मया सह हलकर्षणादि कुरुष्वमिति—तदा किमस्माभिस्तर्कतव्यम्, अकरणे च किमस्माकं  
 पाण्डित्यं याति ? । तथा महाराज ! यद्येव यथा तथाऽस्मान् जेतुं चाञ्छति तदाऽस्माकं पार्थाद् दृष्टिं काच्यं प्रश्नोत्तरं  
 वा गुप्तक्रिया-कारकादिकं वा पृच्छतु । अथवा खेच्छानुमारकतव्याक्षरसन्निवेशरूपया कल्पितया लिप्या किञ्चिद्दृष्टं  
 सम्भयकणं कथयित्वा रटिकया भूमौ लिखतु, यद्यदसीयहृदयस्यं वृत्तं न निष्काशयामस्तदा हारितमेव । अथवा वृत्तस्य  
 केवलान् स्वरान् लिखतु केवलानि व्यञ्जनानि वा लिखतु, यदि केवलस्तैरस्य हृदयस्यं वृत्तं न निष्काशयामस्तदापि  
 हारितमेव । तथैव तदुत्तराधाराणि पश्चानुपप्लव्यं लिखतु, किं वा वयं लिखामः । तथा वर्तमानकालवर्तिनांशिकनीय-  
 माननवनवरागामभरणपूर्वकं तात्कालिककाव्येनाऽन्यनिर्दिष्टकोष्टकाक्षरप्रक्षेपेण कोष्टकानेप पूरयतु, किं वा वयं पूरया-  
 मः’ । राजोक्तम्—‘आचार्यमिश्रा ! यूयं सर्वान् रागान् परिच्छिन्त ?’ पूज्यैरुक्तम्—‘महाराज ! यदि केनापि पण्डि-  
 तेन मह वादव्यवस्था निष्पन्ना स्यात् तदा क्रियते वार्ता काऽपि, अनेन पुनराजानेन मानुषेण मह रिपदमानानां  
 केवलमात्मनः कण्ठशोष एवेति’ । राजोक्तम्—‘आचार्य ! मा विपाद, यथोक्तकोष्टकपूर्तिरनिदर्शनेन यथाऽस्माकं  
 वृत्तले पर्यते तथा वृत्तं’ । पूज्यैरुक्तम्—‘ईदृशं किमपि यदि कथयत तदाऽस्माकमपि शरीरं सुखं भवति’ । तत्काल-  
 कारितराशिः राघवमानवंशोत्तिष्ठन्नपुनरागमणनपूर्वकं तत्कालकृतश्रीपृथ्वीगजज्यायाप्रियतगुणवर्णनरूपस्योक्ताशराणि  
 सर्वोपिस्मरि-रुद्रमासनिर्दिष्ट कोष्टकं प्रथिपद्भिः श्रीपूज्यैस्तस्यां ममायां कस्य कस्य मनःपद्मज आधर्यलक्ष्मीः गुणा-  
 मिरूपा न स्थापिता । अतिप्रमत्तेन श्रीपृथ्वीराजपृथ्वीपतिनोक्तम्—‘आचार्य ! जितं तस्या, विरुप्यः कोऽपि मनसि न  
 कार्षेः । पृथ्वीपदमंत्रमात्रं महसत्संख्यदेशसामितं प्राप्तं मया मल्लमिहसत्तुद्रमातानामापिपत्यं च; तथा न कोऽपि

प्रतिपक्षो मदीयां भूमिकां क्रमितुं शक्नोति यच्चमस्मिन् देशे वससीति । तथाऽऽचार्य ! मया न ज्ञातं यच्चमेवंविधं रत्नं वर्तसे, अतो पत्किञ्चिदनुचितमाचरितं तत्क्षन्तव्यमिति वदता हस्तौ योजितौ । पूज्यैश्च हर्षवशाद्-

यम्भ्रम्यन्ते तच्चैतास्त्रिभुवनभवनाभ्यन्तरं कीर्तिकान्ताः,  
स्फूर्जत्सौन्दर्यवयां जितसुरललना योपितः संघटन्ते ।  
प्राज्यं राज्यप्रधानप्रणमदचनिपं प्राप्यते यत्प्रभावात्,  
पृथ्वीराज ! क्षणेन क्षितिप ! स तनुतां धर्मलाभः श्रियं ते ॥ [३९]

इत्याशीर्वादानपूर्वकं राजवचनं बहुमानितम् । एवंविधं समाचारमवलोक्य वैलक्ष्यात् पद्मप्रभेणोक्तम्-‘महाराज ! एतावन्तं कालं समेकः समदृष्टिरस्यां सभायामासीः, इदानीं च त्वमपि स्वपरिवारानुवृत्त्याऽऽचार्येण पक्षपातं कृतवान् । राज्ञोक्तम्-‘पद्मप्रभ ! किमसद्दस्तेन कारयसि ?, यदि तव शरीरे काऽपि पाण्डित्यकलाऽस्ति तदाऽऽचार्येण सह वृद्धि, वयं न्यायं दापयिष्यामोऽथ नास्ति तदुचितं स्वप्रतिश्रये गच्छेति । स प्राह-‘महाराज ! न्यायवत्यां पृथ्वीराजसभायां गत्वा यः कथित् कलाकौशल्येनाऽऽत्मानं बहु मन्यते स मया सह ढौकतामित्याह्वानपूर्वकमङ्गुलीमूर्ध्वं करिष्य इत्याशावता मया पद्मत्रिशत्संख्यदण्डनायकायुधप्रकारा अभ्यस्ताः, अतो यद्यद्य तव सभायामेवा कला फलवती न भविष्यति तदा कदा भविष्यतीति ? ।

५१. अत्रान्तरे श्रीपृथ्वीराजातिवह्मणेन मण्डलीकराणकसमक्षेण श्रीजिनपतिस्वरिपादभक्तनेन श्रे० रामदेवेनोक्तम्-‘दिव ! शृणुत वार्तामेकाम्-श्रे० वीरपालपुत्रजन्मपत्रिकानुसारेण ज्ञायते, तव पुत्रो राजमान्यो द्रव्याढ्यो दानप्रियश्च भविष्यतीत्यादिज्योतिषिकवाक्यश्रद्धया भदीयः पुत्रो राजसभायां सञ्चरन्मा केनाप्यवहेल्यतामित्यभिप्रायेणाशाल्यकालादहमात्मविप्रेण पण्डितहस्तेन द्विसप्ततिः कला अभ्यासितः । अन्यामां च वनानां कलानां फलं मया दृष्टं किन्तु युष्मत्प्रसादान्मम संमुखां वक्रया दृष्ट्या केनापि नावलोकितम्, अतो बाहुयुद्धस्य फलं न दृष्टम्; इदानीं च मम पुण्याकृष्टस्तव सभायां पद्मप्रभः समागतोऽतो यदि युष्माकं निरोपो भवति पद्मप्रभस्य च संमतं भवति तदा बाहुयुद्धकलायाः फलमालोक्यते । केलिप्रियेण राज्ञोक्तम्-‘श्रेष्ठिन् ! वेगं कुरु, ऊर्ध्वो भव पद्मप्रभ !, त्वमपि स्वकलायाः फलं प्राप्नुहीति । तदनन्तरं द्वावपि मद्यग्रन्थि वद्धा गलागलि योद्धुं प्रवृत्तौ । धणान्तरे श्रे० रामदेवेन निहत्य भूमौ पातितः पद्मप्रभः । ‘श्रेष्ठिन् ! श्रेष्ठिन् ! अस्य कर्णां लम्ब्यो स्तो मा त्रोटयेति श्रीपृथ्वीराजवचनं निषेधकमप्युहासपरतया विधायकं मत्वा तत्कर्णपालीं हस्तेन गृहीत्वा पूज्याभिमुखमवलोकितवान् रामदेवः । पूज्यैश्च स्वशिरोपूत्रनेन ‘प्रवचनोद्वाहं मा कृथा’ इत्यादिवचनेन च निषिद्धः । लोकैश्च कलकलं कृत्वा परस्परमहामिकयोक्तम्-‘यथाऽहो मया प्रथममेव कथितं यच्छ्रेष्ठी जेष्यति; यदनेन सावष्टम्भं पद्मप्रभाभ्यस्तपद्मत्रिशदण्डकलातो द्विगुणकलास्याप्तः कथितः’-इत्यादि । राजादेशात् पद्मप्रभं मुक्तोत्थितः श्रे० रामदेवः । सोऽपि चोत्थाय धूलिमलिनं निर्जं वस्त्रादि श्रास्तेऽयत्, राजपुत्रैश्च श्रीपृथ्वीराजाक्षिप्तानुसारेण गले गृहीत्वा पर्यस्तः स वराकः । तत्पश्चात्तस्य पततः सोपानपङ्क्तिस्तत्कथा भग्नं मस्तकमधस्तनसोपानसमीपे क्षणं मूर्च्छां समागता । केनापि वण्टेन प्रच्छादिकाऽपहृतेति तादृशमसमञ्जसं दृष्ट्वा जिनशासनलाघवमीरुभिः श्रीजिनपतिस्वरिभिर्देयापरिणामात्तत्क्षणादेवाऽऽत्नभक्तश्रावकहस्तेन येना प्रच्छादिका दापिता तस्य । तथैकेन च वण्टेन हस्तकादानपूर्वकमूर्ध्वोत्कृत्य जितमस्माकं ठक्कुरेणेति वदता द्वितीयहस्तेन दत्ता तन्मस्तकं टक्करा । तदनन्तरं सहस्रसंख्यंविधप्रार्थनैर्लोकैस्तन्मस्तके टक्करां ददद्भिर्धवलगृहाह्वानिष्कासितः । श्रीपूज्यैश्च श्रीपृथ्वीराजहस्ते महाशैतवह्निकापट्टचतुष्कोणसण्डलघुहस्तचित्रकरलिरितमहाप्रधानछत्रबन्धपटो दत्तः । राजा पुनरतिमुत्तुहलाच्छत्रमवलोक्य-

पृथ्वीराय ! पृथुप्रतापतपन प्रत्यर्थिपृथ्वीभुजां,  
 का स्पर्धा भवताऽपराद्वैर्य(र्च्य)महसा सार्धं प्रजारञ्जने ।  
 येनाऽऽजौ हरिणेव खङ्गलतिकासंघृत्किमन्पाणिना,  
 दुर्बाराऽपि विदारिता करिघटा भादानकोर्वीपतेः ॥ [४०]

इत्येतच्छत्रयन्धवृत्तं वाचितं पण्डितैशोभयथाऽपि व्याख्यातम् । तथा तस्मिन्नेव पटे चित्रकरलिखितराजहंसिकायुग-  
 लोपरिस्थितम्-

कथमलिगपत्तसंगहमसुद्वयवणं मलीमसकमं च ।

माणसह्रियं पिअवरं परिहरियं रायहंसकुलं ॥ [४१]

परिसुद्धोभयंपक्खं रत्तपयं रायहंसमणुसरइ ।

तं पुह्विरायरणसरसि जयसिरी रायहंसि व्व ॥ [४२]

इति गाथाद्वयं वाचितं स्वयं पूज्यैर्महाविस्तरेण व्याख्यातं श्रुत्वा चाऽतिप्रमोदात् 'कमेकमस्याचार्यस्याभीष्टं करो-  
 मी'ति चिन्तयित्वा राज्ञोक्तम्-'आचार्य ! ममाथवा निजगुरोः शपथोऽस्ति ते, यदि त्वमात्मनोऽभीष्टमसम्पद्यमानं  
 ममाग्रे न कथयसि; यस्मिन् कस्मिन् वा देशे यस्मिन् कस्मिन् वा नगरे तावकं मनो रमते तदुपरि गृहाण पत्तला-  
 मिति' । श्रीपूज्यैरुक्तम्-'महाराज ! श्रुत, निजशुभोपाजितलक्षसंख्याद्रव्यः सा० माणदेवनामा श्रावकः श्रीविक्रम-  
 पुरे वसन्नस्ति । स च मम गृहस्थसम्बन्धेन पितृव्यो भवति । तेन च मम व्रतग्रहणसमयेऽत्यादरेण भणितम्-'वत्स !  
 कथमहमात्मीयान् जातकाननेकथा विलासान् कुर्वती द्रक्ष्यामीत्यभिप्रायेणानेकानि कष्टानि विपन्न मयैतावानर्थं उपा-  
 जितः । अतो वत्स ! किमेवं त्वयाऽऽत्ममनसि विकल्पितं यच्चं गृहस्थसासादुद्विग्न इव लक्ष्यसे ? । कथय किं द्रम्मान्  
 सहस्राणि दश विंशतिं दत्त्वा देशान्तरे कस्मिंश्चित् श्रेययाम्यत्रैव वा हृष्टं मण्डयामि कन्यकां वा कामपि परिणाययामि, अन्यो  
 वा यः कश्चित्तव चेतसि मनोरथो वर्तते तं कथय यथा पूर्यामीत्यादि'-मया तु तत्सर्वमवगणय्य स्वगुरुरूपदेशश्रवणो-  
 च्छलितपरमसंवेगान् सर्वसङ्गपरित्यागः कृतः । सोऽहं कथमद्य शुष्माकं देशाय वा नगराय वा स्पृहयामीति' । राज्ञो-  
 क्तम्-'तर्ह्यन्यतरं किञ्चित्कार्यं भण, यथाऽहमात्मोत्पन्नं हर्षं सन्मानयामि' । उत्तुकीभूय श्रे० रामदेवेनोक्तम्-'देव !  
 जयपत्रार्पणविषये प्रसादः क्रियताम्' । राज्ञोक्तम्-'श्रे० रामदेव ! अद्य सरसुत्तरं वभूव, दिनद्वयमध्ये निजकायैणा-  
 जयमेरावागमिष्यामि । तत्रागतः सन्निश्चयेन जयपत्रमर्पयिष्यामि' । श्रेष्ठिनोक्तम्-'देवनिरोपः प्रमाणम्, परनितः स्वाना-  
 दधाऽऽसद्गुणां महाविस्तरेणाजयमेरौ प्रवेशो भवति तथाऽऽदिशत' । राज्ञोक्तम्-'मण्डलेश्वर ! त्वया तथा कर्तव्यं  
 यथा श्रे०रामदेवगुरवो महत्यां शोभायां भवन्त्यामजयमेरौ निजोपाश्रये प्रभृता भवन्ती'त्यादिशिक्षा कदासास्य दत्ता ।

५२. तदनन्तरं ततः स्थानादुत्थाय सहस्रसंख्यतुरङ्गमाधिरूढराजपुत्रानुगम्यमानमण्डलेश्वरकइमासप्रसुरराजप्र-  
 धानैः सह प्रीतिवातां कुर्वन्तः, स्वकर्णाभ्यामात्मीयकीर्तिं शृण्वन्तः, प्रभूतलोकादीयमानादियोपे गृह्णन्तः, श्रीपृथ्वीराज-  
 सत्के मेधाडम्बरनाम्नि उद्ये प्रभावनायै मस्तकोपरि ध्रियमाणे, पुरमध्ये स्थाने स्थाने रङ्गभरेण प्रेक्षणीयके निष्पद्यमाने,  
 दाने च व्याप्रियमाणे, चचर्यां दीयमानायां, धवलेषु गीयमानेषु, श्रीगौतमस्वामिगणधरप्रभुरपूर्वजसत्कगुणगणप्रशं-  
 सनपूर्वकं बिरुदावलीर्दिदस्तु भट्टलोकेषु, श्रीपृथ्वीराजसभायां श्रीजिनपतिश्वरिभिर्जितः पण्डितपद्मप्रभ इत्याद्यर्थप्रतिव-  
 द्वासु तत्कालनिष्पन्नासु चतुष्पदीषु पठ्यमानासु, निःस्थानैः सह पञ्चशब्देषु वाद्यमानेषु, राजादेशान्नगरशोभया शोभिते  
 श्रीअजयमेरौ चैत्यपरिपाटिपूर्वकं पौषघण्टालायां समागताः श्रीपूज्याः ।

५३. दिनद्वयानन्तरं प्रतिज्ञातार्थनिर्वाहकः सबलवाह्नो महाराजाधिराज-श्रीपृथ्वीराजः श्रीअजयमेरौ निजघवल-

गृहे समागत्य ततः स्थानाद्दस्तिस्कन्धाधिरूढेन जयपत्रेण सह पौषधयालायामागतो ददौ च जयपत्रं श्रीपूज्यानां हस्ते । पठितथाशिरादः श्रीपूज्यैः । श्रावकैश्च कारितं महाप्रार्थानक्रमम् । तस्मिन् वर्षार्थानक्रे त्रे० रामदेवेनात्मगृहात् पारु-  
त्यद्रम्माः षोडश सहस्राणि व्यपीकृताः । सं० १२४० विक्रमपुर आत्मना पञ्चदशैः श्रीपूज्यैर्गणियोगतपश्चक्रे ।  
१२४१ फलिप्रार्थिकायां जिणनागाजित-पद्मदेव-गणदेव-यमचन्द्रानां धर्मश्री-धर्मदेव्योश्च टीक्षा दत्ता । सं० १२४२  
माघसुदि १५ श्रीजिनमतोपाप्याया देवीभूताः । सं० १२४३ खेटनगरे चतुर्मासी कृता । सं० १२४४ श्रीमदणहिल-  
पाटकनाञ्चि पत्तन इष्टगोष्ठ्यां वर्तमानानां वश्यायमभयकुमारमुक्तान् भाण्डशालिकसंभवः—'अभयकुमार ! त्वं स्वाज-  
न्येन तत्र कोटिसंरथद्रव्याधिपत्येन तत्र राजमान्यतया क्रिमस्माकं फलम् ? यच्चमस्मद्गुरुन् श्रीउज्जयन्त-शत्रुञ्जयादिति-  
थेषु यात्रां न कारयसि ?' एवं प्रोत्साहितः सन् वश्यायोऽपि 'भाण्डशालिक ! मा कांचिदनिवृत्तिं कथाः, करिष्यामि  
सर्वं भद्रम्'—इत्युक्तं राजबुलं गतः । तत्र च महाराजाधिराजभीमदेवं राजप्रधानं जगद्वेयनामानं प्रतीहारं च विज्ञाप्या-  
जयमेरुनास्तव्यसरतरसंघयोग्यं स्वयं लेखितराजादेशं गृहीत्वाऽऽत्मगृह आगतः । तदनन्तरं वश्यायेनात्मसमीपाका-  
रितभाण्डशालिकसमक्षं राजादेशं सरतरसंघयोग्यं श्रीजिनपतिश्रियोग्यं स्वकीयं विज्ञप्तिस्त्रयदं दत्त्वा प्रधानलेखनाहकः  
श्रीअजयमेरौ संघपार्थे प्रेषितः । श्रीपूज्या अपि राजादेशदर्शनाद् वश्यायश्रीअभयपुरमारसत्कनिज्ञप्तिस्त्रयदयनाचनाच्च  
संघप्रार्थनया च श्रीअजयमेरुनास्तव्यसंघेन सह तीर्थयन्दनार्थं चलिताः ।

५४. त्रिशुवनगिरौ यशोभद्राचार्यसमीपेऽनेकान्तजयपताका-न्यायानतारादिव्रैतर्क-दशरूपकादिग्रन्थान् भणित्वा,  
श्रीपूज्यादेशात् त्रिशुवनगिरौपसंघेन सह, तर्कभणनोपष्टम्भकारकशीलनागर-सोमदेवयतिद्वयसहितौ पं० यतिपालगणि-  
धर्मशीलगणी तीर्थयात्रोपरि प्रस्थितानां श्रीपूज्यानां मिलिता कथयतः स्म, यथा—'प्रभो ! श्रीयशोभद्राचार्येण युष्मदा-  
देशात् प्रस्थितानामस्याक्रमये कथितं यथा—'यदि युयं कथयत तदहमपि युष्माभिः सह यात्रायामागच्छामि, यथा श्री-  
गूर्जरायां सञ्चरतां श्रीपूज्यानामग्रे स्थितः काहलिकश्च ब्रजामि येन कोऽपि प्रतिमह्यः संमुखमपि स्वात् [न] शक्नोति  
ममपि च निजगुरुगृहमात्रं कुर्यात् लघुतरः कर्मसञ्चये भवतीति'—अस्माभिस्तु युष्माविरोपाभावात्त्रिपिद्ः श्रीमदा-  
चार्यः । श्रीपूज्यैरुक्तम्—'कचिर कुर्याच्च यदि तमाचार्यमानयध्वम् । भोरिदानीमपि कथमपि स आगच्छति ?' तैरुक्तम्—  
'प्रभो ! इदानीं दूरदेशे वर्तते स इति नागच्छति' । तथा, यथा चतुर्दश सहस्राणि नदीप्रवाहा गङ्गाप्रवाहे मिलन्त्येवं  
विक्रमपुर-उद्या-मरुकोड-त्रैसलमेरु-फलार्थिका-डिह्ली-गण्ड-भाण्डव्यपुरादिनगरवासुभ्योऽभ्यलोत्संघा अहमह-  
मिरुया श्रीअजयमेरवीयसंघस्य मिलिताः । श्रीपूज्या अपि विद्यायुगेन तपोयुगेनाचार्यमन्त्रादिशक्त्या श्रावकलोक-  
भक्त्या संसारविरक्त्या गृहस्पतिप्रायप्राणि(वाणी?)संसक्त्या स्थाने स्थाने प्रवचनप्रभावनो कुर्यान्तः श्रीसंघेन सह प्राप्ताश्च-  
न्द्रामत्याम् ।

५५. तत्र च संघमध्यस्थितरथप्रतिमानन्दनाथं पञ्चदशभिः साधुभिः पञ्चभिराचार्येभ्य सह ग्रामाणिकाः शृण्णमा-  
पक्षीयाः श्रीअरुलङ्कदेवश्रयः समागत्य रथप्रतिमाह्वानमहोत्सवदर्शनार्थमिलितलोकरोमेलारुदर्शनाद् व्यापुष्य दूरदेशे  
श्रद्धसाधस्ताद् स्थिताः । श्रीपूज्यैश्च मानुषं प्रेष्य पृच्छापितास्ते, यथा—'आचार्यमिश्राः ! केन कारणेन चैत्ययन्दनाम-  
कृत्वेव युयं व्यापुष्य स्थिताः ?' इति । तैरपि प्रेषितमानुषस्याग्रे कथितं यथा—'वेङ्गनाचार्याः मन्त्रि वेङ्गमाभिः सह  
लघुगृहकथा व्यवहार करिष्यन्तीति ?' । तेनाप्यागत्य पूज्यानामग्रे भणितम् । पूज्यैश्च—'करिष्यते व्यवहारः, शीघ्र-  
मागच्छते'त्यादि भाणितं तन्मुपेन तेषामग्रे । तदनन्तरं ते ममागत्य ज्येष्ठानुक्रमेण यन्दनानुबन्धनादिकं सर्वं कृतवन्तः ।  
अरुलङ्कदेवश्रिभिरुक्तम्—'किं नामधेया आचार्यमिश्राः ? पार्श्वस्थितेन मुनिनोक्तम्—'श्रीजिनपतिश्रिनामानः श्रीपू-  
ज्याः ! तत्प्रथाचैरुक्तम्—'आचार्यमिश्राः ! केन कारणेनेदंशमयुक्तमात्मनाम कारितम् ?' । पूज्यैरुक्तम्—'कथं ज्ञायतेऽ-  
युक्तमेतदिति ?' तैरुक्तम्—'व्यक्तमेव ज्ञायते; तथाहि जिनशब्देन सामान्यकेशलिन उच्यन्ते तेषां पतिन्तीर्थैर्ह एवेति

तीर्थङ्करनाम्नाऽऽत्मानं वाद्यन्तः परमेश्वराणां तीर्थङ्कराणां महतीमाशातनां कुरुष्वमिति । तस्मान्जिनपतिश्चरिरिति नाम युक्तम् । श्रीपूज्यैरुक्तम्—‘आचार्यमिश्राः ! स्वादेवं यदि युष्माकमेवैकं विवक्षितं प्रमाणीकुर्वन्ति विद्वांसः, परं तेऽग्रतः पश्चाच्च धनं विचारयन्त्यन्यथा तेषां प्रेक्षावत्ताहानिप्रमक्तेः । यौष्माकीणां चेदृशीं वार्णां दृष्ट्वा वयमेवं मन्यामहे यदुत युष्माभिलोक्यात्रयैव केरलया...(!) ग्रन्थाम्पासः परित्यक्तः । कथमन्यथा युष्माकं जिनपतिश्चन्द्र एवंविधा विप्रतिपत्तिरुत्पद्यते ?; यतो नहि लक्षणविद्यायामेक एव तत्पुरुषनामा समासो वर्णितः । सन्त्यन्वेऽपि पञ्च समासा वर्णिताः । यदुक्तम्—

पद् नमामा बहुव्रीहिर्द्विगुह्वन्द्वस्तथाऽपरः । तत्पुरुषोऽप्ययीभावः कर्मधारय इत्यमी ॥ [४३]

तथाऽप्येनापि पण्डितेन चित्री(?) प्रकटनाय पद्ममासनामनिर्वाह्याऽऽर्या कृतेयम्—

द्विगुरपि सद्गुह्वन्द्वोऽहं गृहे च मे सततमव्ययीभावः ।  
तत्पुरुष ! कर्म धारय येनाहं स्यां बहुव्रीहिः ॥ [४४]

‘तैरुक्तम्—‘ततः किम् ?’ पूज्यैरुक्तम्—‘योऽर्थः क्वाप्येकेन नमासेन न घटते स तत्र द्वितीयेन घटिष्यते, अतः किमिदुच्चारलीभ्यायुक्तमित्युक्तम् । तैरुक्तम्—‘कथमन्येन समासेन जिनपतिरिति नाम युष्मासु सद्गुह्वन्द्वत्तम् इति ?’ श्रीपूज्यैरुक्तम्—‘शुभ्रत, जिनः पतिर्यस्यासौ जिनपतिरिति बहुव्रीहिममासे क्रियमाणे को गुणः को वा दोषो भरतीति भणत’ । तैरुक्तम्—‘आचार्यमिश्रा ! बहुव्रीहौ क्रियमाणे न कोऽपि दोषो भरति, स्वस्य जैनत्वख्यापनलक्षणो गुणश्च भरति । परमिदृश्या मनसि कल्पितया कष्टपिष्टरूपा किमिति लोको व्यामोक्षते ?; प्राज्ञलभेव जिनपतिश्चरिरिति नाम किमिति न क्रियते ?’ पूज्यैरुक्तम्—‘येषां चेतसि लक्षणविद्या सम्यक् परिस्फुरति तेषामग्रे मम विषमं वा किमपि नास्ति । यतस्तेऽप्यशब्दानपि प्रधानशब्दत्वेन समर्थयन्ति, किं पुनः प्रधानशब्देषु प्रयुज्यमानेषु वाच्यम् । पुनरपि तैरुक्तम्—‘भारसिद्धमेव, परं संघेन मह यात्रा कापि मिदान्ते साधूनां निषेधतया भणिताऽस्ति, यदेवं यूयं प्रश्रित्याः ?’ पूज्यैरुक्तम्—‘किमिदमुत्पन्नमापन्नं मुक्ताऽप्ये विद्वांसः स्तोत्रं पन्नं वा मिदान्तभणितमनाश्रित्य धर्मकृत्ये प्रवर्तन्ते ?’ तैरुक्तम्—‘आचार्य ! अतिष्टया यूयं यदद्यापि सिद्धान्तवलमालम्बत’ । पूज्यैरुक्तम्—‘शापते लग्नं केचिद्दृष्टाः केचिन्न शृष्टा इति’ । तैरुक्तम्—‘किं युष्माभिरैरेकैः सिद्धान्ता दृष्टा न द्वितीयैः ?’ । पूज्यैरुक्तम्—‘यदि द्वितीयैः सिद्धान्ता दृष्टा अभविष्यन् वदा ते निधिते नैरभवदिष्यन्’ । तैरुक्तम्—‘आचार्यमिश्रा ! अतिना सता संघेन मह तीर्थयात्रायां न गन्तव्यमित्यादीनि निषेधकराभ्यानि सिद्धान्ते किंवा वयं दर्शयामः, किंवा यूयं विषयस्वधराणि दर्शयथ । अथवाऽस्तु दूरे सिद्धान्तः सार्थीयगुरोरेव वचापि मा निष्ठा । यतस्तेनोक्तम्—

विहितमदिगपसुपत्यो संधिगो विहित्यगुविहित्यविहारो ।  
कटपाऽहं पदिस्त्वामि स्त्वामि तं धंभणयनपरं ॥ [४५]

इत्यादि । पूज्यैरुक्तम्—‘आचार्यमिश्राः ! किमिति पुत्रप्राप्तेन (?) कथ्यते यदयं सिद्धान्ताधराणि दर्शयाम इति ? यतः सञ्चितस्त्वर्थेव स्तोत्रेते, यदि सिद्धान्तेऽन्यत्त्वधराणि दर्शयेत, तानि पुनर्द्विगुह्वन्द्वत्तम् न प्रमाणीक्रियते विद्वद्भिरिति निरर्थकं सञ्चित्यभोगम् । यानि पुनः सिद्धान्तमप्ये गन्त्यधराणि तान्यन्यैरपि दृष्टानि भविष्यन्तीति न तानि दर्शयितुं सञ्चित्यभोगं युक्तमिति । तैरुक्तम्—‘युष्मारमपि सिद्धान्तमभिलाषाधिष्येव वयं संघेन मह यात्रायां प्रश्रित्या इति श्लोकः न युक्तम् । पूज्यैरुक्तम्—‘इदमीदमेव, यदि कथमपि वयं सिद्धान्तानुगामेन युष्मान् भविष्येद्विदुं न दत्तनुमः परं युष्माभिरपि सान्यधर्मत्वात् मार्गार्थीभूष च भोग्यम् । यत्परमरक्षिता युक्तिः सिद्धान्तानुगामिनी भवति तदा भानतीया, न शृङ्खलित्वाद्वादः शपते’ । तैरुक्तम्—‘प्रमाणमिति’ । गदन्तर्धं श्रीपूज्यैरुक्तम्—‘आचा-

यमिथा ! आचार्यः स एव क्रियते येनानेके देशा दृष्टा भनन्त्यनेकेदेशमन्विधन्यथ भाषा ज्ञाता भनन्तीति सिद्धान्तेऽस्ति । तैरुक्तम्—‘अस्तीति’ । श्रीपूज्यैरुक्तम्—‘कार्यकारणेन लघुपयसोऽपि वयमाचार्यपदे च प्रवेशिता इत्यतोऽधुनाऽज्ञातदेशभाषापरिज्ञानार्थं संघेन सह प्रस्थितानामस्माकं तीर्थयात्रा यदि भवति तदा शङ्को दुग्धैर्भुतः, कस्तूरिका कर्पूरेण वासितेत्येकमुत्तरम् ; तथा संघेन गाढतर वयमभ्यर्था यदुत्तर—प्रभो ! अनेकचार्याकलोकसंभूलायां गूर्जरत्रायां तीर्थानि सन्ति, तानि च ज्योक्तुं चलितानस्मान् दृष्ट्वा कश्चिच्चार्याकस्तीर्थयात्रानिषेधाय प्रमाणयिष्यति, तदा सिद्धान्तरहस्यापरिज्ञानाद्देशैरुक्तत्वाचासाभिर्न किमप्युत्तरं दातुं शक्यते; अतो मा जिनशासने लाघवमभूदिति ययं यथा तथाऽस्माभिः सह तीर्थवन्दनार्थमागच्छत—इत्यादिसंघाम्बर्धनया वयमागता इति द्वितीयमुत्तरम् । तथा साधूनां नित्यकृत्यव्याघातसंभारनया सिद्धान्ते संघेन सह यात्रा निषिद्धेति । यदा नित्यकृत्यव्याघातो भवति तदा न क्रियत एव । अस्मिन् संघे उभयकालप्रतिक्रमणव्रत्तचर्यनिर्धेयमरुभनताधनेकाभिग्रहग्रहणपूर्वकतीर्थानि वन्दितुं श्रावकलोकस्थागतोऽस्तीति कथमस्माकमावश्यकादिनित्यकृत्यव्याघातसंभारः ?—इत्याद्यनेकयुक्तिप्रतिपादनप्रमोदिताः श्रीअकलङ्क-देवसूरयः प्राहुः—‘आचार्यमिथाः ! खरतराचार्य इति शब्दश्रवणेनाप्यम्माभिर्ज्ञातमेव यदि(इ) ययं पुष्टालम्बनमन्तरेण नैवमपवादमाश्रयतः, पर किन्तु मारवो लोकोऽस्तिस्थूलभापी श्रूयते, अद्य च मरुस्थलात् संघेन सहाचार्या आगताः सन्तीति श्रुतम् ; अतोऽम्माचार्याः कथं कथं भापन्त इति द्रष्टुं कौतुकादागत्यास्माभिर्भूयमालपिता न निरुपा-मिप्रायेणेति यदनुचितमुक्तं तत्क्षन्तव्यम्’ । पूज्यैरुक्तम्—‘आचार्यमिथा ! इष्टोद्योगमपि यदपि तदपि वक्तुमायाति, किं पुनरिदानीस्थायाम् ; अतो युष्मानुद्दिश्याम्माभिरपि यत्किञ्चिदनुचितमाचरितं तत्क्षन्तव्यमिति’ । तदनन्तरं तैरुक्तम्—‘आचार्यमिथाः ! अद्यैव युष्माकं झुता रीतिं पश्यतामस्माकं चिन्ताद् यदेतदस्मिन् देशे श्रूयते—खरतराणामा-चार्यां बादलवियममन्त्र—इति तर्कि सत्यं किञ्चाऽलीकमित्येवंरूपः भन्देहोऽपगतः । यतो नहि निर्मूला प्रसिद्धिर्भवति । तथाऽऽचार्यमिथाः ! साधूनां निहरणस्यातिकालो भवत्यतो मुत्कलयामः’ इति । पूज्यैरुक्तम्—‘अद्याम्माकं प्राधुर्णका न भविष्यथ ?’ हर्षोत्तरम्—‘प्राधुर्णकास्त एवोच्यन्ते ये देशान्तरादागता भवन्ति, वयं चात्रत्या एवेति कथं युष्माकं प्राधुर्णका भवामः, ययं पुनरस्माकं प्राधुर्णका भवन्तिवति’ । पूज्यैरुक्तम्—‘युक्तमेवैतद्’ इत्यादिकां प्रीति-वातां कृत्वा हर्षितचिन्ता गतास्ते निजोपाश्रयम् ।

५६. द्वितीये च दिने तत्रत्यैः श्रावकैः श्रीपूज्यानामग्रे द्वादशानर्चनन्दनकं दातुं समागत्य श्रीपूज्या विज्ञप्ता यथा—‘भगवन्तो ! वन्दनकं दापयतेति’ । श्रीपूज्यैर्मुद्रां धृत्वा ‘यथासमाधी’त्युक्तम् । तदनन्तरं ते श्रीजिनवल्लभसूरिदि-क्षितमार्गागतविधिना वन्दनकं दातुं प्रवृत्ताः । हर्षवशाच्छ्रीपूज्यैरुक्तम्—‘भो भो महासत्ता ! गूर्जरत्रायामष्टपुटयामुत्त-वस्त्रिकया वन्दनकं दीयते, युष्माभिः किमिति चतुष्टपुटया दत्तम् ?’ । तैरुक्तम्—‘भगवन्तो ! वयं श्रीअमयदेशसुरिभिरेवं शिक्षिताः—इत्यादिका पूर्वजगतां श्रुता कामद्दे विहताः संघेन सह । तत्रापि चैत्यवन्दनार्थं महाप्रामाणिकः पौर्ण-मासिकः प्रभूतमाधुपरिकल्पितः श्रीतिलकप्रसन्नरिः समानगाम सधमध्ये । तत्र च सुगमानीश्वरपूरकं स्वगुरुपादपद्मयो-वाहेरोच्छलितकीर्तिपयःपूर्ववैलेहितदीरं परिहितप्रधानपट्टहीरं स्वर्गाभरणालङ्कृतमनसिजमदशशरीरं माण्डव्यपुरीययनह-रकलक्ष्मीधरश्रावणमद्गुल्या दर्शयता तेन श्रीपूज्याः पृष्टा—‘किमेतं संघपतयः ?’ इति । श्रीपूज्यैरुक्तम्—‘आचार्य ! धा-कमात्रस्य संघपतिरिति नाम दातुं न युक्तम् ; तेनोक्तम्—‘भाषा तादरेऽपिचा श्रूयते’ । पूज्यैः सोपहागमुक्तम्—‘प्रामीणजनसुलभा भाषामाश्रित्योचर दास्यमि ?’ नेनोक्तम्—‘किं त्वमपि लोभप्रमिद्धा भाषा वचनमात्रेण त्यानयसि ?’ पूज्यैरुक्तम्—‘बहुला लोकाप्रमिद्धा भाषा अगमनाश्रयशुद्धिनाऽभाष्यवर्णयः माधुमिः परिश्रियन्ते । तथाऽऽचार्य ! नाम्नाकं लोकेषु कोऽपि मत्तरोऽस्ति, येन तेषां भाषामप्रमाणीवृत्तः ; किं तर्हि प्रतिभा मता तथैव भाषया भाष्यं यया भाष्यमाणया मान्यानां लाघवं न भवति’ । नेनोक्तम्—‘निमनया भाषया लाघवं सिद्धिश्चरति ?’ पूज्यैरुक्तम्—‘मर्वा-

ऽपि कोऽपि जानात्येतत् । तेनोक्तम्—‘कथम् ?’ पूज्यैरुक्तम्—‘आचार्य ! संघशब्देन श्रमण-श्रमणी-श्रावक-श्राविका-रूपलोकसमुदायो भण्यते । यदुक्तम्—‘साहृण साहृणीण य सावय-साविद्यचञ्चिवहो संघो’-इत्यादि । तस्य च पतिस्तीर्थकर एवाऽऽचार्यो वा । तेनोक्तम्—‘केवलश्रावकमेलेकेऽपि संघशब्दः प्रयुज्यमानो दृश्यते । पूज्यैरुक्तम्—‘कारणे कार्योपचाराद् दृश्यते यथा घृतमापुरित्यादि; परमपुत्रारवलेन यस्मिंस्तस्मिन् क्रियमाणे प्रयोगे मिथ्या-दृष्टिलोकमप्ये कदाचिदुपहासो भवति, यदेव गृहस्थत्वात्तस्य श्रावकस्य किमपि कुतिसत् दृष्टोपहासपरतया वक्ष्यति-यद्दो ! जैनानामयमादिरि(मधिपतिः ?) यदेतस्मादधोवर्तिनोऽप्ये सर्वेऽपि जैनाः, अस्य चार्यं प्रशाल(?) इति । तथा-ऽऽचार्य ! परत उपचारं मुञ्चाहमन्यथापि संघपतिशब्दं श्रावके वर्तमानं दर्शयिष्यामि’ । तेनोक्तम्—‘कथम् ?’ पूज्यैरुक्तम्—‘बहुव्रीहिसमासाश्रयणेन, यथा-संघः पतिर्यस्मासौ संघपतिः श्रावकमात्रः । तेनोक्तम्—‘ननु मया महद्विके श्रावके संघपतिशब्दः प्रयुक्तः । पूज्यैरुक्तम्—‘आन्तिवशात् प्रयुज्यन्त एवान्यत्रापि शब्दाः’-इत्येवमादिना प्रकारेण प्रपञ्चेनानेकसिद्धान्तयुक्तिप्रकाशनेन श्रावके प्रयुज्यमानतया संघपतिशब्दे निषिद्धे विलक्षीभूतः श्रीतिलकप्रभद्वरिः । पुनरप्यालपितः सुखवार्ताप्रच्छनेन श्रीपूज्यैर्यथा—‘साम्प्रतं यूयमत्रैव स्थाण्वः ?’ इति । तेनापि सोपहासमुक्तम्—‘आचार्य ! अत्रैवेति भुवता भवताऽहो ! स्वस्य वाक्यशुद्धिनामाध्वयनार्थेनोपुष्यं प्रकाशितम् । यतस्तत्र

‘तद्देव सावज्जणुमोहणी गिरा ओहारिणी जा उ परोवचाहणी’

इत्यादिना ग्रन्थेन कृत्वाऽवधारिणीं वाणीं न ब्रूयान्मुनिरित्युक्तम् । भयांश्रैवेति सावधारणं भाषत इति । सर-लशर्मः श्रीपूज्यैरुक्तम्—‘आचार्य ! अतीव शोभना नोदना दत्ता, यतः सावधारणं वाक्यमुक्तं सत् कदाचिद् व्यभिच-रत्यतो मुनिरलीकभाषी स्यात्, तथा च व्रतभङ्ग इति; परं तिलकप्रभद्वरे ! भवता ममाभिप्रायो नावबुद्धोऽन्तः स्वामि-प्रायस्त्वंभाषया प्रकाशित्यते । तथाऽऽचार्य ! तर्कस्य भणितस्यैतदेव फलं यन्निरामिनिवेशीभूय स्वकीयं वाक्यं यादृशं तादृशं वा यथा तथा समर्थ्यते । अद्य च कारुतालीयन्यायेनाऽऽऽयोर्यज्ञ-यमुनाप्रवाहयोरिव प्रियमेलकः संजातः, ततो यद्यभिनिवेशं मुक्त्वा तर्करीत्येदगोष्ठी क्रियते तदा सफली भवति’ । तेनाप्युक्तम्—‘प्रमाणमिति’ । तदनन्तरं श्रीपू-ज्यैरुक्तम्—‘आचार्य ! साधुः सावधारणं वचनं न ब्रूयादेव किंवा कदाचिद् ब्रूयादपि ?’ तेनोक्तम्—‘कस्मिन् किं किं ? आद्ये पक्षे स्ववचनव्याघातः ।

अद्वयस्मिं य कालस्मिं य पञ्चुत्पन्नमणाय ।

निस्संक्रिय भवे जंतु एवमेयं तु निदिसे ॥

[४६]

इत्यादिसिद्धान्तविरोधश्च । द्वितीये च पक्षे न वयमुपालभ्याः, भवदभ्युपगमासुरारणास्मामिरुक्त्वतात् । तथा-ऽऽचार्य ! यस्मिन् वाक्येऽवधारणं साक्षात् दृश्यते तत्र स्वयमवश्यमूहनीयम्—‘सर्वं वाक्यं मावधारणं’-इति न्यायाद्, अन्यथा व्यवस्था फापि न स्यात् । पटमानयेत्पुक्ते यदपि तदप्यानयेत्तदेव । अपि च, तथा-अहं देवः, मुनापुर्णरु-त्यादिवाक्येष्वपि अहंनेन देवः परमपदानास्या, अहं देव एव नाऽऽदेवः, तथा मुनापुर्णरुदेव परमपदपददर्शकत्वेना-श्रित इत्यादयोऽपि निषेधा न स्युः । तथा सिद्धान्तिकान्यपि वाक्यानि सावधारणानि गन्ति मनोहराणि भ्रान्ति, यथा—‘धम्मो मंगलमुपिद्धं’ इत्यादि धर्म एव महल्लमुकृतं न दधिदुग्धादिः धर्मो महल्लमेव नामहल्लरूपः; धर्मो महल्लमुकृतमेव न दधिदुग्धादिसमानमिति । तेनोक्तम्—‘आचार्य ! अयोग्यव्यवच्छेदाय वाऽन्ययोग्यव्यवच्छेदाय वाऽन्यन्यायोग्यव्यवच्छेदाय वैयक्तः प्रयुज्यते विनश्रणः । अत्र च प्रयुक्तेनामुनेनकारेण किं व्यवच्छिद्यते ?, न तावदयोग्यव्यवच्छेदाय च विज्ञेयान् पुनः पठित एव समर्थः स्यात्, अत्र च विज्ञेयस्यैवामारतः; नाप्य-न्ययोगो वा, नम्य चाम्मकरूपवृत्तविराजित्वेन व्यानान्तरयोगं निषेदुमशक्यत्वानः; नाप्यन्यन्यायोगः, क्रियया मर्मं पठित एव दृष्टव्यदु-च्छेदाय प्रमुञ्चन्नाश्रायामारतः; तन्नादिचरामहत्यादपुन एवापमेयवन्द इति । श्रीपूज्यैः

सावष्टम्भमुक्तम्—'भवेदयुक्तमेवायं यदि वयं कथमपि समर्थयितुं न शक्नुमः, परमत्रानेका युक्तयो दक्षिताः, पुनरपि भवत्प्रश्नोत्तरदानपूर्वकमनेका युक्तीर्दर्शयामः। प्रतिपाद्यस्य सति सन्देहे विप्रतिपत्तौ वा तदपनोदार्थमवधारणं प्रयुज्यते विचक्षणैः। तथा हि—एके युक्तिवलेन समर्थयन्त्यस्त्यात्मेति; अपरेऽपि युक्तिवलेन कथयन्ति नास्त्यात्मेति; स्वयं च प्रत्यक्षेण नोपलभ्यते तस्मात् किमस्ति नास्ति चाऽऽत्मेति संशयानं शिष्यं प्रति, तथा यद्रस्तुनः सकाशात्तन्वान्यत्वाभ्यामवधार्यं तदवस्तु, यथा व्योमकमलम्, तथा च सुखादिकम्। अथाऽऽत्मनः सुखादिकं भिन्नाभिन्नमित्यसिद्धताहेतोर्यतोऽभेदे क्रियाविरोधो नित्यस्यैकरूपस्य क्रियाया असंभवात्; भेदपक्षे तु ये क्रमभावितो न ते परामितात्मसमवायिनो यथा बीजाङ्कुरादयस्तथा च सुखादयः—इत्यादिना प्रकारेण नास्त्यात्मेति विप्रतिपद्यमानं च शिष्यं प्रति सावधारणं वाक्यमुच्यते। यथा—अस्त्येवाऽऽत्मा प्रतिप्राणिस्वसंवेदनप्रमाणप्रसिद्धैश्चैतन्यान्यथाऽनुपपत्तेरिति। स चावधारणरूप एवशब्दः कसिञ्चित्स्थानके प्रयुक्तः किमपि व्यवच्छिन्नन्ति। असत्प्रयुक्तस्त्वयमयोगान्ययोगात्पन्त्ययोगांस्वीनपि व्यवच्छिन्नन्ति। तथा हि—साम्प्रतं यूयमत्रैव स्थाप्य इत्यस्माभिरुक्तं तत्र सत्सम्पत्तैतच्छब्देनात्रेतिरूपेण मासकल्पादियोग्येतरक्षेत्रेभ्यः सकाशादस्य क्षेत्रस्य किमपि व्यवच्छिद्यते च नवा?। यदि न व्यवच्छिद्यते तदाऽस्य प्रयोगो निरर्थक एव। अथ किञ्चिद् व्यवच्छिद्यते तदैतद्विशेषणं सज्जातम्, प्रकरणवलाच विशेष्यं नगरमायातम्। विशेषणाच्च पुरः पठित एवशब्दो वर्तमानकालापेक्षयैतेन नगरेण सदा युष्मद्योगं व्यवस्थापयति, तस्मिन् व्यवस्थापिते, वर्तमानकालापेक्षयैवाऽन्वेन नगरादिना योगं स्वयमेवकारो व्यवच्छिन्नन्ति। तथैवात्यन्तायोगमपीत्यनेनाभिप्रायेण साम्प्रतमित्युक्तम्। तस्माद्युक्तमेवायमेवकारः।

“अः कामचारे” तद्विषय एव शब्दे परेऽवर्णस्य लोपो भवति, यथा—इहेव तिष्ठान्यत्रेव वा तिष्ठेत्यादि। नियोगे तु, इहैव तिष्ठ मा यासीः क्वापीति। पूज्यैर्विहस्योक्तम्—‘तत्किमस्मन्नियोगादेतावता परिवारेण सह भवानव स्थितः?’ तेनोक्तम्—‘तर्हि अत्रैवेत्यप्रयोगः’। पूज्यैरुक्तम्—‘प्रयोगार्थापरिज्ञानेऽप्यशब्दसं नोद्भावनीयम्’। तेनोक्तम्—‘वचनमात्रेण मय्यज्ञानता नाऽऽपेक्षणीया’। पूज्यैरुक्तम्—‘एवमेतत्’। तेनोक्तम्—‘तर्हि भण्यतामयमेवशब्दः कसिञ्चै?’ पूज्यैरुक्तम्—‘अनेकेष्वर्थेषु भविष्यति, परं प्रथममेकसिन्नर्थे भण्यते, लग्नं तं सावधानीभूय शृणु—यथा वचनमेव वचनमात्रमित्यादिषु प्रयोगेषु स्वार्थे एवशब्दः, एवमत्रापि। अथाऽयमर्थः—यथा अपि संभावनायां प्रयुज्यते, एवमयमप्येवशब्दः संभावनायां प्रयुज्यते विद्वद्भिर्न्यथा—‘बपुरेव तवाचष्टे भगवन्। चीतरागता’ मित्यादि श्रीहरिभद्रस्वरिवाक्येषु।

यत्र तत्रैव गत्वाऽहं भरिष्ये स्वोदरं बुधाः। मां विना यूयमत्रैव भविष्यथ तृणोपमाः ॥ [४७]  
इत्यादिषु वेति चेति युक्त एवायमेवकारः। तथा पृच्छाकाले हि प्रच्छकः सावधारणं वा द्यूयान्निवधारणं वा द्यूयान् तस्य वचनं विचारमर्हतीति लोकस्थितिर्यतोऽसावजानान एव पृच्छति। यस्त्यन्यदा वक्षित तस्य वचने व्यभिचारित्वादिदोषोद्भावनेन स्वशक्त्यनुसारेण कदर्थ्यते, यथा तस्य महती शोभा भवतीत्यादि विदग्धजनरीतिं विस्मारयता भवता स्वकीयं पाण्डित्यं प्रकाशितम् इत्यादिवचनसन्दर्भेणात्मप्रयुक्तव्यकारविषये उत्तराणि शतं श्रीजिनपतिस्वरिषुस्वामिभोजात् श्रुत्वाऽतिप्रमुदितमनसा तिलकप्रमद्वरिषोक्तम्—‘आचार्य! सकलायामपि गूर्जरघ्रायां त्वं सिंह इव निःशङ्कः सन् विचरेर्न कोऽपि तव सम्मुखं प्रतिमह्यतया स्थास्यति, येन त्वया ममाप्यत्र एवं विवृम्भितमिति’। श्रीपूज्यपार्श्वस्थितेन मुनिना शकुनग्रन्थिर्वेदः। अभूत्पूर्वस्वोचितपण्डितगोष्ठीसमुद्गतहर्षप्रकर्षात्तिलकप्रमद्वरिः श्रीपूज्यान् प्रशंसन् स्वोपाश्रयं गतः।

५७. तत्पश्चात् संघः श्रीशशाङ्गपल्लवां जगाम। तत्र च सापुक्षेमन्धरः स्वपुत्रप्रदुम्नाचार्यवन्दनार्थं वादिदेवाचार्यसत्कपौषधशालायां गतः। तेनापि च वन्दनाऽनन्तरं सादरमालपितः कुशलवार्तापृच्छनेन सः। तथा—‘साधो! केन कार-

येन पितृपर्यागतं वादलब्धिलब्धजगज्जपपताकश्रीदेवाचार्यप्रदक्षितमार्गं मुक्त्वा यस्मिन् तस्मिन् कुमते लग्नः ?' क्षेम-  
 न्धरेणोक्तम्—'मस्तकेन वन्दे, स्वाभिप्रायेणाहमेवं जाने यन्मया रुचिरं कृतं यत्तरतरमार्गे सर्वविधापारगतः  
 सिद्धान्तानुवर्ति नव्यः श्रीजिनपतिश्रिगुरुत्वेनादृतः' । अमर्षवशादाचार्येणोक्तम्—'साधो ! यन्मरुस्थलीमध्ये जडलोकं  
 प्राप्य सर्वज्ञापितमनेन भवद्गुरुणा, तद्गुचितमस्य, यतो निर्वृक्षे देशे एरण्डोऽपि कल्पवृक्षायते; परं युष्मादृशां परमगु-  
 रुश्रीदेवश्रिवचनामृतभृतकर्णपुगलीकुल्यासंसिक्तहृदयक्षेत्रोद्गतविवेकाङ्कुराणां जिनप्रवचनप्रतिकूलप्रतिपादनप्रवीणविप्र-  
 तारकलोकवाक्यहिममहिम्नां यदन्यथाभावो जनितस्तेनास्माकं मनो द्यूतेतराम् । परं यदवापि यूयमस्माकं मिलिता-  
 स्तेनातिशोभनं सज्जातम्' । सा० क्षेमन्धरेणोक्तम्—'आचार्य ! मम गुरुर्मरुस्थलीं मुक्त्वा गूर्जरत्रामध्ये भवतः समीपे  
 टकायां वाद्यमानायामागतोऽस्ति; परं ज्ञायते लग्नं यदि त्वं कथमपि संमुखो भवसि' । विलक्षहास्यकरणपूर्वकमाचार्ये-  
 णोक्तम्—'साधो ! वेगं कृत्वा स्वगुरुं प्रगुणय स्वप्रकृषितस्थापनावेति' । सा० क्षेमन्धरोऽपि निजपुत्रप्रयुष्माचार्यप्रति-  
 बोधनार्थाभिप्रायेण समीपमागत्य श्रीपूज्या विवक्षाः, यथा—'भगवन्तो ! मम पुत्रं प्रयुष्माचार्यमायतनानायतनविचार-  
 करणपूर्वकं प्रतिबोधय स्वशिष्यीकृततेति । अहमिदानीं वन्दनार्थं तत्पार्थिवं गतोऽभूवम् । सोऽपि च वादाभिमुख इव मया  
 ललित इति' । पूज्यरुक्तम्—'साधो ! प्रमाणमिति' । संघमध्यस्थितभाण्डशालिकसंभववाहिविक्रोद्धरणप्रमुखप्रधानपुरुषं  
 परस्परं विचारार्थोक्तम्—'येन गुरुत्वेन प्रयोजनेनागता यूयं प्रथमं तत् कुरुत, पथाद्वादविवादादिकं कुर्यात्' । सा० क्षेम-  
 न्धरेणोक्तमेवं भवतु । पूज्यरुक्तमेवमपि प्रमाणमिति । सा० क्षेमन्धरेण प्रयुष्माचार्यसमीपे गत्वा भणितम्—'आचार्य !  
 इदानीं संघस्तीर्थवन्दनार्थमुत्कण्ठयावशाद्गुत्तालो व्रजति, चलन्त्य श्रीमन्तो भट्टारका भवता सममायतनानायतनविचारं  
 करिष्यन्ति' । तेनोक्तम्—'भवतु, परमितः स्वानाद् बहिर्न गन्तव्यमिति' । तदनन्तरं सर्वोऽपि संघो महावित्तरेण स्त-  
 म्भनक्रोडयन्तादितार्थेषु महाद्रव्यस्तवेन महाभावस्तवेन तीर्थानि वन्दितवान् पूजितवानिति । शत्रुजये च मार्गात्तौ-  
 रूपादिकारणाग्रगतः ।

५८. ततो व्यापुत्र्यागच्छति संपे कौतुकवशात् केचिदग्रे भूत्वाऽऽज्ञापष्टीमध्ये आगताः श्रीपूज्यपादभक्त-  
 धारकाः, उपविष्टाश्च वाणिजकस्यैकस्य हृष्टे । वाणिजकेनापि पृष्टाश्च ते—'संघमध्य आचार्यः कोऽप्यस्तीति' । तैरुक्तम-  
 स्तीति । तेनोक्तम्—'भविष्यन्ति घना आचार्याः, परं प्रयुष्माचार्यमदृशो भरतक्षेत्रमध्ये कोऽपि नास्तीति' । उपहाम-  
 वशात्तरप्युक्तम्—'श्रिष्टिन् ! मत्समेतदुक्तम्, यथा सर्वथा भवतापि सट्टाः संतारं कोऽपि नास्ति, किं पुनराचार्येण  
 सहस्र इति । ये च प्रयुष्माचार्यान् मर्गुणैः ममधिरास्ते कथं तेन सट्टा इति कथ्यते' । तथा प्रयुष्माचार्यभक्ताभयट-  
 टण्डनायकेन मर्गुलीरुनहितेन संघसंमुखमागत्य महावित्तरेण प्रवेशः कारितः, श्रीपूज्यानां च धरलपृष्ठप्राय आगामो  
 पामहो दर्शितः । पूज्याश्च गपरिराराम्नात्र स्थिताः । सा० क्षेमन्धरः पुनरपि श्रीपूज्यानुवाया प्रयुष्माचार्यवन्दनार्थं  
 तद्पार्थिवं गतः । तेनापि मचद्गुमानमालम्प्य तीर्थवन्दनार्तापृच्छनारमाने च भणितो यथा—'साधो ! किं त्वं स्वकीयं  
 पयो विस्मारितम् ?' क्षेमन्धरेणोक्तम्—'मन्मकेन वन्दे, कथं विस्मार्यते स्वरचः ?, यदाहमनेनैव प्रयोजनेनाप्रागतः' ।  
 तेनाऽऽभंगागिकप्रतिबोधनभिप्रायोऽप्युक्तम्—'नहि किमिति विलम्बः क्रियते ?' क्षेमन्धरेणोक्तम्—  
 'मन्मकेन वन्दे, उजिष्टेदानीमपि ।' ततोऽसौ जिनपतिश्रिगुनीपे ममागतः, तत्र च ज्येष्ठानुक्रमेण वन्दनानुवन्दनादि-  
 म्परहासः संभूतः । श्रीपूज्यरिण्यमालापि यः मः—'आचार्य ! के के प्रत्या दृष्टाः गन्ति ?' नारायणप्रमाणोऽप्युक्तम्—  
 'परागितेन तेनोक्तम्—'वर्तमानरत्नरहितः मर्गुऽपि । श्रीपूज्यं—यदि यत् प्रथममेवमत्तं वचनं दोषानुद्गमिष्याम-  
 न्दस्य आत्स्यशास्त्रीभूतः मत्तं किमपि कल्पति ततोऽप्य आगपिमानान्दिसम्पन्नं न प्राप्त्यत-इत्यादि सिद्धयोक्तम्—  
 'तथापि नामभिः संश्लिष्टम्' । तेनोक्तम्—'दमन्याकल्पप्रभृतीनि लघुनागानि, मापकाप्यादिमहाकाप्यानि, वाद्-  
 म्बवादिः कथाः, सुगमिगुणानि नाटकानि, जपदेवादिदृष्टांगि, वन्दनी-वित्तनायक्यनपदेऽन्यापप्रमुमान्नासोः, वाप्य-

प्रकाशप्रमुखा अलङ्काराः, सिद्धान्ताथ सर्वेऽपि । श्रीपूज्यैथ—‘अहो ! अनेन यन् गच्छो वादितः । किमस्यैवावन्मानं शास्त्रपरिज्ञानमस्ति वा नवेत्युपलक्षयामः’—इति हृदये विचार्योक्तम्—‘आचार्य ! लक्षणायाः किं स्वरूपं कति भेदाः ?’ इत्यादि । तस्मिन् सर्वेऽपि काव्यप्रकाशानुसारेण वृषाणे—‘यदि वयमिदानीमेव निषेधनाभिप्रायेण गाढं भणिष्यामस्तदाऽसावश्रयं स्यासति, न करिष्यत्यायतनानायतनविचारम्, तस्मादसावघास्तलितप्रसरः सन् वदतु; यद्वा परामहङ्कारकोटिं रोहती’त्यादि विमृश्य श्रीपूज्येन किमपि तादृशं वचनं भणितं येन स दूयते । ततस्तेन वहीं गलगर्जि कृत्वा भणितम्—‘आचार्य ! अनायतनं कस्य सिद्धान्तस्य मध्ये कथितमस्ति, यदेवं भवान् वराकान् लोकान् विप्रतारयतीति ?’ श्रीपूज्यैरुक्तम्—‘दशरथकालिकौघनिर्घुक्ति—पञ्चकल्प-व्यवहारादिसिद्धान्तमध्ये कथितमस्तीति’ । तेनोक्तम्—‘आचार्य ! गाढतराम्यासवशादोघनिर्घुक्तिः सकलाऽपि स्वनामसदृशी मम भूताऽस्ति, परं तन्मध्येऽनायतनं क्वापि भणितं नास्ति’ । श्रीपूज्यैरुक्तम्—‘आचार्य ! दूरे सन्त्ये सिद्धान्ता यदि कथमपि वयमोघनिर्घुक्त्यधरैः कृत्वा देवगृहं जिनप्रतिमा वाऽनायतनं भवतीति भवन्तं मानयामस्तदा वयं जयामः’ । तेनोक्तम्—‘प्रमाणं परमिदानीमुत्तरं बभूव, प्रभाते वार्ता । पूज्यैरुक्तम्—‘एवं भवतु’ । स च सा० क्षेमन्धरदत्तहस्तः स्वपापशालायां जगाम । तत्र च श्रीपूज्यपादस्थित गृहोपरि वदन् पञ्चमुद्दिश्य सा० क्षेमन्धरे ज्ञप्यति सा० रामलपित्रा सा० धणेश्वरेणोक्तम्—‘प्रातर्ज्ञास्यते पादवद्वस्य चीरकटकस्य प्रमाणम्’ । प्रोच्छलितकोपरकतनेत्रेण सा० क्षेमन्धरेणोक्तम्—‘अरे लम्पक ! तदीयस्य बृहत्तरस्याऽपि मानोऽस्ति श्रीपूज्यपादस्थितं चीरकटकम्’ । प्रद्युम्नाचार्येणोक्तम्—‘साधो ! कीदृशेन कारणेनात्मनोऽपि मध्ये कलहः क्रियते ? । प्रातः सर्वमपि भद्रं भविष्यति । सर्वेषामपि मानानि प्रमाणानि ज्ञास्यते’ । तदनन्तरं सा० क्षेमन्धरो वन्दित्वा श्रीपूज्यान्त आगतः । तत्र च—

यदपसरति मेघः कारणं तत् प्रहृतुं, सृगपतिरपि कोपात् संकुचत्युत्पतिष्णुः ।

हृदयनिहितवैरा गृहमन्त्रोपचाराः, किमपि विगणयन्तो बुद्धिमन्तः सहन्ते ॥

[४८]

इत्यादिधीरपुरुषसमाचारमजानानाः साधवः श्रावकाश्च । श्रीपूज्यानामग्रे भणति—‘मस्तकेन वन्दे’ । स्वकोपोलवलीमास्फाल्य तेनोक्तम्—‘युष्माभिः किमिति किमपि न भणितम् ?’ पूज्यैरुक्तम्—‘भो ! स्थिरीभव, न ऐकेनैव स्वमेन रात्रिर्विभास्यति’ । प्रद्युम्नाचार्येण चाकारितस्वयंक्षानुयायिप्रभूताचार्यपण्डितैः सह जाज्वल्यमानेषु प्रदीपेषु सकलामपि रजनीमोघनिर्घुक्तिघ्नवृत्तिपुस्तकानि वाचितानि परमनायतनस्वरूपप्रतिपादकं स्थानकं न लब्धम् । पश्चात्पूज्यानां पार्श्वे मानुषं प्रेषितम् । पूज्यैथ तदीयपूज्यानुसारेणोद्देशः कथितः । तैरपि पूज्योपदिष्टदुष्टदंशं गवेयपञ्जिर्लन्धं स्थानकम् । अनायतनप्रतिपादकगाथासम्बद्धवृष्यधरापन्यगाथावृष्यधरैः सह संयोज्य तेन चिन्तितानि । प्रातःक्षणे च सहस्रसंख्यलोकानुगम्यमानमार्गः, अभयहृदण्डनायकदत्तहस्तकः समाहृतदेशान्तर्रीयानेकाचार्यपरिकरितः प्रद्युम्नाचार्यः समाजगाम श्रीपूज्यालङ्कृत आवासे । अधस्तनभूमिकायां च क्षुद्रत्वेन शीघ्रमुपविष्टाः सर्वेऽप्याचार्याः । श्रीपूज्या अप्युपरितनभूमिकातः स्वपरिवारेण सह तत्रायुः । वैयावृष्यकरेण जिनाभारगणिना तत्र तेषां तादृशं कपटमालोक्य श्रीपूज्या विज्ञप्ताः—‘प्रभो ! क्व निषदां ददे ?’ पूज्यैरुक्तम्—‘अन्यत्किमप्युपवेशनस्थानकं न दृश्यतेऽतोऽश्रयं देहि’ । तेनोक्तम्—‘प्रभो ! संयुक्ता योगिनी भविष्यति’ । ‘भवतु श्रीजिनदत्तचरिर्भिलिष्यति, त्वं देहि निषयामव्रैषेति’ । तदनन्तरं श्रीपूज्यास्तत्रोपविष्टाः । सा० क्षेमन्धर-वाहित्रिकोद्वरणाम्यां हस्तौ योजयित्वा श्रीपूज्या विज्ञप्ताः, यथा—‘प्रभो ! ईदृह्मेलापको धनेभ्यो दिनेभ्योऽद्य संजातोऽस्माभिर्दृष्टः, अतो यदि गीर्वाणभाषया धूयं वृत तदाऽमत्कर्णयोः सुखं भवति’ । श्रीपूज्यैरुक्तम्—‘न किमप्येतद्विरूपमस्ति, परं परतः प्रद्युम्नाचार्याणामग्रे कथयत’ । तदनन्तरं ताभ्यां प्रद्युम्नाचार्य वन्दित्वा भणितम्—‘मस्तकेन वन्दे, किल लोकमप्य एवं श्रूयते यदुत देवाः सर्वदेव संस्कृतभाषया परस्परं भाषन्ते परं ते न दृश्यन्ते; अतोऽस्माकं महद् इत्तुहलमस्तीति यदि यूयमस्मासु महान्तमनुग्रहं कृत्वा संस्कृतभाषया वृत, तदा

ऽस्माकं देवदर्शनेच्छा पूर्यते; यतो युवाम्यां द्वाभ्यामपि रूपेण देवा निर्जिताः' । विहस्य प्रद्युम्नाचार्येणोक्तम्—'अहो श्राद्धाः किं यूयं संस्कृतभाषामध्ये परिच्छिन्त !' ताम्यामुक्तम्—'मस्तकेन वन्दे, यद् यूयं भगवत् तद् सत्यमेव । यतो मरुत्यलोत्पन्ना वदरस्य घृन्तमधस्तादुपरिष्टाद्वा भवतीत्यपि न जानन्ति । परं तथापि, भङ्गरकाः ! क्व यूयं क्व वयम्, पुनरध्यासद्भाग्याद् गुप्ताकं सर्वेषामपि संयोगो बभूवेति, यदि कथमप्यस्मत्कर्णयोः सुखं जनयत तदाऽतिसमाधानं भवति; यतः क्व पुनरपीदृशः संयोगः संभाव्यते'—इत्यादि; श्रावकोपरोधात् प्रद्युम्नाचार्येणोक्तम्—'प्रमाणमिति' । तदनन्तरं श्रीपूज्यैस्तत्समीपे खटिका-संपुटिके दृष्टोक्तम्—'केनाभिप्रायेणैव खटिकाखण्ड आनीतः ?' प्रद्युम्नाचार्येणोक्तम्—'कदाचित् संस्कृतभाषया ब्रुवता कश्चिदपशब्दः पतति, तस्य साधनकृते' । श्रीपूज्यैरुक्तम्—'यो हि सुखोपरि शब्दं साधयितुमसमर्थस्तस्य संस्कृतभाषया वक्तुं कोऽधिकारः ?, तस्मात् परतः क्षिप्यताम् । तथैषा संपुटी किमर्थमानीता ?' प्रद्युम्नाचार्येणोक्तम्—'पतिप्यदपशब्दलेखनार्थम्' । श्रीपूज्यैरुक्तम्—'यो हि पतितानपशब्दाना-त्महृदयेऽवधारितं न शक्नोति तस्य वादादिषु का जिगीषा ?, तस्मात् संपुट्यपि परतः क्रियताम्'—इत्यादिप्य परतः कारिते खटिका-संपुटिके । तत्र च तर्करीत्याऽन्यायतनस्यापन-निषेधनार्थं संस्कृतभाषया तयोर्ब्रुवतोर्भरतेश्वर-बाहुबल्योरिव महा-संरम्भेण वाग्युद्धं संजातम् । तत्र च यादृशं किमपि प्रद्युम्नाचार्येणोक्तं तादृशं सर्वमपि कुतहलिताना प्रद्युम्नाचार्यकृतवाद-स्थलेषु द्रष्टव्यम् । यथा श्रीजिनपतिहरिभिः प्रद्युम्नाचार्यवचनानि निराकृत्य सर्वलोकसमर्थं ररतरमार्गाः स्थापितस्तथा प्रद्युम्नाचार्यकृतवादस्थलोपरि श्रीजिनपतिहरिकृतवादस्थलानि द्रष्टव्यानि । यथा महान् प्रमोदो भवति । अत्र च गौरव-भिया न लिखितानि । यतः श्रावकोपरोधादित्यमेता वार्ता लिख्यन्ते, अतः श्रावकोपयोगिन्य एव वार्ता लेख्याः; वादस्थले लिखिते त्वेता वार्ता अपि दुर्गाद्याः स्युरिति ।

तथापि किंचिदुच्यते । प्रद्युम्नाचार्येणोक्तम्—'यत्र देवगृहादौ साक्षात् साधवो वसन्ति तद् भवत्वनायतनम्, यत्र तु पहिःस्वितैरेव सारा क्रियते तत्र का वार्तेति ?' । श्रीपूज्यैः सोपहासमुक्तम्, यथा—'आचार्य ! साराशब्दं प्रद्यु-ज्ज्ञानेन भवता वर्तमानकालवार्तिशास्त्रपरिज्ञानता स्वकीया प्रकाशिता' । तेनोक्तम्—'किं साराशब्दो नास्ति ?' पूज्यै-रुक्तम्—'नास्त्येव' । तेनोक्तम्—'सर्वलोकप्रसिद्धं शब्दं वचनमात्रेणाचार्य ! माऽपलापी' । पूज्यैरुक्तम्—'को लोकः ?—किं हलधर-गोपालादिस्तवाभिप्रेतः ?, किं वा लक्षणादिविद्यापारदृष्टा पण्डितगणः ? । यद्याद्यपक्षस्तदा गीर्वाणभाषा-न्तराले हलधरादिभाषां ब्रुवाणस्वमात्मानं पण्डितसमामध्ये लघुं करोपि; अथ द्वितीयः पक्षस्तर्हि कश्चित्पण्डितं साक्षिणं कुरु; अथवा क्वापि केनापि पण्डितेन प्रयुक्तं दर्शयति' । आङ्गुल्याङ्गुलीभूतेन तेनोक्तम्—'सारणवारणेत्यादि' । श्रीपूज्यैः सोपहासमुक्तम्—'अहो ! वर्तमानकालशास्त्रदर्शिता'—इत्यादि । तदनन्तरं विलधीभूतेन तेनोक्तम्—'सिद्धान्ता-नुयापिनि विचारे प्रारब्धे कीदृशीयं शब्दापशब्दचिन्ता ?, प्रस्तुत एव सिद्धान्तः किमिति न वाच्यते ?' पूज्यैरु-क्तम्—'एवं क्रियताम्' । तेन च मण्डिता स्वापनिका घृता च तदुपर्योधानिर्गुह्यकश्चिद्ब्रह्मचिपुस्तकसत्त्वसर्वपत्रभृता कप-रिका । पूज्यैरुक्तम्—'को वाचयिष्यति ?' तेन कृताभिप्रायेणोक्तम्—'अहं वाचयिष्यामि' । सरलाश्रयैः श्रीपूज्यैश्चिन्ति-तमहो ! किमस्य क्षोभवशान्मविवाहः (१) साम्प्रतमभूत्, यदसावस्माकमग्रे वाचकत्वाङ्गीकारेण स्यस्य लघुतां न गणितवानिति । भवतु वा । प्रकटमुक्तम्—'एवं कुर्वति' । तदनन्तरम्—

नाणस्त दंसणस्तं य चरणस्त य तत्प होइ वायाओ ।

वज्रिज्ज वज्रंभीरू अणाययणवज्रमो लिपं ॥

[४९]

जत्थ साहम्मिया पहये भिन्नचित्ता अणारिया । मूलगुणप्पडिसेयी अणाययणं तं विपाणाहि ॥ [५०]

जत्थ साहम्मिया पहये भिन्नचित्ता अणारिया । उत्तरगुणप्पडिसेयी अणाययणं तं विपाणाहि ॥ [५१]

जत्थ साहम्मिमया वह्वे भिन्नचित्ता अणारिया । लिंगवेसपडिच्छन्ना अणाययणं तं वियाणाहि ॥ [५२]  
 आययणं पि य दुविहं दच्चे भावे य होइ नायव्वं । दच्चम्मि जिणहराई भावे मूलत्तरगुणेसु ॥ [५३]  
 जत्थ साहम्मिमया वह्वे भिन्नचित्ता घट्टुसुया । चरित्तायारसंपन्ना आययणं तं वियाणाहि ॥ [५४]  
 सुंदरजणसंसग्गी सीलदरिइं कुणहं य सीलहुं । जहं मेरुगिरीलगं तणं पि कणयत्तणमुवेहं ॥ [५५]

इत्यादिगाथावृत्तीः पूज्योपदर्शिता वाचयितुं प्रवृत्तः प्रद्युम्नाचार्यः । पूज्याश्चास्वलितवाण्या व्याख्यातुं प्रवृत्ताः । तदनु स्वमतस्यापनाभिप्रायरचितकूटबुद्धिनाऽन्यां गाथां वाचयित्वा प्रस्तुतपत्रद्वयोत्पाटनपूर्वकमन्यतरगाथास्तत्कवृत्तिं वाचयितुं प्रवृत्तः प्रद्युम्नाचार्यः । श्रीमत्पूज्यपार्श्वोपविष्टेन श्रीजिनहितोपाध्यायेन हस्ते गृहीत्वोक्तम्, यथा—‘आचार्य ! पाश्चात्त्यं पत्रद्वयं वाचयित्वेदं पत्रं वाच्यम्’ । सोऽपि व्याकुलतया गतस्मृतिः पत्राण्यप्रतः पश्चाच्च करोति । अत्रावसरे मातुलतया प्रतिपन्नमभयडदण्डनायकं लोकप्रसिद्धमामेत्यर्क्षरः सम्बोध्य हेडावाहकेन श्रीमालवंशीयेन वीरणागेन भणितम्, यथा—‘त्वदीये नगरे स एव किं निगृह्यते यो रात्रौ चौर्यं करोति ? यस्तु दिवसे दीप्ते चौर्यं करोति स मुत्कलः’ । तदनन्तरं संभ्रमवशादिगवलोकनं कृत्वाऽभयडदण्डनायकेनोक्तम्—‘हेडावाहक ! किमेतद् भवता भणितम् ? वीरणागेनोक्तम्—‘माया ! पश्य पश्य, आचार्येण पत्रद्वयमपलपितम्’ । कोपावेगादभयडदण्डनायकेन हस्तस्थितया चर्मयष्ट्या घृष्टप्रदेश आहतो वीरणागः । प्रद्युम्नाचार्योऽपि प्रस्तुतं वाचयितुं प्रवृत्तः । विस्तरेण व्याचक्षाणेषु श्रीपूज्येषु श्रीपूज्यभाग्यप्रागभ्यारेरितेन प्रद्युम्नाचार्येणोक्तम्—‘आचार्य ! अनया रीत्या देवगृहमेवानायतनं भवति, न तु जिनप्रतिमाः; युष्माभिस्तु प्रतिमाऽप्यनायतनत्वेन भणिता’ । श्रीपूज्यैर्विहस्योक्तम्—‘स्विरामव, आचार्य ! यदत्र सभायामात्मगृहेन भवता देवगृहमनायतनं भवतीति कथितं तेनास्माकं सर्वेऽपि मनोरथाः सिद्धाः । प्रतिमाऽप्यनायतनत्वेन भणिता’ । श्रीपूज्यैर्विहस्योक्तम् .....द्वा द्वेष्या । प्रद्युम्नाचार्येणोक्तम्—‘किं वचनमात्रेण किं वा कयाऽपि युक्त्या ? श्रीपूज्यैरुक्तम्—‘निर्मुक्तिकं वचनं हलधरादय एव भाषन्ते न वयम्’ । तेनोक्तम्—‘तर्हि युक्तिं ब्रूहि’ । श्रीपूज्यैर्विमृदयोक्तम्—

एवमिणं उचगरणं धारेमाणो विहीहं परिसुद्धं ।

होइ गुणाणाययणं अचिहि असुद्धे अणाययणं ॥

[५६]

अस्याश्च गाथाया व्याख्यानं श्रुत्वा विमना इव मौनं कृत्वा स्थितः प्रद्युम्नाचार्यः । तदनन्तरं सांक्षेपमन्वरेण हस्तयोजनपूर्वकमुक्तम्—‘मस्तकेन वन्दे, जिनप्रतिमाऽनायतनं भवति वा नवेति ?’ प्रद्युम्नाचार्येणोक्तम्—‘साधो ! अस्या गाथाया अनुसारेणेदं ज्ञायते, यदुत जैनी प्रतिमाऽपि भवत्यनायतनमिति’ । तत्पश्चात् क्षेमन्वरेण नेत्रयोरानन्दाश्रुविभ्रता स्वकीयमस्तककेशैः कृत्वा प्रद्युम्नाचार्यपादाबुद्ध्यष्टौ, पुत्रलेहाच्च भणितम्—‘वत्स ! एतावन्ति दिनानि श्रीजिनदच्युरि-  
 मागं लगस्य मम भूतानि परं मम मनसि न परिणतम् । यदुत लक्षसंख्यद्रव्यव्ययेन कृतोत्तुह्नतोरेणं देवगृहं निष्पा-  
 दित्तमप्यविधिप्रवृत्तिवशादनायतनं भवतीति । इदानीं च तव मुराद् तादृशमपि देवगृहमनायतनं भवतीति श्रुत्वा महान् प्रमोदः संजातः’ । प्रद्युम्नाचार्येणोक्तम्—‘साधो क्षेमन्धर ! अन्येषां सिद्धान्तानामक्षराणि दर्शयित्वा देवगृहमना-  
 यतनं न भवतीति परिच्छेदयिष्यामि’ । श्रीपूज्यानामग्रे भणितम्—‘आचार्य ! अम्भन्नामाङ्किता रास-काण्व-चतुष्पद्या-  
 दयो न कारयितव्या न पाठयितव्याश्च’ । तदनन्तरं श्रीपूज्यैः सांक्षेपमन्वरेण दर्शयित्वा देवगृहमनायतनं न भवतीति परिच्छेदयिष्यामि । अत्रेहदयत्वात्नेत्रयोरश्रुप्रवाहं विभ्रता सांक्षेपमन्वरेणोक्तम्—‘वत्स ! न मया भन्तं विगोपयितुमारभितो वादः, किन्तु विद्यापात्रमात्मपुत्रं लब्धाचार्यपदं प्रतिबोध्य युगप्रधानयुतोः श्रीजिनपतिवरेः शिष्यं कारयितुम्—इत्यादि वदत्सु तेष्व-

तिप्रमुदितैः श्रावकैः साधुभिश्च सह अभयडण्डनायकदत्तहस्तकास्ततः स्थानाद्दुत्थायोपरितनभूमिकायां प्रभूताः श्री-  
पूज्याः, नागरिकलोकोऽपि । तत्र च पूज्यान् वन्दित्वा, अभयडण्डनायकोऽघस्तादागतः । प्रद्युम्नाचार्योऽपि सांक्षे-  
मन्वरदत्तहस्तको मनःखेदोद्भवमुखकालिमगुणो लज्जावशाद् भूमिमवलोकयन् स्वपौपधशालायां गतः । इतोऽपि कौतु-  
कार्यां लोकः स्वकीये स्वकीये गृहे गतः ।

५९. स्वकीयगुरुप्रद्युम्नाचार्यहृदयस्थकटदर्शनादसुखिन्यभयडण्डनायके सकलमपि नगरं शून्यमिव जातम् । वहिश्च  
संघमध्येऽत्यानन्दोऽभवत् । भा० संभव-वैद्यसहदेव-ठ० हरिपाल-सा० क्षेमन्धर-वाहित्रिकोद्वरण-सा० सोमदेवादिस-  
मुदायेन महापित्तरेण विजयसूत्रकं वर्धापनकं च कारितम्-‘अहो ! एते परतो गता मदीयं गुरुं विगोपिप्यन्त्यतो  
यद्यत्रैव कथमपि शिक्षयन्ते तदा भद्रं भवती’ति हृदि विमृश्याऽभयडण्डनायकेन मालव्यदेशमध्यस्थिते गूर्जरीये  
कटके प्रतीहारजगद्देवपार्थे विज्ञप्तिकादानपूर्वकं मानुषं प्रेष्य द्वितीये दिने संघमध्ये दापिता राजाज्ञा, यथा-‘राजाधि-  
राजश्रीमीमदेवस्वाज्ञाऽस्ति यदि यूपमितः स्थानादस्माभिरमुक्तलिताः सन्तो यास्येति’ । घृतं च राजपुत्रशतमेकं  
गुप्तवृत्त्या संघस्य प्राहरिकपदे । संघोऽपि स्वचेतसि यदपि तदपि संभावयितुं प्रवृत्तः । विजयदर्शनेच्छलितपरमानन्द-  
वशाद् भाण्डशालिकसंभवः श्रीपूज्यानां पार्थे समागत्य हर्षप्रकाशोद्भवद्गद्गदस्वरेण भणितुं प्रवृत्तः, यथा-‘प्रभो !  
जानामि तावकीनं पराक्रमम्, यतः सिंहस्य पोतकाः सिंहा एव भवन्ति न शृगालाः; परं कपटचतुला गूर्जरत्रासत्र  
च येनापि तेनापि समं माऽऽस्फाल्यताम् । कापटिकगूर्जरलोककूटप्रयोगात् कूटा चेद्बचनीयता तादृशी भवति यादृश्या  
स्वकीयं गुरुरमुद्घाटयितुं न शक्यते-इत्याशङ्क्य मया वादकरणविषयेऽनुमतिर्न दत्ता । भवता च प्रभो ! अतीव शीमनं  
कृतं यद् गूर्जरत्रामध्यप्रदेशे समस्ताचार्यसुकुटभूतं प्रद्युम्नधरिं सकललोकसमक्षं निजित्योर्ध्वं कृता स्वकीयाद्गुलिका ।  
प्रभो ! तवैकेन चरित्रेण धनमानान्दितस्य स्वर्गस्थस्य श्रीजिनदत्तधरेरद्य विस्मृतो निश्चितममृतपानामिलापः । प्रभो !  
तावकीनं धर्ममालोक्य शासनदेवताऽप्यघातमानं सजीवभूतं मन्यते । प्रभो ! त्वदीयामीदृशीं वादलब्धिं दृष्ट्वा भग-  
वती सरस्वत्यपि स्वप्रसादस्य माहात्म्यं ज्ञातवती । प्रभो ! तवेदं साहसमवेक्ष्य पुनरुदादयो देवा अपि भवतो वरप्रदा-  
नोत्सुकाः संजाताः-‘इत्यादिकां वर्णीं प्रशंसां कृतवान् भा० संभवः । श्रीमालव्यशभूपवैद्यसहदेव-व्य० लक्ष्मीधर-ठ०  
हरिपाल-सा० क्षेमन्धर-वाहित्रिकोद्वरणदयोऽपि संघप्रधानपुरुषाः श्रीपूज्यानां पार्थे ममागत्याभयडण्डनायकस्य  
दुष्टमभिप्रायं कथयामासुः । श्रीपूज्यैर्विमृश्योक्तम्-‘अहो श्राद्धाः ! अनिवृत्तिः काऽपि न कार्या । श्रीजिनदत्तहरिपा-  
दप्रसादात् सर्वं भद्रं भविष्यति । परं परमेश्वरश्रीपार्थारथानार्थं स्नात्रकायोत्सर्गादिधर्मकृत्येषूद्यता यूपं भवतेति’ ।  
श्रीपूज्योपदेशद्वारमकृत्योद्यते संघं सति सुखेन जातानि चतुर्दश दिनानि परं निर्गमः कोऽपि न संजातः । तदनन्तरं  
संघमप्यस्थितलोकमध्यादौऽद्रिकाः शते द्वे संघस्य श्रेयःकृते श्वःकल्पे किमपि साहसं तादृशं करिष्यामो येन संघः  
सर्वोऽपि स्वकीये स्वकीये स्थानके प्रभूतो भविष्यतीत्यभिप्रायेण प्रगुणीभूताः ।

इतश्च-अभयडण्डनायकप्रेषितमानुषेण कटकमध्ये गता श्रीजगद्देवप्रतीहारपादयोः पुरो धृता स्वस्वामिनिजित्ता ।  
श्रीजगद्देवनिरोपाद् वाचयितुं लग्नः पारिग्रहिकः, यथा-अत्र देशे साम्प्रतमतिमहद्विकः सपादलक्षीयो बहुलोकः समा-  
गतोऽस्ति । यदि युष्माकं निरोपो भवति तदा राजकीयानां पीटकानां कृते दालिं करोमीति’ । श्रुत्वा च कोपाधिरुदेन  
श्रीजगद्देवेन तन्क्षणादेव स्वकीयपारिग्रहिकहस्तेन लिखितो राजादेशः । लिखितं च तत्र-‘मया महता कष्टेन साम्प्रतं  
श्रीपूज्याराजेन सह सन्धिः कृतोऽस्त्यतो यदि मपादलक्षीयस्य लोकस्य हस्तं लासमि तदा गर्दभोदरं तां सेमधि-  
ष्पामि’-इति राजादेशेन महं प्रेषितो मानुषः । पश्चात् तेनापि चोचालमत्पया गता दत्तो दण्डनायकहस्ते राजादेशः ।  
वाचयिता च तं दण्डनायकेन बहुमानपूर्वकं मुक्तलितः सन् संघः ममागतः श्रीमदपहितपाटकनामपचने । तत्र च  
श्रीपूज्यैः स्वश्रीपार्थारथवारिदाचार्याः स्वमन्दस्वयं समुद्रेण प्राग्वित्वा यत्रदानपूर्वकं सम्मानिताः ।

६०. ततः संघेन सह लवणखेटे प्रभूताः श्रीपूज्याः । तत्र च पूर्णदेवगणि-मानचन्द्रगणि-गुणभद्रगणीनां क्रमेण दत्तं वाचनाचार्यपदम् । सं० १२४५ फाल्गुने पुष्करिण्यां धर्मदेव-कुलचन्द्र-सहदेव-सोमप्रभ-सूरप्रभ-कीर्तिचन्द्र-श्रीप्रभ-सिद्धसेन-रामदेव-चन्द्रप्रभाणां संयमश्री-शान्तमति-रत्नमतीनां च दीक्षा दत्ता । सं० १२४६ श्रीपत्तने श्रीमहावीरप्रतिमा स्थापिता । सं० १२४७, (१) सं० १२४८ लवणखेटे जिनहितस्वोपाध्यायपदं प्रदत्तं । सं० १२४९ पुष्करिण्यां मलयचन्द्रो दीक्षितः । सं० १२५० विक्रमपुरे पत्रप्रभसाधोराचार्यपदं दत्तं-श्रीसर्वदेवस्वरितिरिति नाम कृतम् । सं० १२५१ माण्डज्यपुरे व्यवहारकलक्ष्मीधरादिप्रभूतश्रावकाणां मालारोपणादि विस्तरेण कृतम् ।

६१. ततोऽजयमेरौ विहारः । तत्र च भ्लेच्छोपद्रवे मासद्रयं यावन्महाकष्टस्थितौ पत्तने समागत्य भीमपल्ल्यां चतुर्मासी कृता । कुहियप्रग्रामे जिनपालगणेष्वर्वाचनाचार्यपदं दत्तम् । लवणखेटे राणकश्रीकेल्लहणकृतसामवादोपरोधादक्षिणावतारान्निकावतारणं मानितम् । सं० १२५२ पत्तने विनयानन्दगणिर्दीक्षितः । सं० १२५३ भाण्डागारिकनेमिचन्द्रश्रावकः प्रतिबोधितः । पत्तनभङ्गानन्तरं धाटीग्रामे चतुर्मासी कृता । सं० १२५४ श्रीधारायां श्रीशान्तिनाथदेवगृहे विधिः प्रवर्तितः । तर्कोपन्यासैश्च महावीरनामा दिगम्बरो रञ्जितः । रत्नश्रीप्रवर्तिनी दीक्षिता । नागद्रहे चतुर्मासी कृता । सं० १२५६ चैत्र वदि ५ लवणखेटे नेमिचन्द्र-देवचन्द्र-धर्मकीर्ति-देवेन्द्रनामानो व्रतिनः कृताः । सं० १२५७ श्रीशान्तिनाथदेवगृहे प्रतिष्ठारम्भः प्रधानशुक्रनाभावे विलम्बितः । सं० १२५८ चैत्र वदि ५ शान्तिनाथविधिचैत्ये श्रीशान्तिनाथप्रतिमा प्रतिष्ठिता, शिरसरथः । चैत्र वदि २ वीरप्रभ-देवकीर्तिगणी दीक्षितौ । सं० १२६० आपाठ वदि ६ वीरप्रभगणि-देवकीर्तिगण्योरुपस्थापना कृता । सुमतिगणि-पूर्णभद्रगण्योर्व्रतं दत्तम् । आनन्दश्रियो महत्तरापदं दत्तम् । श्रीजिसलमेरौ देवगृहे फाल्गुन सुदि २ श्रीपार्थनाथप्रतिमा स्थापिता । स्थापना च सा० जगद्वरेण महाविस्तरेण कारिता । सं० १२६३ फाल्गुन वदि ४ महं० कुलधरकारितश्रीमहावीरप्रतिमा लवणखेटे प्रतिष्ठिता । नरचन्द्र-रामचन्द्र-पूर्णचन्द्राणां विवेकश्री-मङ्गलमति-कल्याणश्री-जिनश्रीसाध्वीनां दीक्षा दत्ता, धर्मदेव्याः प्रवर्तिनीपदं च । ठ० आञ्जल-प्रभृतिवाग्गडीयसमुदायः श्रीपूज्यपादवन्दनार्थमागतो लवणखेटे । सं० १२६५ मुनिचन्द्र-मानभद्रगणी दीक्षितौ, सुन्दरमतिरासमतिश्च । सं० १२६६ विक्रमपुरे भावदेव-जिनभद्र-विजयचन्द्रनामानो व्रतिनः कृताः । गुणशीलस्य वाचनाचार्यपदं दत्तम्, ज्ञानश्रियश्च दीक्षा । सं० १२६९ श्रीजावालपुरे श्रीविधिचैत्यालये महता विस्तरेण महं० कुलधरकारितश्रीमहावीरप्रतिमा स्थापिता । श्रीजिनपालगणेषुर्वाध्यायपदं दत्तम् । धर्मदेवीप्रवर्तिन्याश्च महत्तरापदं दत्तं प्रभावतीति नाम कृतम् । महेन्द्र-गुणकीर्ति-मानदेवानां चन्द्रश्री-केवलश्रयोश्च दीक्षा दत्ता । ततो विक्रमपुरे विहारः ।

६२. सं० १२७० वाग्गडीयसमुदायप्रार्थनया श्रीवाग्गडदेशे विहृताः । दारिद्रेरके शतसंख्यप्रायक-भ्राविकाणां सम्यक्चारोपण-मालारोपण-परिग्रहपरिमाणदानोपधानविधापनादिधर्मकृत्यकृते महाविस्तरेण सप्त नन्दयः कृताः । सं० १२७१ बृहद्वारे संमुखामतश्रीजासराजाराणकप्रमुखप्रभूतलोकैः सह महाविस्तरेण ठ० विजयश्रायककारितायां महत्यामुत्सवैर्णायां प्रविष्टाः श्रीपूज्याः । नन्दादिकं च दारिद्रेरकत्रयं कृतम् । मिथ्यादृष्टिगोत्रदेवतादिमिथ्यात्व-कृत्यपरिहारकारापणेन समुदायस्य महान् प्रमोदो जनितः । सं० १२७३ तत्रैव बृहद्वारे लौकिकदशाहिकापूर्वोपरि गङ्गायात्राभिमुखेपुत्रागतेषु बहुषु राणकेषु सत्सु नगरकोट्टीयराजाधिराजश्रीशुश्रूचीचन्द्रसाक्षेत(सहायात ?) काश्मीरीयेन श्रीजिनप्रियोपाध्यायशिष्यजिनदासापरनामश्रीजिनमद्रश्चरिप्रोत्साहितेन पण्डितमनोदानन्देन श्रीजिनपतिस्वरिपौषधशालाद्वारे पत्रावलम्बनं बद्धुं ब्राह्मण एकः प्रेषितः । सोऽपि द्वितीयाद्वे प्रहरसमये वसतिद्वार आगत्य पत्रावलम्बनं बद्धुं प्रवृत्तः । विस्मयवशाद् दूरेद्रे गत्वा धर्मरुचिगणिना संभाषितो ब्राह्मणः, यथा-‘घटो ! किं करोषि ?’ निर्भयः सन् स ब्राह्मण-‘पण्डितमनोदानन्दो मुष्मद्भ्रूस्तुद्दिश्य पत्रावलम्बनं करोति’ । धर्मरुचिगणिना सोपहायमुष्मत्-‘घटो ! मदीयसन्देशमेकं पण्डितस्याग्रे कथयेयथा-पण्डितश्रीजिनपतिस्वरिशिष्येण धर्मरुचिगणिना मम मुखेनेदं

भाणितम्, यथा—पण्डितराज ! मनोदानन्द ! यदि मदीये भणिते लगसि तदद्यपश्चाच्छालम्बनं कुर्यां, मा पत्रावलम्बनं कृथाः; अन्यथा दन्ता भङ्गयन्तीति” । मनोदानन्दपण्डितस्वरूपं सर्वं पृष्ट्वा मुक्तः सन् गन्तुं प्रवृत्तो बटुः । धर्मरुचिगणिना सर्वं पूज्यानामग्रे निवेदितम् । श्रीपूज्यपादसमीपोपविष्टकुरविजयकश्रावकेण पत्रावलम्बनवार्तां श्रुत्वा स्वकीयो मानुषः प्रेषितः । कथितं तस्याग्रे यथा—‘अहो ! समस्य बटोः पादे लग्नो व्रजेः । कस्मिन् कस्मिन् कटक एष बटुर्नजतीति परिभावयेः । बयं पृष्ठलग्ना एवागच्छामः स्—इत्यादिशिक्षां गृहीत्वा गतो मानुषो बटुपादैः । संभ्रमरादासनादुत्थाय—‘भो भोः साधवः ! शीघ्रं प्रावृणुत’—इति भणन्तः स्वयं प्रावृताः श्रीपूज्याः । श्रीजिनपालोपाध्यायेन उ० विजयकश्रावकेण विज्ञप्ताश्च, यथा—‘प्रभो ! साम्प्रतं भोजनवेला वर्तते, साधवश्च विहृत्य समागताः सन्त्यतो भोजनं कुरुः तत्पश्चात् तत्र यास्यत’ इति । तदुपरोधाद् भोजनं कृतोत्थिताः श्रीपूज्याः । श्रीजिनपालोपाध्यायैर्वन्दनापूर्वकं पादयोर्लगित्वा विज्ञप्ताः, यथा—‘प्रभो ! मनोदानन्दपण्डितजयनार्थं मां प्रेषयत, यथाऽहं यामि युष्माकं प्रसादाच्च जेष्यामि; सहानीतानामस्माकं क उपयोगो यद्युपमेकैकेन मानुषेण सह स्वयमुत्तिष्ठध्वम् । तथा प्रभो ! तस्मिन् वराके मनोदानन्दे युष्माकं कः संरम्भः । यतः—

कोपादेकतलाघातनिपातमत्तदन्तिनः । हरेर्हरिणयुद्धेषु कियान् व्याक्षेपविस्तरः ॥ [५७]

राजनीतावपि प्रथमं पदात्तयो युष्यन्ते पश्चाच्च नायकाः । श्रीपूज्यैरुक्तम्—‘उपाध्यायमिश्राः ! न ज्ञायते पण्डितस्य स्वरूपम्, यथा पण्डितः क्रीडशोऽस्ति’ । उपाध्यायेनोक्तम्—‘प्रभो ! भवतु पण्डितो यादृशस्तद्दृशो वा । सर्वत्र युष्माकं प्रसादो विजयते’ । श्रीपूज्यैरुक्तम्—‘वयमपि तत्रागमिष्यामः, परं भवद्भिस्तत्र वक्तव्यमिति’ । उपाध्यायेनोक्तम्—‘प्रभो ! युष्मासु सनिहितेषु सत्सु मम जिह्वा लज्जवशाद् बद्धुं न चहति, अतो युयमत्रैव तिष्ठत’ इत्यादि । श्रीजिनपालोपाध्यायविहितोपरोधात् प्रसन्नमानसैः श्रीपूज्यैर्ब्रह्मध्यानपूर्वकं मत्तके हस्तं दत्त्वा धर्मरुचिगणि—वीरभद्रगणि—सुमतिगणिभिः, उ० विजयकप्रमुखप्रधानाचार्यकैश्च सह मनोदानन्दपण्डितजयनार्थं प्रेषितः श्रीजिनपालोपाध्यायः । सुरवार्ताप्रच्छन्ननिमित्तसमागतानेकराणकावस्थानमण्डिते नगरकोट्टीयराजाधिराजश्रीपूज्यैश्चन्द्रसभामण्डपे प्राप्तः श्रीजिनपालोपाध्यायः सपरिवारः ।

६३. श्रीपूज्यैश्चन्द्रराजानमुपश्लोक्य तत्रस्यः पण्डितमनोदानन्दो भाषितः श्रीमदुपाध्यायेन, यथा—‘पण्डितराज ! किमर्थमस्मत्सद्विद्वारे पत्रावलम्बनं दत्तम् ? तेनोक्तम्—‘जयनार्थम्’ । उपाध्यायेनोक्तम्—‘वर्हि कुरु कस्मापि पक्षस्ताड्डीकारम्’ । तेनोक्तम्—‘युष्मासु दर्शनवाङ्मतेन स्वापयिष्यामीति मम पक्षः’ । श्रीउपाध्यायेनोक्तम्—‘कुरु प्रमेपमिति’ । तदनन्तरं तेनोक्तम्—‘विवादाध्यासिता दर्शनवाङ्मते, प्रयुक्ताचारविकलत्वान्म्लेच्छवदिति’ । श्रीमदुपाध्यायेन विहस्योक्तम्—‘पण्डितराज मनोदानन्द ! त्वदुत्तेऽस्मिन्ननुमाने कति दूषणानि दर्शये ?’ तेनोक्तम्—‘पथाशक्ति दर्शये; परं वत्समर्थनायां समर्थेन भाव्यम्’ । श्रीमदुपाध्यायेनोक्तम्—‘पण्डितराज ! सावधानीभूय श्रूयताम्, यथा—विवादाध्यासिता दर्शनवाङ्मते; प्रयुक्ताचारविकलत्वान्म्लेच्छवदिति—भनतोक्तम्, तत्र प्रयुक्ताचारविकलत्ववदिति हेतुत्वेनान्तिरुः, पददर्शनवाङ्मते साध्ये पददर्शनाभ्यन्तरवदित्येनाभ्युपगतेषु यौद्ध-चार्याकादिषु विपक्षभूतेष्वप्य हेतोर्गमनात् । तथा साधनविकलो दृष्टान्तः । तथा हि—त्वदुक्ताचारवैकल्पं म्लेच्छेष्वेकदेशापेक्षया सामस्त्यापेक्षया वा भवेत् ? । न तान्दापविकल्पः, म्लेच्छा अपि हि स्वजात्यनुयायिनां लोकाचारं किमपि कुशांशा दृश्यन्ते । लोकाचारश्च सर्वोऽपि वैदिकः एवेत्यसिद्धो हेतुर्दृष्टान्तः । अथवा सामस्त्यापेक्षया, वर्हि भवानपि दर्शनवाङ्मते, नहि भवानपि सर्वमपि वैदिकमाचारं कर्तुं शक्नोति’—इत्यादिना प्रकारेण तर्करीत्या युवापेन समसाराजलोकेत्येवमि चमत्कारद्वयगणित श्रीमदुपाध्यायेनानेकदूषणोद्घातनेन कर्त्तव्यतेऽपि प्राथमिकेऽनुमाने, धार्ष्ट्याद्वान्यनुमानानि भणिते प्रश्नः पं० मनोदानन्दः । प्रभूवप्रवि-

भाप्रभायेन श्रीमदुपाध्यायेन स्थाने स्थाने ज्वलन्तीषु दीप्रासु दीपिकासु समस्तराजलोकसमक्षमसिद्धविरुद्धानैकान्तिका-  
दिदूषणोद्भावनेन तान्यपि निराकृत्य जितो मनोदानन्दः । प्रधानानुमानभणनपूर्वकमात्मा च स्थापितो दर्शनास्पन्तर-  
वर्तित्वेनोपाध्यायेन । उत्तरास्फुरणे वैलक्ष्याचिन्तितुं प्रवृत्तः पण्डितः, यथा—‘अहो ! तथाविधवैदग्ध्याभावादेते राजानो  
यं कंचिद् यतिबुवाणं पश्यन्ति तमुद्दिश्य भापन्ते यथाऽयं भद्रो चादीति; तस्मादहमपि किमपि ध्रुवन्नस्मि यथाऽमी  
धानन्ति पण्डितमनोदानन्दो गाढो वाग्मी’-इति विचिन्त्य-

शब्दब्रह्म पदेकं यच्चैतन्धं च सर्वभूतानाम् ।

यत्परिणामस्त्रिभुवनमखिलमिदं जयति सा वाणी ॥

[५८]

इत्यादि पठितुं प्रवृत्तः । ततश्च श्रीमदुपाध्यायेन कोपावेगादुक्तम्—‘अरे वटशेखर ! किमेतदसम्बद्धं भापसे ?  
मया त्वां पददर्शनमात्रं कृतः प्रमाणसामर्थ्येन; यदि तव काऽपि शक्तिरस्ति तदा स्वकीयपत्रावलम्बनसमर्थनाय प्रमाणा-  
नुयायि किञ्चिद् ब्रूहि । पूर्वापठितगुणनेऽपि वयमेव समर्थाः’ । तदनन्तरं श्रीमदुपाध्यायवचनेन श्रीजिनबल्लभसूरिकृत-  
चित्रकूटीयप्रशस्ति-संघपट्ट-कर्मशिक्षादिसंस्कृतप्रकरणान्युदात्तखरेण गुणयतो धर्मरुचिगणि-वीरप्रभगणि-सुमतिगणीन्  
दृष्ट्वा तत्रोपविष्टान्यराजभिरुक्तम्—‘अहो ! एते सर्वेऽपि पण्डिताः’ इति । मनोदानन्दपण्डितमुखे कालिमानमवलोक्य  
राजाधिराजश्रीपृथ्वीचन्द्रेण चिन्तितम्, यथा—‘अहो ! न दृश्यते शोभना मनोदानन्दस्य मुसच्छाया । अतो यद्येव हार-  
यिष्यति ततो महद्भाषवं मम भविष्यति । तस्मादिदानीमेवानयोः समश्रीकतां करोमीति’-चिन्तनानन्तरं च श्रीमदुपा-  
ध्यायानुद्दिश्योक्तम्—‘बृहन्त ऋषयो यूयमिति’ । मनोदानन्दमुद्दिश्योक्तम्—‘बृहन्तः पण्डिता यूयमिति’ । श्रीपृथ्वीच-  
न्द्रराजवचनं श्रुत्वा श्रीमदुपाध्यायेन चिन्तितम्, यथा—‘अहो ! अद्यैतावत्प्रमाणेन संरम्भेण रात्रिप्रहरत्रयं जागरित्वाऽपि  
न किमपि फलं संयासम्, यदित्थं निर्वचनीकृतेनापि मनोदानन्देन समं मम समश्रीकता कृता राज्ञा स्वपण्डितपक्षपा-  
तात् । भवतु, तथापि जयपत्रमगृहीत्वा मयेतः स्थानान्नोत्थातव्यमिति’ । प्रकटं च स्वस्कन्धास्फालनपूर्वकमुक्तम्—‘महा-  
राज ! किमेतदुच्यते ? । मय्युद्धं सत्यन्यो भरते सकलेऽपि न कश्चित्पण्डितो भवति । यद्येव पण्डितस्तदा मया सह लक्षण-  
मार्गेण तर्कमार्गेण साहित्यमार्गेण वा वदतु, अन्यथा स्वकीयमिदं पत्रावलम्बनं पाठयतु । अरे यज्ञोपवीतमात्रवहनशक्ते  
मनोदानन्द ! श्रीजिनपतिब्रह्मपुत्र पत्रावलम्बनं करोषि ? न जानासि रे पटो ! यदनेन सर्वविद्यानिर्णयदायकाः श्रीप्रद्युम्ना-  
चार्यसदृशाः पण्डितराजाः सकललोकसमक्षं धूर्त्वा चर्चिताः’ । अत्रान्तरे श्रीपृथ्वीचन्द्रेण पत्रावलम्बनं गृहीत्वा यादितम् ।  
श्रीमदुपाध्यायेनोक्तम्—‘महाराज ! न तुष्यामो वयं पत्रावलम्बनपाटनमात्रेण’ । राज्ञोक्तम्—‘कथं तुष्यथ ?’ उपाध्या-  
येनोक्तम्—‘जयपत्रलाभेन; यतो महाराज ! अस्माकमीदृशी दर्शनव्यवस्थाऽस्ति, यः कश्चिदस्मदुपाश्रयद्वार एकस्मिन्  
दिने पत्रावलम्बनं बभ्राति तस्यैव हस्तेन द्वितीये दिने स्तोपाश्रयद्वारे जयपत्रमुद्भाव्यते । अतो महाराज ! यथा न्याय-  
श्रीकरणैकसंमत्याऽस्यदर्शनव्यवस्था वृद्धिं प्राप्नोति तव सभायां तथा विधीयताम्’ । राज्ञा च लघूकृतस्वपण्डितमनोदा-  
नन्दमुखकालिमावलीकनोच्छलितमानसिकदुःखेनापि न्यायविचारप्रवीणपार्श्वस्थितप्रभूतप्रधानलोकोपरोधात् स्वकीय-  
पारिश्रितिकहस्तेन लेखयित्वा दत्तं जयपत्रं श्रीजिनपालोपाध्यायानां हस्ते । उपाध्यायैश्च धर्मलभाक्षीर्वादानपूर्वकं बहु-  
लमुपश्लोकितो महाराजाधिराजश्रीपृथ्वीचन्द्रः । ततः स्थानादुत्थाय प्राप्तः क्षणे पंचशब्दादानादिवद्वापिनपूर्वकं गृही-  
तजयपत्राः सपरिवाराः श्रीजिनपालोपाध्यायाः समागताः श्रीपूज्यानां समीपे । श्रीपूज्यैश्च स्वशिष्यनिष्पादितजिन-  
शासनप्रभावनोद्भूतप्रभूतप्रमोदान्महासंभ्रमेणालापिताः श्रीमदुपाध्यायाः । सं० १२७३ ज्येष्ठपदि १३ शान्तिनाथ-  
जन्मकल्याणके कारितं च वर्धापनकमानन्दभरनिर्भरेण तत्रत्यममुदायेन ।

६४. सं० १२७४ बृहद्वादागच्छद्वारन्तरा भावदेवमुनिर्दीक्षितः । सा० धिरदेवप्रार्थनया दारिद्रेरके चतुर्मासी

कृता । तत्रापि नन्दयः पूर्ववत् । सं० १२७५ जावालिपुरे ज्येष्ठसुदि १२ भुवनश्रीगणिनी-जगमति-मङ्गलश्रीसा-  
ध्वीप्रयेणसह विमलचन्द्रगणि-पद्मदेवगणी दीक्षितौ । सं० १२७७ श्रीब्रह्मादनपुरे प्रभूताः प्रभावनाः कृता । अन्यदा  
नाभ्यधस्तनप्रदेशोद्भूतग्रन्थिदोषोत्थितवेदनावशसंजातमूत्रसंग्रहोगसत्ककष्टादात्मन आयुषो गमनमवगम्य श्री-  
पूज्यैर्दाचा यथोचिता शिक्षा चतुर्विधस्यापि संघस्य । मिथ्यादुष्कृतं च दत्त्वा भणितं च संघस्याग्रे-‘संघेन मनोमध्ये का-  
ऽप्यनिवृत्तिर्नि कार्या-यद्भोरिदानीं कथं भविष्यति, यतो येषां प्राणेनानेकैलोकैः समास्फाल्यास्फाल्योक्तं ते देवीभूता  
इति । यतः पश्चादपि श्रीसर्वदेवधरि-श्रीजिनहितोपाध्याय-श्रीजिनपालोपाध्याया वयमिव सर्वेषामप्युत्तरं दातुं क्षमाः,  
युष्माकं मनोरथान् पूरयितुं समर्थाः सन्ति । तथा वाचनाचार्यधरप्रभ-कीर्तिचन्द्र-वीरप्रभगणि-सुमतिगणिनामान-  
श्वतारः शिष्या महाप्रधाना निष्पन्ना वर्तन्ते । येषामेकैकोऽप्याकाशस्य पततो धरणे क्षमः । परमस्माकं स्वकीयपद-  
योग्यं परिभाषयतां वीरप्रभगणिः समागच्छति । वयमपि साम्प्रतं सावाधा वर्तामहे । अतो यदि संघः कथयति तदि-  
दानीमपि स्वकीयपदे वीरप्रभगणिमुपवेशयामः’ । शोकहर्षप्रकर्षाङ्कुलचित्तेन संघेन विज्ञप्ताः श्रीपूज्याः, यथा-‘स्वामिन् !  
यद्युष्माकं परिभाषयतां समागच्छति तदस्माकं प्रमाणम्, परमिदानींमौत्सुक्येन क्रियमाणमाचार्यपदस्थापनमतिशोभा-  
युक्तं न संभाव्यते । अतो यदि युष्माकं निरोपो भवति तदाऽत्रत्यसमुदायलेखदर्शनसमागतसमस्तदेशवास्तव्यखरतर-  
समुदायैरानन्दभरेण स्थाने विधीयमानानु महतीपूतसर्पिणीषु वीरप्रभगणैराचार्यपदस्थापना महाविस्तरेण कार्यते’ ।  
श्रीपूज्यैरुक्तम्-‘यत्समुदायस्य पर्यालोचयतः समागच्छति तत्प्रमाणम्’ । तदनन्तरं समस्तलोकक्षमितक्षामणपूर्वकमन-  
शनविधिना निखिललोकचेतसि चमत्कारं कृत्वा [सं० १२७७ आपाठ सुदि १०] दिवं गताः श्रीजिनपतिधरयः ।

६५. तदनन्तरं श्रीपूज्यविरहोच्छलितपरमदुःखेन शून्यान्तःकरणेनापि पाश्चात्य[कृत्य]कृते श्रीपूज्याननेकमण्डपिका-  
मण्डिते विमानेऽध्वारोप्य स्थाने स्थाने च वारविलासिनीमिस्तकालसुप्तदने स्वरेण हृदयार्द्राकिरणप्रवीणमेघरागादिदो-  
काराणेण दैवोपालम्भाद्यर्थनिवन्धनमधुमधुरेषु गीतेषु गीयमानेषु उच्छाल्यमानेषु च नानाविधेषु बहुषु वनफलेषु, पञ्च-  
शब्देषु च बाधमानेषु नेतुमारेभे समस्तलोकसहितेन चतुर्विधेन संघेन ।

अत्रान्तरे कणपीठमध्ये साबाधशरीरश्रीपूज्यवार्ताश्रवणाद्बुचालीभूय जावालिपुरादागतः प्रधानसाधुसहितः श्रीजि-  
नहितोपाध्यायः । स च तत्र तादृगवस्थान् श्रीपूज्यानवलोक्य शोकभरविह्वलीभवन्मानसेन श्रीपूज्यगुणगणसरणपूर्वकं  
नानाप्रकारान् विलापान् कृत्वा प्रवृत्तः । यथा-

श्रीजिनशासनकाननसर्वद्विविलासलालसे वसता ।

हा श्रीजिनपतिसूरे !, किमेतदसमञ्जसमवेक्षे ? ॥

जिनपतिसूरे ! भवता श्रीपृथ्वीराजपदसदःसरसि ।

पद्मप्रभासिबद्धे नाऽरमिव जयत्रिषा सार्धम् ॥

मथितप्रथितप्रतिवादिजातजलधेः प्रभो ! समुद्धृत्य ।

श्रीसंघमनःकुण्डे न्यधात त्वमानन्दपीयूषम् ॥

बुधबुद्धिचक्रवाकी पट्टकासरिति तर्कचक्रेण ।

प्रीडति पथेच्छमुदिते जिनपतिसूरे ! त्वपि दिनेशे ॥

तव दिव्यकाव्यहृष्टावेकविधं सौमनस्यमुल्लसति ।

द्राक् सुमनसां च तत्प्रतिपक्षाणां च प्रभो ! चित्रम् ॥

धातुविभक्त्यनपेक्षं क्रियाकलापं त्वनन्यसाध्यमपि ।

यं साध्यत् जिनपते ! वमत्कृते कस्य नो जातः ॥

[५९]

[६०]

[६१]

[६२]

[६३]

[६४]

मयि सति कीदृक् चासन्नयमत्र कविरिति नाम वहतीति । रोपादसुराचार्यं जेतुं किं जिनपते ! स्वरगाः ? ॥	[६५]
भगवंस्त्वपि दिवि गच्छति हर्षात्त्वदभिमुखमक्षताः क्षिप्ताः । सुररमणीभिर्मन्ये सारीभूतास्त एवात्रे ॥	[६६]
इन्द्रानुरोधवशतो मध्ये स्वर्गं ययौ भवानित्यम् । जिनपतिसूरे ! सन्तो दाक्षिण्यधना भवन्ति यतः ॥	[६७]
वामपदघातलम्बेन्द्राण्यवतारितशाराचपुटखण्डाः । स्वःश्रीविचारकार्यं तव नूनं दिव्युद्भूताः ॥	[६८]
जिनजननदिनस्नानाधानेच्छातः किमाकुलीभूय । त्वं पञ्चत्वं प्राप्तः सुरपतिवज्जिनपतिर्भगवान् ? ॥	[६९]
त्वदभिमुखमिव क्षिप्तानाशानारीभिरक्षतान् नूनम् । उपभोक्तुं विषदजिरे विचरति चन्द्रो भराल इव ॥	[७०]
नास्तिकमतकृदमरशुरुजयनापेवासि जिनपते ! स्वरगाः । परमेतज्जगदधुना विना भवन्तं कथं भावि ? ॥	[७१]
हा ! हा ! श्रीमज्जिनपतिसूरे ! सूरे त्वयीत्थमस्तमिते । अहह कथं भविता नीतिचक्रवाकी वराकीयम् ॥	[७२]
करतलघृतदीनास्ये श्रीशासनदेवि ! मा कृथाः कष्टम् । यन्मन्ये तव पुण्यैर्जिनपतिसूरिर्दिवमयासीत् ॥	[७३]
रे दैव ! जगन्मातुः श्रीवाग्देव्या अपि त्वयात्रेपि ? । ना मन्ये यदसुप्याः सर्वस्व जिनपतिरहारि ॥	[७४]

इत्यादिशोकविलापभरोच्छलितमूर्च्छाविताने च धैर्यालम्बनपूर्वकं श्रीपूज्यपादौ चन्दित्वा पाश्चात्यकरणार्थं तैः सह शुद्धे स्थंडिले जगाम सपरिवारः श्रीजिनहितोपाध्यायः । तत्र च कृत्यं समस्तमपि कृत्वा स्वोपाश्रयगमनपूर्वकं श्रीगौतमस्वामिगणधरादिमहापुरुषचरितोत्कीर्तनेन सकलमपि लोकमाह्लादयति स्म । ततश्चतुर्मासी कृता जावाल्लिपुरे ।

६६. ततः कालान्तरे श्रीसधेन सह श्रीजावाल्लिपुरे श्रीजिनहितोपाध्याय-श्रीजिनपालोपाध्यायादि-प्रधानसाधुसमन्वितः श्रीसर्वदेवद्वारि. समस्तसंघसम्मत्या श्रीजिनपतिसूरिगुरुपदिष्टरीत्याऽऽचार्यपदोपयोगिपद्-निशङ्कणकलितसौभाग्यभाजनसुधादेवयकार्यं दशविधयतिघर्मादिभूतक्षमाकेलिभवन वीरप्रभगणि भक्तिभरसमागत-समस्तदेशवास्तव्यमव्यलोकसर्धैः स्थाने स्थाने मण्डितेषु सन्नगारेषु, दीयमानेषु रासकेषु, गीयमानेषु युगप्र-धानगुरु [ .. ] अमारिघोषणाया निष्पाद्यमानापाम्, सहस्रसरूपद्रव्यार्पणेन याचक्रवाञ्छासु पूर्वमाणसु, प्रधानरूपवैपलक्ष्या शक्रेण सह स्पर्धमानेषु लोकेषु, महामिथ्यादृष्टिभिरपि निरन्तर प्रशस्यमाने जिनशासने, स्व-स्वदेवावहेलापरेषु परेषु दर्शनेषु, खरतरगार्गसत्त्वविक्रदानर्ली पटसु भट्टलोकेषु, नानाविधास्वादिस्तु दीयमानासु, तल्लिङ्गातोरणादिशोभाभूषिते श्रीमहावीरदेवभयने तीर्थप्रभानानामिच श्रीजिनपतिसूरिपट्टे माघसुदि ६ उपवेशयामास । कृतं च तस्य पूर्वेगुरुपदिष्टं श्रीजिनेश्वरद्विरिति नाम । आनन्दभरनिर्भरेण च संघेन कारिता महत्युत्सर्पणा ।

६७. श्रीजिनेश्वरद्वीपां च संक्षेपवाचनेयम्-सं० १२७८ माघ सुदि ६, श्रीमज्जिनेश्वरद्वीपां पदस्थापना । माघ सुदि ९, यशःकलशगणि-विनयरुचिगणि-बुद्धिसामरगणि-रत्नकीर्तिगणि-तिलकप्रभगणि-रत्नप्रभगण्यमरकीर्तिगणि [नामानः] एते सप्त साधवो दीक्षिताः श्रीजावालिपुरे । श्रीमाले सा० यशोधवलेन सह विहृत्य ज्येष्ठ सुदि १२, श्रीविजय-हेमप्रभ-श्री-तिलकप्रभ-श्रीविवेकप्रभ-चारित्रमालागणिनी-ज्ञानमाला [गणिनी]-सत्यमालागणिनीनां दीक्षा । आपाठ सुदि १०, पुनः श्रीश्रीमाले सा० जगद्धरसत्कसमवसरणप्रतिष्ठा श्रीशान्तिनाथस्थापना च । श्रीजावालिपुरे देवगृहप्रारम्भश्च । जावालिपुरे १२७९ माघ सुदि ५, अर्हदत्तगणि-विवेकश्रीगणिनी-शीलमालागणिनी-चन्द्रमालागणिनी-विनयमालागणिनीनां दीक्षा । श्रीमाले १२८० माघ सुदि १२, श्रीशान्तिनाथभवने ध्वजारोपः । श्रीरूपमनाथ-श्रीगौतमस्वामि-श्रीजिनपतिवृ-रिमेघनादक्षेत्रपाल-पद्मावतीप्रतिमानां प्रतिष्ठा । फाल्गुन वदि १, कुमुदचन्द्र-कनकचन्द्र-पूर्णश्रीगणिनी-हेमश्रीगणिनीनां दीक्षा । वैशाख सुदि १४, श्रीप्रह्लादनपुरे सकलनगरे(?) स्तूपे जिनपतिवृत्तिप्रतिष्ठा स्थापिता, विस्तरेण श्रीजिनहितोपाध्यायद्वारेण । सं० १२८१ वैशाख सुदि ६, जावालिपुरे विजयकीर्ति-उदयकीर्ति-गुणसागर-परमानन्द-कमलश्रीगणिनीनां दीक्षा । ज्येष्ठ सुदि ९, जावालिपुरे श्रीमहावीरभवने ध्वजारोपः । १२८३ माघ वदि २, बाहडमेरौ श्रीरूपभदेवभवने ध्वजारोपः । माघ वदि ६, श्रीधरप्रभोपाध्यायपदं मङ्गलमतिगणिन्याः प्रवर्तिनीपदं च, वीरकलशगणि-नन्दिबर्धन-विजयवर्धनगणिदीक्षा । १२८४ वीजापुरे श्रीवासुपूज्यदेवस्थापना, आपाठ सुदि २, अमृतकीर्तिगणि-सिद्धकीर्तिगणि-चारित्रसुन्दरिगणिनी-धर्मसुन्दरिगणिनीदीक्षा । सं० १२८५ ज्येष्ठ सुदि २, कीर्तिकलशगणि-पूर्णकलशगणि-उदयश्रीगणिनीदीक्षा । ज्येष्ठ सुदि ९, वीजापुरे श्रीवासुपूज्यभवने जलानवनादिमहद्वर्षा ध्वजारोपः । १२८६ फाल्गुन वदि ५, वीजापुरे विद्याचन्द्र-न्यायचन्द्राऽभयचन्द्रगणिदीक्षा । १२८७ फाल्गुन सुदि ५, प्रह्लादनपुरे जयसेन-देवसेन-प्रबोधचन्द्राद्योक्तचन्द्रगणि-कुलश्रीगणिनी-प्रमोदश्रीगणिनीदीक्षा । १२८८ भाद्रपद सुदि १०, स्तूपध्वजप्रतिष्ठा श्रीजावालिपुरे । आश्विन सुदि १०, स्तूपे ध्वजारोपः प्रह्लादनपुरे सायुधुवनपालेन समुदायसहितेन राजपुत्रश्रीजगसीहसाम्निध्येन महामहोत्सवेन कारितः श्रीजिनपालोपाध्यायद्वारेण । पौष सुदि ११, जावालिपुरे शरचन्द्र-कुशलचन्द्र-कल्याणकलश-प्रसन्नचन्द्र-लक्ष्मीतिलकगणि-वीरतिलक-रत्नतिलक-धर्ममति-विनयमतिगणिनी-विद्यामतिगणिनी-चारित्रमतिगणिनीदीक्षा । चित्रकूटे ज्येष्ठ सुदि १२, अजितसेन-गुणसेन-अमृतमूर्ति-धर्ममूर्ति-राजीमती-हेमावली-कनकावली-रत्नावलीगणिनी-मुक्तावलीगणिनीदीक्षा । आपाठ वदि २, श्रीरूपभदेव-श्रीनेमिनाथ-श्रीपार्श्वनाथप्रतिष्ठा साधुलक्ष्मीधर-सा० राहाम्यां कारिता । सहस्र ८ लक्ष्मीधरेण वैचिताः (व्ययीकृताः) । राजनिस्थानेषु वाद्यमानेषु जलानयनम् । १२८९ उजयन्त-शत्रुञ्जय-सम्मनकर्तार्येषु यात्रा ठ० अश्वराज-सा० राहसाहाय्येन कृता । सम्भतीर्थे च वादियमदण्डनामदिगम्बरवादिना [सह] पण्डितगोष्ठी । महामात्यश्रीवस्तुपालस्य सपरिवारस्य श्रीपूज्यानां संसृष्टागमनेन प्रभावना च । १२९१ वैशाख सुदि १०, जावालिपुरे यतिकलश-क्षमाचन्द्र-शीलरत्न-धर्मरत्न-चारित्ररत्न-मेघकुमारगणि-अभयतिलकगणि-श्रीकुमार-शीलसुन्दरिगणिनी-चन्दनसुन्दरिदीक्षा । ज्येष्ठ वदि २, मूलकै श्रीविजयदेवद्वीपगामाचार्यपदम् । १२९४ श्रीसंघहितोपाध्यायस्य पदम् । १२९६ फाल्गुन वदि ५, प्रह्लादनपुरे प्रमोदमूर्ति-प्रबोधमूर्ति-देवमूर्तिगणिनां महद्वर्षा दीक्षा । ज्येष्ठ सुदि १०, श्रीशान्तिनाथप्रतिष्ठा, साम्प्रतं पत्तन उपविष्टोऽस्ति । १२९७ चैत्रसुदि १४, देवतिलक-धर्मतिलकदीक्षा प्रह्लादनपुरे । १२९८ वैशाख ११, जावालिपुरे खण्डेण ध्वजारोपे मह० कुलधरेण समुदायसहितेन वसायगुणचन्द्रेण-कारितः । १२९९ प्रथमाश्विन वदि २, महामात्रिहृलधरस्य सकलराजलोकनगारेलोकाध्यायप्राम्भोधिप्रोच्छासपार्षणेषुसोदरेण महामहोत्सवेन दीक्षा, तस्य च कुलतिलकमुनिरिति नाम संज्ञातम् । १३०४ वैशाखसुदि १४, विजयवर्धनगणैराचार्यपदस्थापना, जिनरसाचार्य इति नाम । त्रिलोकहित-जीवहित-धर्माकर-द्वर्षदत्त-संघप्रमोद-विवेकध-सुद-देवगुरुभक्त-चारित्रगिरि-सर्वज्ञभक्त-त्रिलोकानन्ददीक्षा । १३०५ आपाठ सुदि १०, श्रीमहावीर-श्रीरूपमनाथ-

श्रीनेमिनाथ-श्रीपार्श्वनाथविम्बानां नन्दीश्वरस्य च प्रह्लादनपुरे प्रतिष्ठा ।

इति श्रीजिनचन्द्रहरि-श्रीजिनपतिहरि-श्रीजिनेश्वरहरिसत्कर्मजनमनश्चमत्कारिप्रभायनावारचानामपरिमितव्ये-  
ऽपि तन्मध्यवर्तिन्यः कतिचित् स्थूलाः स्थूला वार्ताः श्रीचतुर्विधसंघप्रमोदार्थम् ।

द्विष्टीवास्तव्यसाधुसाहुलिसुते सा० हेमाभ्यर्धनया ।

जिनपालोपाध्यायैरित्यं ग्रथिताः स्वगुरुवार्ताः ॥

[७५]

लोकभाषानुसारिण्यः सुखबोध्या भवन्त्यतः । इत्येकवचनस्थाने काऽपि [च] बह्वक्षरपि ॥ [७६]

यालावबोधनायैव सन्ध्यभावः कचित्कृतः । इति शुद्धिकृतेनोभिः सद्भिर्ज्ञेयं स्वचेतसि ॥ [७७]

बुद्धये शुद्धये ज्ञानवृद्धये जनसमृद्धये । चतुर्विधस्य संघस्य भण्यमाना भवन्त्यतः ॥ [७८]

॥ उद्देशतो ग्रं० (१) १२४ ॥

६८. सं० १३०६ ज्येष्ठ सुदि १३, श्रीश्रीमाले कुन्धुनाथारनाथप्रतिमाप्रतिष्ठा । द्वितीयवेलाध्वजरोपणं च  
कारितं सा० धीवाकेन ।

सं० १३०९ श्रीप्रह्लादनपुरे मार्गशीर्ष सुदि १२, समाधिरोपर-गुणरोपर-देवरोपर-साधुभक्त-वीरवल्लभमुनी-  
नां तथा मुक्तिसुन्दरिसाध्वीदीक्षा । तस्मिन्नेव वर्षे माघ सुदि १०, श्रीशान्तिनाथ-अजितनाथ-धर्मनाथ-वासुपूज्य-  
मुनिसुव्रत-सीमन्धरस्वामि-पद्मनाभप्रतिमायाः प्रतिष्ठा कारिता च सा० विमलचन्द्रादीरादिसमुदायेन । तथा हि-साधु-  
विमलचन्द्रेण श्रीशान्तिनाथो नगरकोट्टुप्रासादस्यो महाद्रव्यव्ययेन प्रतिष्ठापितः, अजितनाथो वल०माधारणेन, धर्मना-  
थो विमलचन्द्रपुरोधसेमसिंहेन, वासुपूज्यः सर्वश्रानिकाभिः, मुनिसुव्रतो गोष्ठिरुथेहडेन, सीमन्धरस्वामौ गोष्ठिकर्तारकेण,  
पद्मनाभो महाभावसारेण हालकेन श्रीप्रह्लादनपुरे । तस्मिन्नेव संवत्सरे वाग्भटमेरौ श्रीआदिनाथशिखरोपरि स्वर्णदण्ड-  
स्वर्णकलशौ प्रतिष्ठापितौ, सहजापुरेण बत्थडेन महोत्सवेन च तत्र गत्वाऽऽरोपितौ ।

सं० १३१० वैशाख सुदि ११, श्रीजावालपुरे चारित्रवल्लभ-हेमपर्वत-अचलचित्त-लोभनिधि-मोदमन्दिर-गज-  
कीर्ति-रत्नाकर-भक्तमोह-देवप्रमोद-वीराणन्द-विगतदोष-राजललित-बहुचरित्र-विमलप्रज्ञ-रत्ननिधाना इति पञ्चदश सा-  
धवः कृताः । चारित्रवल्लभ-विमलप्रज्ञौ पितृ पुत्रावेतन्मध्याज्येयौ । तस्मिन्नेव वैशाखे १३ स्वातिनक्षत्रे शनौ चारे श्री-  
महावीरविधिचैत्ये राजश्रीउदयसिंहदेवादिराजलोकममारागे मह०जैत्रसिंहे राजमान्ये सति श्रीप्रह्लादनपुरीय-वाग्गडी-  
यप्रभुसमर्पसमुदायमेलापके सति चतुर्विंशतिजिनालय-सप्ततिशत-संमैत-नन्दीश्वर-तीर्थंकरमातृ-हीरामत्कश्रीनेमिनाथ-  
उजयिनीसत्कश्रीमहावीर-श्रीचन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ त्रे०हरिपालसत्कसुधर्मस्वामि-श्रीजिनदत्तहरि-सीमन्धरस्वामि-सुग-  
मन्धरस्वामिप्रभृतिनानाप्रतिमाणां महामहोत्सवेन प्रतिष्ठा जज्ञे । प्रमोदश्रीगणिन्या महत्तरापदं च लक्ष्मीनिधिनाम  
कृतम्, ज्ञानमालागणिन्याः प्रवर्तिनीपदम् ।

सं० १३११ वैशाख सुदि ६, श्रीप्रह्लादनपुरे श्रीचन्द्रप्रभस्वामिविधिचैत्ये श्रीभीमपट्टीग्रामादस्थितश्रीमहावीर-  
प्रतिमा साधुमनपालेन महामहोत्सवेन निजशुभोपाजितद्रव्यव्ययेन प्रतिष्ठापिता । श्रीरूपमनाथः समुदायेन,  
अनन्तनाथो बोहिधेन, अभिनन्दनो मोल्हाकेन, वाग्भटमेरुनिमित्तं श्रीनेमिनाथ आम्नासहोदरेण भायसारेण केन्द-  
येन, श्रीजिनदत्तहरिप्रतिमा हरिपाललघुभ्रात्रा त्रे० कुमारपालेन । श्रीप्रह्लादनपुरे श्रीजिनपालोपाध्यायानामनशन  
पूर्वं धोगमनम् ।

सं० १३१२ वैशाख सुदि १५, चन्द्रकीर्तिगणेशुपाध्यायपदं श्रीचन्द्रतिलकोपाध्याय इति नाम कृतम्, वाचना-

चार्यपदं प्रबोधचन्द्रगणि-लक्ष्मीतिलकगण्योश्च संज्ञातम् । तदनन्तरं ज्येष्ठ वदि १, उपशमचित्त-पवित्रचित्त-आचारनिधि-त्रिलोकनिधिदीक्षा ।

सं० १३१३ फाल्गुन सुदि ४, श्रीया(जा)वालिपुरे स्वर्णगिर्युपरि महाप्रासादे वाहित्रिकोद्धरणप्रतिष्ठापितश्रीशान्तिनाथस्थापना । चैत्र सुदि १४, कनककीर्त्ति-विशुधराज-राजशेखर-गुणशेखर-जयलक्ष्मी-कल्याणनिधि-प्रमोदलक्ष्मी-गच्छवृद्धिदीक्षा । अनन्तरं वैशाख वदि १, श्रीअजितनाथप्रतिमा प्रतिष्ठापिता । पद्म-मूलिगाभ्यां बहुद्रव्यव्ययेन स्थापिता द्वितीयदेवगृहे । ततः प्रह्लादनपुरे आपाठ सुदि १०, भावनातिलक-भरतकीर्त्तिदीक्षा । श्रीभीमपल्ल्यां च तस्मिन्नेव दिने श्रीमहावीरस्थापना च ।

सं० १३१४ माघ सुदि १३, कनकगिर्युपरिनिर्मापितप्रधानप्रासादोपरि ध्वजारोपः । श्रीउदयसिंहराजप्रसाद-पूर्वकं निर्विक्रमं संजातं । आपाठ सुदि १०, सकलहित-राजदर्शनसाध्वोर्द्विसमृद्धि-ऋद्धिसुन्दरि-रत्नवृष्टिसाध्वीनां च श्रीप्रह्लादनपुरे महाविस्तरेण प्रव्रज्या ।

सं० १३१६ श्रीजावालिपुरे माघ सुदि १, धर्मसुन्दरिगणिन्याः प्रवर्तिनीपदम् । माघ सुदि ३, पूर्णशेखर-कनक-कलशयोः प्रव्रज्या । माघ सुदि ६, स्वर्णगिरौ श्रीशान्तिनाथप्रासादे स्वर्णकलश-स्वर्णदण्डारोपणं पद्म-मूलिगाभ्यां श्रीचा-चिगदेवराज्ये कारितम् । आपाठ सुदि ११, श्रीवीजापुरे श्रीवासुदेवजिनमन्दिरे स्वर्णकलश-स्वर्णदण्डध्वजारोपणं विशेषे-पेण श्रीसोमभञ्जिणा कारितम् ।

सं० १३१७ माघ सुदि १२, लक्ष्मीतिलकगणेरुपाध्यायपदं 'महद्व्यां पद्माकरस्य दीक्षा च । माघ सुदि १४, श्रीजावालिपुरालङ्कारश्रीमहावीरजिनेन्द्रप्रासादचतुर्विंशतिदेवशुद्धिकामु स्वर्णकलश-स्वर्णदण्डध्वजानामारोपणं सर्वममु-दायेन कारितम् । फाल्गुन सुदि १२, श्रीशान्तनपुरे श्रीअजितस्वामिप्रासादे ध्वजप्रतिष्ठारोपौ वा० पूर्णकलशगणि-द्वारेण । श्रीभीमपल्ल्यां श्रीमण्डलिकराज्ये दण्डाधिपतिश्रीमीलगण (सीलग ?) सान्निध्येन अनेकप्रह्लादनपुरादिसमु-दायमेलकेन सा० रीमडसुत सा० जगद्धर-तदङ्गजस सा० श्रुवनेन समुदायमहितेन महद्व्यां, वैशाख सुदि १० दशम्यां सोमवारे, श्रीमहावीरकेवलजानमहोत्सवदिने, मन्दिरतिलकनामश्रीवर्धमानजिनप्रासादशिखरे स्वर्णदण्ड-स्वर्णकलशप्र-तिष्ठा तयोरध्वारोपश्च कारितः । तथा श्रेष्ठिहरिपालेन तद्भ्रात्रा श्रेष्ठिकुमारपालेन श्रीसरस्वतीप्रतिमा अनन्यविधाचक्र-वतिकल्पा शशाङ्कशुभ्रभासनल्पा सकलसंघसुवृद्धिप्रदायिनी एकपञ्चाशदङ्गुलप्रमाणा महद्व्यां प्रतिष्ठापिता । अङ्गुलि-कत्रिशत्रयमाणा श्रीशान्तिनाथप्रतिमा सा० राजदेवेन, ऋषभनाथप्रतिमा मूलदेव-क्षेमन्धराभ्याम्, श्रीमहानरप्रतिमा साचेदेवपुरेण पूर्णसिंहेन, आजडसुतयोषाकेन श्रीपार्श्वनाथप्रतिमा, धारसिंहेन श्रीपार्श्वनाथप्रतिमा भीमशुजवलपराम्क-क्षेत्रपालविम्बं च, श्रीऋषभनाथ महावीरप्रतिमे पृनाणीऊदाकेन, चतुर्विंशतिपट्टाजितप्रतिमे सा० चालचन्द्रेण, श्री-ऋषभनाथप्रतिमा श्रेष्ठिधान्दलेन भावडसुतेन, शान्तिनाथप्रतिमा यो० शान्तिगेन, श्रीऋषभनाथप्रतिमा आमणगेन, महावीरप्रतिमात्रयं साडलपुरधनपालेन, वमा० भोजाकेन शान्तिनाथप्रतिमा, श्रेष्ठिहरिपाल कुमारपालभ्यां जिनदच-धरिर्मूर्ति-चन्द्रप्रभसामिप्रतिमे, रूपचन्द्रसुतनरपतिना श्रीनेमिनाथविम्बं, स्तम्भ० धनपालेन, चण्डे० बीजाकेन, अम्बि-काप्रतिमा गमुदायेन । हाडव्यां सौम्यमूर्तिन्यायलक्ष्मीदीक्षा ।

संवत् १३१८ पौष सुदि ३, संघमक्तस्य दीक्षा धर्ममूर्तिगणेरान्चनाचार्यपदं च ।

सं० १३१९ मार्ग० सुदि ७, अमपतिलकगणेरुपाध्यायपदम् । तस्मिन्नेव वर्षे श्रीअभयतिलकगोपाध्यायः पं० देवमूर्त्यादितापुपरिपूर्वदरजापिन्यां विहृत्य तपोमतीषं पं० विद्यानन्दं निजित्य प्रागुक्तं शीतलं जलं पतिरस्य-  
[कल्पत ?] इति गिदान्तवलेन व्यवस्थाप्य च जयपत्रं गृहीतम् । तस्य च प्रह्लादनपुरादिषु विन्मरेण प्रदेग-

कोत्सवः । सं० १३१९ माघ वदि ५, विजयसिद्धिसाध्य्या दीक्षा । माघ वदि ६, श्रीचन्द्रप्रभस्वामिप्रतिमा अजितनाथ-  
प्रतिमा सुमतिनाथप्रतिमा श्रेष्ठियुधचन्द्रेण महामहोत्सवेन प्रतिष्ठापिता । श्रीरुपभनाथप्रतिमा सा० भुवनपालेन, धर्म-  
नाथप्रतिमा जिसधरसुतेन जीविगथावकेण, सुपार्श्वप्रतिमा रत्न-पेथडथावकाम्याम्, श्रीजिनवल्लभस्वरिभूतिः सिद्धा-  
न्तयधूमूर्तिश्च श्रेष्ठहरिपाल-तद्भावश्रेष्ठिकुमारपालाम्याम् । धीपचने श्रीशान्तिनाथदेवप्रासादे अक्षतृतीयायां दण्डक-  
लशारोपः सा० अमयचन्द्रेण कारापितः ।

सं० १३२१ फाल्गुन सुदि २, गुरौ चित्तममाधि-क्षान्तिनिधिसाध्योर्दीक्षा । सं० १३२१ फाल्गुन वदि ११,  
श्रीप्रह्लादनपुरे आलयप्रतिमात्रयस्य दण्डस्य च प्रतिष्ठां कारयित्वा जैसलमेरवास्तव्यसमुदायेन सा० जसोधवलकारिते  
देवगृहशिखरे जैसलमेरौ ज्येष्ठ सुदि १२ श्रीपार्श्वनाथस्य स्थापना दण्डध्वजारोपश्च कारितः । सं० १३२१ ज्येष्ठ  
सुदि १५, चारित्रशेखर-लक्ष्मीनिवास-रत्नावतारसप्तमो दीक्षिता विक्रमपुरे ।

सं० १३२२ माघ सुदि १४, त्रिदशानन्द-शान्तमूर्ति-त्रिभुवनानन्द-कीर्तिमण्डल-सुबुद्धिराज-सर्वराज-वीरप्रिय-  
जयवल्लभ-लक्ष्मीराज-हेमसेननामानो दश साधवः, मुक्तिवल्लभा-नेमिभक्ति-मङ्गलनिधि-प्रियदर्शनाभिधानाश्चतस्रः सा-  
ध्य्यश्च कृताः । श्रीविक्रमपुरे वैशाखसुदि ६ वीरसुन्दरी साध्वी च ।

१३२३ मार्ग० वदि ५, नेमिध्वजसाधुः, विनयसिद्धि-आगमवृद्धिसाध्यौ च कृताः । जावालिपुरे, सं० १३२३  
वैशाख सुदि १३, देवमूर्तिगणेशाचनार्च्यपदम् ; द्वितीयज्येष्ठ सुदि १०, जैसलमेरुश्रीपार्श्वविधिचैत्यारोपार्थं स्वर्ण-  
दण्ड-कलशयोः सा० नेमिकुमार-सा० गणदेवकारितयोः प्रतिष्ठा; विवेकसमुद्रगणेशाचनार्च्यपदस्थापना च कृता ।  
आपाठ वदि १, हीराकरसाधुः कृतः ।

सं० १३२४ वर्षे मार्ग० वदि २ शनौ, कुलभूषणसाधु-हेमभूषणसाधुद्वयम्, अनन्तलक्ष्मी-व्रतलक्ष्मी-एकलक्ष्मी-  
प्रधानलक्ष्मी इति साध्वीपञ्चकं (चतुष्टयं ?) च महर्क्षा श्रीजावालिपुरे कृतम् ।

सं० १३२५ वैशाख सुदि १०, श्रीजावालिपुरे श्रीमहावीरविधिचैत्ये श्रीप्रह्लादनपुरीय-स्तम्भतीर्थीय-श्रीमेद-  
पाटीय-श्रीउच्चैय-श्रीवाग्गडीयप्रमुखसर्वसमुदायमैलापके व्रतग्रहण-मालारोप-सम्पत्तारोप-सामायिकारोपादिनन्दी महा-  
विस्तरेण संजज्ञे । तत्र गजेन्द्रवल इति साधुः, पद्मानतीति साध्वी च कृता । तथा वैशाख सुदि १४, श्रीमहावीरविधि-  
चैत्य एव चतुर्विंशतिजिनविम्बानां चतुर्विंशतिध्वजदण्डानां सीमन्धरस्वामि-सुगमन्धरस्वामि-बाहु-सुबाहुविम्बानाम्,  
अन्वेषां च प्रभूतविम्बानां महाविस्तरेण प्रतिष्ठा जज्ञे । तथा ज्येष्ठ वदि ४, सुवर्णगिरौ श्रीशान्तिनाथविधिचैत्ये चतु-  
र्विंशतिदेवगृहिकामध्ये तेषामेव चतुर्विंशतिजिनविम्बानां सीमन्धरस्वामि-सुगमन्धरस्वामि-बाहु-सुबाहुविम्बानां सर्वसमु-  
दायमैलकेन महामहोत्सवेन विस्तरेण स्थापनामहोत्सवः संजातः । तत्रैव च दिने धर्मतिलगणेशाचनार्च्यपदम् ।  
तथा वैशाख सुदि १४, श्रीजैसलमेरौ श्रीपार्श्वनाथविधिचैत्ये सा० नेमिकुमार-सा० गणदेवकारितयोः सुवर्णदण्ड-  
सुवर्णकलशयोः सविशेषमहोत्सवो विस्तरेण संजातः ।

६९. सं० १३२६ वर्षे, सा० भुवनपालसुत सा० अमयचन्द्रविरचितेन, मं० अजितसुत मं० देदासुथावकाङ्गीकृ-  
तपञ्चेथानप्राम्भारेण, सा०अमयचन्द्र-महं० अजितसुत महं०देदा सा०राजदेव-श्रेष्ठिकुमारपाल-सा०नीम्बदेवसुतसा०  
श्रीपति-सा० मूलिग-सा० धनपालप्रमुखेण चतुर्दिग्भवेन विधिसंघेन सह तद्वाटाम्ययनया श्रीशत्रुञ्जयादित्तीर्थयात्रार्थं  
श्रीजिनेश्वरस्वरिगुरुषु श्रीजिनत्ताचार्य-श्रीचन्द्रतिलकोपाध्याय-सुमुद्रचन्द्रप्रभृतिसाधु २३ पुरुषोत्समानेषु, श्रीलक्ष्मीनि-  
धिमहत्तराप्रमुखसाध्वी १३परिवृत्तेषु, चैत्र वदि १३, श्रीप्रह्लादनपुरात् प्रचलितेषु,स्थाने स्थाने श्रीविधिसंघे चमत्कारकारिणीं  
विधिमार्गप्रभावनां कुवाणि श्रीतारणमहातीर्थं महं० देदाकेन द्रं० १५०० इन्द्रपदम्, पूनाकसुतेन सा० पथडेन

५०० मन्त्रिपदम्, कुलचन्द्रसुतवीजडेन ५०० सारथिपदम्, सा०राजकेन ५०० भाण्डागारिकपदम्, महं देदाश्रायिकाद्वयेन ५०० ३०० आद्यचामरधारिपदम्, सा० जयदेव-तेजपालभार्याभ्यां पाश्रात्यचामरधारिपदं तिलकेन; तेजपालेन ९०० छत्रधरपदं महामहोत्सवेन गृहीतम् । श्रीवीजापुरे श्रीवासुपूज्यविधिविचैत्ये सा०श्रीपतिना ५०० ३१६ माला गृहीता । द्रुमसहस्र ३ आयपदे जाताः । श्रीस्तम्भनकमहातीर्थे बहुगुणभ्रात्रा धकणेन ५०६१६ इन्द्रपदम्, साकरिया-सहजपालेन ५०१४० मन्त्रिपदम्, सा०पाश्रायकेण ५०२३२ चामरधारिचतुष्कपदम्, ५०८० प्रतीहारपदं सांगण-पुत्रेण, ५०७० सारथिपदं पाश्रुपुत्रेण, भां० राजाकपुत्रनावन्धरेण ५०८० भाण्डागारिकपदम्, बहुगुणेन ५०४० छत्रधरपदम्, कां०पाससपुत्रसोमाकेन ५०५० स्वगिरावाहकपदं गृहीतम् । सर्वसंख्यया पदेषु ५०१३०८, आयपदे ५००० संपेन सफलकृतानि ।

श्रीगजुञ्जयमहातीर्थे सा० मूलिमेन ५०१४७४ इन्द्रपदम्, महं देदाकपुत्रमहं पूनसीहेन ५०८०० मन्त्रि-पदम्, भां० राजापुत्रइमलेन ५०४२० भाण्डागारिकपदं गृहीतम् । सालाकेन २७४ प्रतीहारपदम्, महं साम-न्तपुत्रआह्वणमिहेन २२४ सारथिपदम्, सा० धनपालपुत्रधीन्धाकेन ११६ छत्रधरपदम्, छो०देहडेन २८० पार-थिपदम्, पद्मसिंहेन ५०१०० स्वगिरावाहकपदम्, बहुगुणेन ४५० आद्यचामरधारिपदम्, भां० राजकेन १००, सां०रूवाकेन १०० पाश्रात्यचामरधारिपदम् । सर्वांग्रेण पदेषु ५३३८ । सा० पाश्रायकेण ३८ लेप्यमयमूलनायक-युगादिदेवमुत्तोद्घाटनमाला, सा० पद्मसुतसाहृदाहडेन ३०४ मूलनायकयुगादिदेवमाला, महं देदाजनन्या हीरलश्रायि-कया ५०० मरुदेवीस्वामिनीमाला, सा०राजदेवजनन्या तीर्थी(१)श्रायिकया १४० पुण्डरीकगणधरमाला, तत्पुत्रेण मूल-राजेन १७० कपर्दिपद्ममाला गृहीता । सर्वसंख्ययाऽऽपदे ५०१७००० ।

श्रीउज्जयन्तमहातीर्थे सा०श्रीपतिना ५०२१०० इन्द्रपदम्, श्रेष्ठिहरिपालपुत्रपूर्णपालेन ६१६ मन्त्रिपदम्, पाश्रु-आ० २९० प्रतीहारपदम्, भां० राजपुत्रेण आटाभिधेन ५०० भाण्डागारिकपदम्, कां० मनोरथेन २६० सारथि-पदम्, भां० राजदेवभ्रातृपुत्रेण भुवणाकेन ५०५ पारिथियपदम्, सा० राजदेवेन पु० मलरुणेन १४० स्वगिरावा-हकपदम्, धनदेवेन ११३ छत्रधरपदम्, सा० श्रीपतिना २०० प्रथमनामरधारिपदम्, ८५ चतुर्थनामरधारिपदम्, ५। वै०सा० बहुगुणेन १६० द्वितीयनामरधारिपदम्, ९० तृतीयनामरधारिपदं च । वै० हांसिलसुत वै० देहडेन ५१६ श्रीनेमिनायकमुत्तोद्घाटनमाला, सा० जमपचन्द्रमात्रा त्रिदुण(१)पालहीश्रायिकया २४० राजीमतीमाला, सा० श्रीपतिमाया मोह(श्रायिकया ३५ अन्धकामाला, पाह्वणसुतदेवभ्रातरेण १४४ मायमाला, सा० जमपचन्द्रपुत्रवीर-धवल्लेन १८० प्रथममाला, सा०राजदेवभ्रात्रा मोलाकेन ३११ कल्याणजयमाला, सा० पाश्रुभगिन्या गगलश्रायिकया २५० श्रीगजुञ्जयश्रवणदेवमाला, सा० पाश्रुमात्रा पाह्वीश्रायिकया १२४ मरुदेवीमाला, सा० उदापुत्रमीमन्तिनेन १०८ पुण्डरीकमाला, सा० धणपालेन ११६ अलीरुनागिराममाला, सा० राजदेवभ्रातृगुणधरपुत्रवीजडेन ६४ कपर्दिपद्ममाला गृहीता । एवं सर्वांग्रेण ७०९७ । श्रुगुञ्जये देवभाण्डागारे उद्वेगनः महम् २०, उज्जयन्ते महम् १७ संजाताः ।

श्रीजिनेश्वरगिरिः श्रीउज्जयन्ते श्रीनेमिनायकमुत्तोद्घाटनो ज्येष्ठरतिः.....प्रबोधममुद्र-विनयममुद्रमापुत्रपदा दी-धामरोन्मयो मानागोपनादिमहोत्सवश्च कृतः । ततो देवचरने पतिपानंदिने पतिदिनंमहा विनयेण पशुविषयं पतिदिनेः श्रीजिनेश्वरगिरिः मङ्गलनीर[हित]रागिणी चैत्यपरिसाटी कृता । मण्डपि पतिपानान्तरप्रयुध अतिरक्षिताः ।

एवं स्थाने स्थाने महामहाराजकारणः मङ्गली हननिजन्ममामर्ष्येन मङ्गलमनोग्धेन विधिपार्श्वगंधेन मह तीर्थ-पार्श्वविषय, अलाट गुदि ९, सा० जमपचन्द्रेण देवालयस्य श्रीजिनेश्वरगिरिमुद्रपशुविषयं पतिदिनेः

शकमहोत्सवः सकलनगरालोकचमत्कारकारी [कृतः] श्रीप्रह्लादनपुरे महता निस्तरेण महोत्सवेन श्रीजिनेश्वरसुरिसु-  
रप्रसादान्निविमिश्रेयसेऽस्तु ।

सुमेरौ निर्मेरैरपि सपदि जग्मे तरुवरै-

र्तुगव्या दिव्यन्ते सलिलनिधौ चिन्तामणिगणैः ।

कलौ काले वीक्ष्यानवधिमभितो याचरुगणं

न तस्यौ केनाऽपि स्थिरमभयचन्द्रस्तु विजयी ॥

[७९]

धैर्यं ते स विलोकतामभय । यः शैलेन्द्रधैर्योत्तमना,

गाम्भीर्यं स तवेक्षतां जलनिधेर्गाम्भीर्यमिच्छुश्च यः ।

भक्तिं देवगुरौ स पठयतु तव श्रीश्रेणिकं यः स्तुते,

यात्रां तीर्थपतेः स वेत्तु भवतो यः स सांप्रतीं ज्ञीप्सति ॥

[८०]

सं० १३२८ वैशाख सुदि १४, श्रीजावालिपुरे सा० क्षेमसिंहेन श्रीचन्द्रप्रभस्वामिमहानिम्बस्य, महं पूर्णसिंहेन श्रीरूपभदेवस्य, महं ब्रह्मदेवेन श्रीमहावीरनिम्बस्य प्रतिष्ठा/महोत्सवः कारितः । ज्येष्ठ वदि ४, हेमप्रभा साध्वी कृता । सं० १३३० वैशाख वदि ६, प्रबोधमूर्त्तिगणेशनाचार्यपदम्, कल्याणऋद्धिगणिन्याः प्रवर्तनीपदम् । वैशाख वदि ८, श्रीस्वर्गारिगुरौ श्रीचन्द्रप्रभस्वामिमहानिम्बं शिखरमध्ये स्थापितम् ।

७०. एवं प्रतिदिनचमत्कृतविश्वनिश्चिच्चानि नैरानि सञ्चरित्राणि दुर्नन्तः, श्रीमहावीरतीर्थराजतीर्थं प्रभावयन्तः, प्रोच्छलद्गव्यापहृहरिरौद्रसंसारमहान्मोधिमज्जन्तुजातं निस्तारयन्तः, ममस्तप्राणिप्राज्यमनोराज्यमालाः कल्पद्रुवत्पूर-  
यन्तः, स्ववाक्चातुरीतजितदेवस्यस्यः प्रभुश्रीजिनेश्वरसुरयो लोकोत्तरज्ञानसारभाण्डागाराः श्रीजावालिपुरस्थिताः स्वा-  
न्त्यसमयं ज्ञात्वा सर्वसंघममर्द्धं संक्षेपेण स्वहस्तेनानेकगुणमणिनिपणिं वा० प्रबोधमूर्त्तिगणिं १३३१ आश्विनकृष्ण-  
पञ्चम्या प्रातः स्वपदे समस्थापयन् । श्रीजिनप्रबोधसुरिरिति नाम ददुः । श्रीप्रह्लादनपुरस्थितान् श्रीजिनरत्नाचार्यानिव-  
मादिशंश्च यच्चतुर्मास्यनन्तरं सर्वगच्छं समुदायं च मेलयित्वा युष्माभिः प्रधानलग्ने यथाप्रिधि निस्तरेण [हरिपदस्था-  
पना] कार्या । ततः श्रीपूज्यैरनशनं प्रतिपन्नम् । तदनन्तरं विद्योपतः श्रीमत्पञ्चपरमेष्ठिनमस्वामिनराज घ्यायन्ती-  
ऽनेका आराधना गुणयन्तः सर्वसन्धानं क्षमयन्तः शुभघ्यानाप्रमारुडा आश्विनकृष्णपष्टया रात्रिप्रथमघटिकाद्वये गते  
श्रीपूज्याः स्वर्गाङ्गिणिसूयणा वभूवुः ।

ततः प्रभाते समुदायेन सर्वराजलोकसहितेन स्थाने स्थाने प्रेक्षणीयके संजायमाने नान्दीर्तुयै वाद्यमाने श्रीमत्पूज्य-  
संस्कारमहोत्सवः सर्वजनचमत्कारकः कृतः । तत्र च सर्वसमुदायसहितेन सा० क्षेमसिंहेन स्तूपः कागितः ।

\*

७१. ततश्चतुर्मास्यनन्तरं श्रीजिनरत्नाचार्याः श्रीजिनेश्वरसुरिसुगुरूपदिस्रीजिनप्रबोधसुरिनिस्तरेपदस्थापनां  
चिकीर्षन्तः श्रीजावालिपुरे समागमन् । ततः सर्वदिकसमुदायमेलापके श्रीचन्द्रतिलनेपाष्याय श्रीतिलनेपाष्याय वा०  
पद्मदेवगणिप्रभुराजनेऽसाधुमेलापके च प्रतिदिनं दानानाथदुःस्थितलक्ष्मीदानश्रीचतुर्विधसंयमत्कारविधानादियु महो-  
त्सवेषु जगजनमनोमयूरत्वाण्डवाडम्नराम्मोधरेषु भविःश्लोर्निधीयमानेषु, सं० १३३१ फाल्गुन वदि ८ गौ, श्रीजिन-  
रत्नाचार्याः श्रीजिनप्रबोधसुरीणा पदस्थापना चक्रे । ततः श्रीजिनप्रबोधसुरिभिः फाल्गुन सुदि ८, थिरकीर्तिं ध्वन-  
कीर्त्तिष्ठनी केरलप्रभा हर्षप्रभा जयप्रभा यशःप्रमामाध्यथ दीक्षिताः ।

सं० १३३२ ज्येष्ठ वदि १, शुके श्रीजावालिपुरे सर्वदेशसमुदायमेलापके महाविस्तरेण सा० क्षेमसिंहश्रावको-  
चंसेन नमि-विनमिपरिवृतश्रीयुगादिजिन-श्रीमहावीर-अवलोकनाशिखर-श्रीनेमिनाथविम्बान् श्राव-प्रद्युम्नमूर्त्योः  
श्रीजिनेश्वरस्मिन्सूचनेनदयक्षमूर्त्ति-श्रीसुवर्णगिरि-श्रीचन्द्रप्रभस्वामि-चैजयन्यत्थ प्रतिष्ठा करिता । श्रीयोगिनीपुरवास्त-  
व्यदलिकहरुश्रावकेण श्रीनेमिनाथस्य, सा० हरिचन्द्रश्रावकेण श्रीशान्तिनाथस्य, अन्येषामपि प्रभूतविम्बानां प्रतिष्ठा  
जज्ञे । ज्येष्ठ वदि ६, श्रीसुवर्णगिरौ श्रीचन्द्रप्रभस्वामिष्वजरोपः । ज्येष्ठ वदि ९, स्तूपे श्रीजिनेश्वरस्मिन्सूचैः स्थापना ।  
तस्मिन्नेव दिने विमलप्रज्ञस्योपाध्यायपदम्, राजतिलकस्य च वाचनाचार्यपदम् । ज्येष्ठ सुदि ३, गच्छकीर्त्ति-चारित्र-  
कीर्त्ति-क्षेमकीर्त्तिमुनयो लब्धिमाला-पुण्यमालासाध्व्यौ च दीक्षिताः ।

७२. सं० १३३३ माघ वदि १३, श्रीजावालिपुरे कुशलश्रीगणिन्याः प्रवर्तिनीपदम् । अत्रैव संवत्सरे सा० वि-  
मलचन्द्रसुत सा० क्षेमसिंह-सा० चाहडविरचितेन मन्त्रिदेदासुतमन्त्रिमहणसिंहनिगृहपञ्चेवाणप्रारम्भारेण सा०क्षेमसिंह-  
-सा० चाहड-सा० हेमचन्द्र-श्रेष्ठिहरिपाल-योगिनीपुरवास्तव्य सा०जेणसुत सा० पूर्णपाल-सौवर्णिकधान्धलसुतसा०  
भीम-मन्त्रिदेदापुत्रमन्त्रिमहणसिंहप्रमुखेन सर्वदिग्भवेन विधिसंघेन सह तद्गाढोपरोधेन श्रीशुशुक्लयादिमहातीर्थयात्रायै  
श्रीजिनप्रबोधस्मिन्सुगुरुषु श्रीजिनरत्नाचार्येषु श्रीलक्ष्मीतिलकोपाध्याय-श्रीविमलप्रज्ञोपाध्याय-वा० पद्मदेवगणि-वा०  
राजतिलकगणिप्रमुखसाधु २७ सेव्यमानचरणारविन्देषु, प्र० ज्ञानमालागणिनी-प्र०कुशलश्री-प्र०कल्याणकद्विप्रभृ-  
-तिसाध्वी २१ परिवृतेषु, चैत्र वदि ५ श्रीजावाल(लि)पुरात् प्रस्थितेषु, स्थाने स्थाने श्रीविधिसंघसर्वजनमनथमत्कारका-  
-रिणां विधिमार्गप्रभावनां विदधानेषु, श्रीश्रीमाले श्रीशान्तिनाथविधिचैत्ये द्र० १४७४ विधिसंघेन सफलीकृताः ।

तथा श्रीप्रह्लादनपुरादिषु विस्तरेण चैत्यपरिपाटद्यादिना प्रभावनां विधाय, श्रीतारगतीर्थं सा० नीम्बदेवसुत सा०  
हेमाकेन द्र० ११७४ इन्द्रपदम्, इन्द्रपरिवारेण द्र० २१०० मन्व्यादिपदं गृहीतम् । कलशाघायपदे सर्वसंख्य-  
योद्देशतो द्र० ५२७४ विधिसंघेन सफलिताः । तथा वीजापुरे श्रीवासुदेव्यविधिचैत्ये उद्देशतो द्र० सहस्र ४ मालादि-  
-ग्रहणेन श्रीसमुदायेन कृतार्था विदधिरै । तथा श्रीस्तम्भनकमहातीर्थं गोष्ठिकक्षेमन्धरसुत गो० यशोधवलेन द्र० ११७४  
इन्द्रपदम् । इन्द्रपरिवारेण द्र० २४०० मन्व्यादिपदं गृहीतम् । कलशाघायपदे सर्वसंख्ययोद्देशतो द्र० सहस्र ७  
संघेन कृतार्था चकिरे । तथा भृगुकण्ठे द्र० ४७०० समुदायेन स्थिरीकृताः ।

तथा श्रीशुशुक्ले श्रीयुगादिदेवचैत्ये योगिनीपुरवास्तव्य सा०पूनपालेन द्र० ३२०० इन्द्रपदम्, इन्द्रपरिवा-  
-रेण द्र० सहस्र ३ मन्व्यादिपदं जगृहे । श्रेष्ठिहरिपालेन द्र० ४२०० पाहृघापदे । उद्देशतः कलशाघायपदे सर्वांग्रेण द्र०  
सहस्र २५ श्रीसंघेनाऽज्ञया निर्ममिरे ।

तथा युगादिदेवपुरतः श्रीजिनप्रबोधस्मिन्सूचने ज्येष्ठ वदि ७ जीवनन्दसाधोः पुण्यमाला-यशोमाला धर्ममालालक्ष्मी-  
-मालासाध्वीनां च दीक्षामहोत्सवो मालारोपणादिमहोत्सवश्च विस्तरेण विधिमार्गप्रभावनाय चक्रे । श्रीधियांमविधि-  
-चैत्ये द्र० ७०८, तथा उजयन्ते सा० मूलिगसुत सा० कुमारपालेन द्र० ७५० इन्द्रपदम्, इन्द्रपरिवारेण २१५०  
मन्व्यादिपदम् । सा० हेमचन्द्रेण स्वामातराज्जुनिमित्तं द्र०सहस्र-२ नेमिनाथमाला जगृहे । उद्देशतः कलशाघायपदे  
सर्वांग्रेण द्र० सहस्र २३ श्रीसंघेन शाश्वतीकृताः ।

एवं स्थाने स्थाने प्ररचनप्रोत्सर्पणाकारिप्रभावनाविधानतः सफलीकृतनिजजन्म-द्रव्य-कलामामर्धेन मत्पूर्ण-  
-मनोरथेन श्रीविधिसंघेन सह महातीर्थयात्रां विधाय सा० क्षेमसिंहेन श्रीजावालिपुरे आपाद सुदि १४ श्रीदेवालयस्य  
श्रीजिनप्रबोधस्मिन्सुगुरुचतुर्विधसंघमन्त्रितस्य विधिमार्गप्रभावनाया निर्विघ्नं निर्मापितः प्रवेयकमहोत्सवः । सम-  
-स्तसंप्रमोदायामभ्याचन्द्रार्कम् ।

७३. सं० १३३४ मार्ग सुदि १३, रत्नद्वेष्टिगणिन्याः प्रवर्तिनीपदम् । श्रीभीमपत्न्यां वैशाख वदि ५, श्रीनिमिनाथ-श्रीपार्श्वनाथविम्बयोः, श्रीजिनदचमूरिमूर्त्तः, श्रीशान्तिनाथदेवगृहध्वजादण्डस्य च सा० राजदेवेन, श्रीगौतमस्वामिमूर्त्तः सा० वयजलेन, प्रतिष्ठामहोत्सवः सर्वसमुदायमेलकेन महामहोत्सवेन कारितः । वैशाख वदि ९ मङ्गलकलशसाधोर्दीक्षा । ज्येष्ठ सुदि २, वाहडमेरौ विहारः । सं० १३३५ मार्ग० वदि ४, पञ्चक्रीति-सुधाकलश-तिलकक्रीति-लक्ष्मीकलश-नेमिप्रभ-हेमतिलक-नेमितिलकसाधूनां विस्तरेण दीक्षा ।

७४. पौष सुदि ९, श्रीचित्रकूटे विहारः । तस्मिन् दिने सौवर्णिकधान्धल तत्पुत्र भा० वाहडश्रावकाभ्यां सकल-राजलोकसकलनागरिकलोकैः.....सविस्तरः प्रवेशकमहोत्सवः कारितः । फाल्गुन वदि ५, श्रीसमरसिंहमहाराजराजामराज्ये प्रत्यासन्ननगरग्रामसमुदायमेलापके समस्तत्रल्लोक-जटाधर-राजपुत्र-प्रधानक्षेत्रसिंह-कर्णराजप्रमुखराजलोकनागरिकलोकैषु मध्येभूय महोत्सवं कुर्वाणेषु सर्वदेवगृहसत्केषु एकादशसु मेघाडम्बर-छत्रेषु जनितशोभातिशयेषु स्थाने स्थाने व्यासदिगन्तेषु समुच्चलद्वाद्दशविधनान्दीनिनादेषु सम्पूर्णविश्वमनोरथविताने यथेच्छं प्रवर्तमाने दाने जगन्मनश्चमत्कारकारिजलयात्रापूर्वं चतुरशीतौ श्रीयुगसिद्धतस्वामि-युगादिदेव-अजितनाथ-वासुपूज्यविम्बानाम्, श्रीमहावीरसमवसरणस्य, सा० धनचन्द्रसुत सा० समुद्धारकारित श्रीसू(स ?)र्णगिरिश्रीशान्तिनाथविधिचैत्यसंस्थितश्रीशान्तिनाथपितृलामयसमवसरणस्य, अन्यासां बहूनां प्रतिमानां शम्भुमूर्त्त-दण्डाटकस्य च विधिमाग्नयज्यारवकारकः स-विस्तरं प्रतिष्ठामहोत्सवः संजातः । तस्मिन्नेव दिने चतुरशीतौ श्रीयुगादिदेव-श्रीनिमिनाथयोः स्थापना । फाल्गुन सुदि ५ चतुरशीतौ श्रीयुगादिदेव-श्रीनिमिनाथ-श्रीपार्श्वनाथानां शम्भु-प्रद्युम्नसुन्दरीशिवकायाश्च प्रासादेषु चक्र(त्वर)रहटी अम्बिकायाश्च ध्वजारोपमहोत्सवः सकलराज्यपुराधरणधौरेपराजपुत्रश्रीअरसिंहनाधिष्यात् तीर्थप्रोत्सर्पणागारी सम्पन्नः । एते च सर्वे महामहोत्सवाः सौवर्णिकधान्धल-तत्पुत्ररत्नभा० वाहडाभ्यां सकलसमुदायमहिवाभ्यां प्रभूत-स्वस्वापतेयसफलीकरणेन कारिताः ।

वद्रहाराग्रे श्रीजिनदचमूरिप्रतिष्ठिते श्रीपार्श्वनाथविधिचर्त्ये सा० आह्लाकेन महज-दान्दणादिपुत्रसाहेनेन कृत-नवोद्धारि चित्रकूटे प्रतिष्ठितस्य दण्डस्य, फाल्गुन सुदि १४, विम्बरेणाप्यारोपः संजातः । जाह्रेडाग्रे चित्र सुदि १३, सम्यक्त्वारोपादिनन्दिमहोत्सवः सा० सोमलश्रावकेण सा० कुमारप्रभुनिम्बकृष्णमहितेन मविस्तरः कारितः । वरडियास्थाने, वैशाख वदि ६, श्रीगुण्डरीक-श्रीगौतमस्वामि-प्रद्युम्नसुनि-जिनबद्धमूरि-जिनदण्डश्री-जिनेश्वरविमूर्त्तानां सरस्वत्याश्च मविस्तरजलयात्रापूर्वं विस्तरेण निविध्नं प्रतिष्ठामहोत्सवः, वैशाख वदि ७, मोहविजय-सुनिवह-भवोर्दीक्षा, हेमप्रभगणेषां चनाचार्यपदं च संपन्नानि ।

७५. सं० १३३६ ज्येष्ठसुदि ९ श्रीमत्पूज्यैर्द्वैराप्रधान श्रीअर्चयस्वितचरिण्यं संस्मरद्भिः स्वपितुः नाथुश्रीचन्द्रस्य श्रान्त्यसमयं विज्ञाय श्रीचित्रकूटात्महता वेगेन श्रीप्रह्लादनपुरे समागत्य तद्भाग्याकृष्टदेवपत्तनीयाधनेकरोमलसंयमहा-मेलापकेन दीनानाथमनोमनोरथान् पूरयतः मत्तद्वैश्यां स्वं स्वं मफलीकृतैः, प्रभूतगुदानप्रदानेन डादगविषजान्दीनिनादवादं विवादयतः, अनवरतशुद्धशीलालङ्कारधारकस्य, पुण्यगागाङ्गरागसुग्मीरुनाङ्गस्य, नानाविधम्बाप्यारमहा-म्युलेन मुभगस्य, सा० श्रीचन्द्रपरमश्रावकस्य संयमश्रीः प्रदत्ता । तेन च पुण्यमना प्रकटितपुणोदितमोमदेवचरित्रेण प्रतिक्षणं वर्धमानसंवेगस्तेन उच्यन्डव्याजलात्(?)कवालजालीपममपुष्पवर्तः दुष्पारं ब्रवं प्राप्य ममदशमिनोत्तरप्रहारिनिर्दलितसत्पदश्रिवासांयममहासुभटेन निरन्त्रिवाप्रतिपालितकृतप्रान्त्यप्रन्याग्यानेन कृतनवनयागयनासुवपानेन अर्चचारित्रेण जगत्प्रचित्रायना स्तम्भतीर्थीयाधनेकगंधानां चन्द्रारुमप्यजनदृष्टान् स्वदृष्टानानादगौर्णकलनेन महा-मुनिना श्रीकलनेन श्रोपश्चरमेष्टिमहामन्त्रपरमध्याने सोपानश्रेयागेहेषु स्वर्गाङ्गदृष्ट्याङ्गमलञ्चके ।

७६. सं० १३३७ वैशाख वदि ९ श्रीमञ्जिनप्रबोधस्वरिसुगुरुभिः श्रीसकलगूर्जरत्रापुरवरं श्रीवीजापुरं स्वकरणवि-  
चरणैः पावनीचक्रे । तस्मिन् सुवासरे सा० मोहन-श्रेष्ठिआसपालप्रमुखसमस्तसमुदायेन मन्त्रिविन्ध्यादित्य-ठ० उदयदेव-  
मां० लक्ष्मीधरप्रमुखराज्यधुरन्धरसकलनागरिकमहाजनमेलापकेन व्याप्तोदसीरन्ध्रेषु विविधजनजनितानन्देषु, द्वादशवि-  
धनान्दीनिनादेषु जृम्भमाणेषु नानाविधविलासिनीजनवारेण स्थाने स्थाने प्रवरप्रेक्षणीयकेषु क्रियमाणेषु, उदात्तखरेण  
दानावाजितभट्टलोकादिषु पठसु सरसु, उत्तमदेशनानिनादानन्दितैर्मन्त्रिविन्ध्यादित्य-ठकुरोदयदेवप्रमुखराजपुरुषकुञ्जैः  
संस्तूयमानानां धृतश्वेतातपत्रजिनैश्चरानुगतानां सकलनगरमध्ये देवाधिदेवान् नमस्कृत्वाणानां श्रीमत्पूज्यानां महामि-  
ध्यातोत्कटतयाऽऽष्टपूर्वत्वात् सकलपौरपुरन्धीजनमनःक्षोभावहो नानाविधयाचकजनानां मनोऽभिलाषपुरको विविधभ-  
व्यप्राणिमनोहारको लीलयाैव निर्दलितविग्नैः(मः?) लोकोत्तरः प्रभूतस्वस्वापतेयसफलीकरणेन सरङ्गः प्रवेशकमहामहो-  
त्सवः कारितः ।

७७. तथा ज्येष्ठ वदि ४ शुके, श्रीसारङ्गदेवमहाराजाधिराजराजराज्ये विजयमाने महामात्यमह्यदेवप्रतिशरीर-  
मं० विन्ध्यादित्ये शास्त्रि सकलपृथ्वीतलसारश्रीगूर्जरत्रावनितानानापुरालङ्कारकिरीटायमानश्रीवीजापुरस्य माणिक्यभूते  
श्रीवासुपूज्यविधिचैत्ये अहमहमिकया नानाविधदेशसमायातमहोद्दिक्तसंघमहामेलापकेषु, याचमानजनेन वाद्यमानदी-  
प्रनान्दीनिनादविवादप्रारम्भकोलाहलपरिपूर्वमाणेषु दिगाङ्गनाकर्णकोटरेषु, हर्षाङ्कुरप्रूरितमनोमङ्गलपाठकजनपठ्यमान-  
विरुदावलीपरःसहस्रेषु, स्थाने स्थाने प्रमुदितजनेन दीयमानेषु प्रधानरासकेषु, नानाविषणिमाणेषु गीयमानेषु विवि-  
धप्रवरचञ्चरीश्रेणिशतेषु, मथितमहामिध्यात्त्वप्रवलमहामोहादिसुभटेषु जिनशासनमहाराजशास्त्रेषु, छत्रत्रयचामरालम्बा-  
दिषु अग्रतो ध्रियमाणेषु, पुरोवर्त्तमहामन्त्रिविन्ध्यादित्य-ठ० उदयदेवप्रमुखराज्यधुरन्धरैर्महामहोत्सवेषु स्वयं कार्यमा-  
णेषु, कौतुकाक्षिप्तविबिधपौरजनसमाजैः स्थगितनानाप्रकारनिगमशुभित्तमालाङ्गलदेवकुलवितानेषु, सकलवनीतल-  
चमत्कारकारी भव्यलोकजनमनोहारी अभूतपूर्वां जलानयनमहोत्सवः सरङ्गः सम्पन्नः । द्वितीपदिने तथैव महामहो-  
त्सवेषु संजायमानेषु, अवारितशत्रेषु क्रियमाणेषु, अमारिघोषणायां प्रवर्तमानायां चतुर्विंशतिश्रीजिनालयविम्बानां  
ध्वजदण्डानां च, जोयलानिमित्तं श्रीपार्थनाथस्य, अन्येषां प्रभूतविम्बानां भूयिष्ठप्रतिमानां च, श्रीद्वचप्रबोध-श्रीप-  
ञ्जिकाप्रबोध-श्रीबौद्धाधिकारविवरणदिश्रीमत्पूज्योपज्ञसुग्रन्थदर्शनोदितचित्चिनेन तुरगपदचिन्तितसमसाऽनुलोमप्रतिलो-  
माघनेकमद्भिकथितश्लोककथनाद्यनेकावधानप्रतिपादनचञ्चुना कृप्यपण्डितेन क्षणे प्रतिदिनमनेकपण्डितगोष्ठ्या  
मन्त्रिविन्ध्यादित्यादिसभासु च नानावृत्तैः पवित्रैः संस्तूयमानश्रीमत्पूज्यनिम्प्रतिमध्यानाधिरोहप्ररोहशतकोटिको-  
टिना निर्दलितकलिकालानुभावकिञ्चिदुत्थितप्रत्युहसमूहशैले विधिमार्यजययारपूर्वकः सरङ्गः सप्रभावः प्रतिष्ठामहो-  
त्सवः समजनित । एते सर्वेऽपि महोत्सवाः सा० मोहण-श्रेष्ठिआसपालप्रभूतिसकलसंपर्ल्लेधासंख्यस्वकीयासासरंसासारस-  
फलीकरणेन कारिताः । अस्मिन् महसि श्रीवासुपूज्यविधिचैत्ये द्रं० सहस्र ३० उत्पन्नाः । द्वादश्यामानन्दभूचित्-  
पुण्यमूर्त्तिमुन्योर्दीक्षादानमहोत्सवः सम्पन्नः ।

७८. सं० १३३९ फाल्गुन सुदि ५, मन्त्रिपूर्णसिंह-भां० राजा-गो० जिसहह-देवसीह-मोहाप्रमुखश्रीजावालिपुरीयसर्व-  
संपेन श्रीप्रह्लादनपुरीय-श्रीवीजापुरीय-श्रीश्रीमालपुरीय-रामशयनीय-श्रीश्रम्यानयनीय-श्रीवाग्भटमेरवीय-श्रीरत्न-  
पुरीयानेकनगरामशकटपञ्चशतीमेलापकेरनयैः सर्वविधिमार्गतंघैः सह प्रत्याय श्रीजिनगताचार्य-देवाचार्य-वाचना-  
चार्यविवेकसमुद्रगणिप्रमुखनानामुनिमतद्विकोदप्रनिकरविराजमानं, उच्छेद्यद्विः मकलानि तमःपटलानि, विकाश-  
यद्भिः समस्तजनतापदनशुभुदकाननानि, बुधंद्भिर्वाचपमुधाशुष्ठा परमनिर्घृतिरक्ष्मीं समस्तजननयनचकोरनिकरस्य,  
युगप्रधानश्रीजिनप्रबोधस्वरिसुगुरराजपादैः पावित्र्यभाजा, प्रतिपुरं प्रतिशामं विधिमार्गजययाकारकारिणं स्वरीयं  
विभवं सफलयाता फाल्गुनचतुर्मासके सर्वविश्वसारं सकलवसुधातलवचिरामणीयकापारं श्रीअर्षुदगिरीन्द्रवरं श्रीपु-

गादिदेव-श्रीनेमिनायतीर्थचक्रिणौ नमश्चक्रान्ते । ततो विस्मृतगृहप्राम्गारेण हर्षाङ्कुरपूरितशरीरेण समस्तश्रीसंवेन सर्वस्वापतेयसारपुण्यानुबन्धिपुण्यसारोपार्जनया त्रैलोक्योपरि स्वं मन्यमानेन श्रीइन्द्रपदादिभिः मर्ममहोभिः सुदिनेषु एषु दिनेषु घुम्नस्योद्देशतः सप्त सहस्राणि सफलीचक्रिरे । तदनन्तरं श्रीमत्पूज्यप्रसादात् सफलीकृतनिजजन्मभ्रमवो दलितदुर्गतिसंभ्रमः सम्पूर्णासर्वसर्वमनोरथः श्रीजात्रालिपुरे सम्पन्नमहाप्रवेशक्रमहोत्सवः क्षेमण सर्वाङ्घ्रि संघः प्राविशत ।

७९. तस्मिन्नेव वत्सरे ज्येष्ठ वदि ४, जगचन्द्रमुनिः कुमुदलक्ष्मी भुवनलक्ष्मीमाच्छ्रयौ च दीक्षिताः । पञ्चम्यां चन्द-  
नुन्दरीगणिन्या महत्तरापदं प्रदत्तं तस्याश्च श्रीचन्दनश्रीरिति नाम जज्ञे । ततः संमुखीनायातश्रीमोममहाराजाभ्यर्थ-  
नया श्रीशम्पानयने चतुर्मासीं त्रिषाय, अतुलनलक्ष्मिणपालमालामौलिभाणिक्यकरणरुद्रम्पानीयपूरणुतचरणक्रमला-  
नां सम्पादितभव्यभव्यलोकनिरुपमसम्यक्प्रक्रमलानां सकलसंन्यपरिवारपरिकलितसंमुद्रायातप्रमुदितश्रीकर्ममहानरे-  
न्द्राणां श्रीजिनप्रबोधध्वरिसुनीन्द्राणां श्रीजिसलमेरौ सं० १३४० फाल्गुनचतुर्मासके महता विस्तरेण प्रवेशक्रमहोत्सवः  
समपनीपद्यत ।

तत्र च वैशाखसुदिअक्षततृतीयादिने श्रीउच्चापुरीय-श्रीत्रिकमपुरीय-श्रीजात्रालिपुरीयाद्यनेऽसंघमेलापकेन सर्व-  
समुदायमहिताभ्यां सा०नेमिदुमार-सा०गणदेवाम्यां महर्द्धां कृतसर्वमहोत्सवाम्यां चतुर्विंशतिजिनालयस्वाष्टापदा-  
देश्च चिन्मानां ध्वजदण्डाना च गरिष्ठप्रतिष्ठामहोत्सवः कारितः सर्वमहोत्सवैः । श्रीदेवगृहापपदे द्रं० सहस्र ६ सप्त-  
त्पन्नाः । ज्येष्ठ वदि ४, मेरुकलशुमुनि धर्मकलशमुनि-लब्धिचकलशमुनीनां पुण्यसुन्दरी-रत्नसुन्दरी-भुवनसुन्दरी-हर्षसु-  
न्दरीसाध्वीनां दीक्षामहोत्सव उत्पदे । श्रीशण्देवमहाराजोपरोधेन चतुर्मासीं तत्रैव विधाय नानाविधधर्मदेशनया  
सकलनगरलोकस्य चिन्तेषु चमत्कारमुत्पाद्य श्रीचिकमपुरसमुदायगाढाभ्यर्थनया युगप्रधानश्रीजिनदत्तध्वरिसंस्थापितं मरु-  
खलीरूपद्रुमं श्रीमहावीरवतीर्थं महता विस्तरेण श्रीचिकमपुरे प्रविश्य जिनप्रबोधध्वरयो वन्दितवन्तः । तत्र श्रीउच्चा-  
पुरीय-श्रीमरुठोद्गीयप्रभृतिनानासमुदायमेलके श्रीमहावीरत्रिधिचैत्ये महता विस्तरेण सम्पत्कारोप-मालारोपण-दीक्षा-  
दानादिमहानन्दिमहोत्सवः सं० १३४१ फाल्गुनकृष्णैकादश्यां श्रीजिनप्रबोधध्वरिसिधके । तत्र च नन्दिमहोत्सवे विन-  
यसुन्दर-सौमसुन्दर-लब्धिसुन्दर-चन्द्रमूर्ति-मेघसुन्दरनामानः श्रुद्धकाः पञ्च, धर्मप्रभा-देवप्रभाल्ये श्रुद्धिके द्वे च  
संजाते ।

तत्र च श्रीमहावीरतीर्थं प्रभाजपतां ज्ञानध्यानबलेन समस्तजनमनःस्वाधर्ममुत्पादयतां स्वपक्ष-परपक्षाराध्य-  
मानचरणानां परित्रचरणानां श्रीपूज्यानां महान् दाहज्वरः संजातः । ततो ध्यानबलेन स्वायुःपरिमाणं स्वल्पं सम्पक्  
परित्वायात्रिलिन्नप्रयाणैः श्रीपूज्याः श्रीजात्रालिपुरे समायाताः । तत्र च सकललोकचमत्कारकारिणि श्रीधर्ममान-  
स्वामिनो महातीर्थं वाद्यमानेषु द्वादशविधनान्दीर्घ्येषु, गीयमानेषु प्ररगतीषु, दीयमानेषु धरलेषु, नृत्यमानसु प्रवर-  
पुराङ्गनासु, त्रितीर्थमाणेषु दीनानाथदु स्थिताना महदानेषु, मिलितेषु जानापुरग्रामसंघेषु, नानाविधायदातातुकृतपू-  
र्वध्वरिभिः श्रीजिनप्रबोधध्वरिभिः, सदूपलक्ष्मीतजितकलाकेलयः समस्तभव्याभ्युजप्रकाशनहेलयो नानागुणरत्नविधयः  
प्रवरगभीरिमाधरीकृतवाधेयः श्रीजिनचन्द्रध्वरयः सं० १३४१ श्रीयुगादिदेवपारणरूपत्रिनितायां वैशाखशुक्लाक्षततृती-  
यायां स्वपदे महाविस्तरेण स्थापिताः । तस्मिन्नेव दिने राजशेखरमणोरचनाचार्यपदं प्रदत्तम् । ततश्चाष्टम्यां श्रीम-  
त्पूज्यैः सकलसंघेन सह विस्तरेण मिथ्यादुष्कृतं दत्तम् । ततश्च दिने दिने वर्षमानशुभभावादिजातसांसारिकमाया-  
नित्यस्वभावाः सुमायुभिर्निरन्तर श्राव्यमाणसमारोघनाः सम्पत्तिरहितश्रीदेवगुरुपादबाराघनाः सज्जानलक्ष्मीकण्ठ-  
कन्दलहाराः खनदनक्रमलोच्चारितपञ्चपरमेष्ठिनमस्काराः कीर्त्तिधरलितक्षोण्यः श्रीजिनप्रबोधध्वरयो राघवशुद्धैकादश्यां  
स्वर्गाङ्गणभूषणा वभूवुः ।

८०. तदनन्तरं सं० १३४२ वैशाखशुक्लदशम्यां, श्रीजावालिपुरे श्रीमहावीरविधिचैत्ये श्रीजिनचन्द्रहरिभिर्महामहोत्सवेन श्रीतिचन्द्र-सुखकीर्तिनामकं क्षुल्लकद्वयं जयमञ्जरी-रत्नमञ्जरी-शीलमञ्जरीनामकं क्षुल्लिकात्रयं च विहितम् । तस्मिन्नेव दिने वाचनाचार्यमिश्राणां त्रिवेकसमुद्रगणीनामभिपेकपदम्, सर्वराजगणेष्वर्वाचनाचार्यपदम्, बुद्धिसमुद्रिगणिन्याथ प्रवृत्ति-नीपदं च प्रदत्तम् । सप्तम्यां च सम्यञ्चारोप-मालारोपण-सामायिकारोप-साधुसाध्वीउत्थापनानन्दिमहोत्सवथके ।

तथा ज्वेष्टकृष्णनवम्यां साधुराजक्षेमसिंहेन कारितस्य रत्नमयस्य श्रीअजितस्वामिविम्बस्य सप्तविंशत्युल्लसमानस्य तेनैव कारितानां श्रीयुगादिदेव-श्रीनेमिनाथ-श्रीपार्श्वनाथविम्बानां च, महामं० देदाकारितश्रीयुगादिदेव-श्री-नेमिनाथ-श्रीपार्श्वनाथविम्बानाम्, भाण्डागारिकछाहडकारितस्य श्रीशान्तिनाथविम्बस्य महत्तमस्य, वैद्यदेहडिकारि-ताटापदध्वजादण्डस्य, अन्येषां च बहूनां विम्बानां महता विस्तरेण श्रीसामन्तसिंहविजयराज्ये सकललोकमनश्चम-त्कारी निःशेषपाहारी श्रीजिनचन्द्रहरिभिः प्रतिष्ठामहोत्सयो विहितः । अस्मिन् प्रतिष्ठामहोत्सवे विशेषतोऽतिप्रसन्न-श्रीसामन्तसिंहमहाराजसाधिप्येन सकलस्वपक्ष-परपक्षाह्लादकः सकलविधिभाग्योत्सर्षणामुत्पादकः प्रभूततरङ्गस-फलीकरणेन सा० क्षेमसिंहप्रमुखसमस्तथावकैर्विधिभार्गीप्रभावकैः प्रमोदभरमेदुरैः सद्भावनाचन्द्रैः श्रीचन्द्रमहोत्सवः कारितः । ज्वेष्टकृष्णैकादश्यां च वा० देवमूर्तिगणेः श्रीअभिपेकपदं मालारोपणादिनन्दिमहोत्सवथ संजातः ।

सं० १३४४ श्रीजावालिपुरे श्रीमहावीरविधिचैत्ये मार्गशीर्षे सुदि १०, सा० कुमारपालपु०पं० स्थिरकीर्तिगणेः श्रीजिनचन्द्रहरिभिर्विस्तरेण आचार्यपदं दत्तम्-श्रीदिवाकराचार्या इति नाम ।

सं० १३४५ आपाढ सुदि ३, मतिचन्द्र-धर्मकीर्त्योर्दीक्षा । वैशाखे वदि १, पुण्यतिलक-भुवनतिलकयोश्चात्रिल-क्ष्मीसाध्याथ दीक्षा । राजदर्शनगणेष्वर्वाचनाचार्यपदं च ।

सं० १३४६ माघ वदि १, सा० क्षेमसिंहभा० (आ०?) वाहडकारितस्वर्णगिरि[स्थ]श्रीचन्द्रप्रभस्वामिदेवगृहपार्श्व-स्थितयोः श्रीयुगादिदेव-श्रीनेमिनाथविम्बयोर्मण्डपस्वातकेषु च समेतशिखरविंशतिविम्बानां च स्थापनामहोत्सवः । फाल्गुन सुदि ८, सा० वाहड-भा० भीमा-भा० जगन्निह-भा० सेतसिंहसुथावककारिते प्रासादे श्रीग्रन्थानयने चाहट (चाह ?) मानाह्वयबंधे श्रीसोमेश्वरमहाराजकारितविस्तरप्रवेशमहोत्सवस्य श्रीशान्तिनाथदेवस्य विस्तरेण स्थाप-नामहोत्सवः । देवबल्लभ-चारित्रतिलक-कुशलकीर्तिसाधूनां रत्नश्रीसाध्याथ दीक्षा । मालारोपणादिमहोत्सवथ । चैत्र सुदि १, श्रीप्रह्लादनपुरे सर्वथ आहट्टोर्ध्वतपताकोचरे निःस्थानेषु वाद्यमानेषु मं० माघचप्रमुखसकलनगरलोकसंयुगा-गननपूर्वं सा० अमपचन्द्रप्रमुखसमुद्रावेन प्रवेशमहोत्सवः कारितः । वैशाखे वदि १४, श्रीभीमपहृथां श्रीप्रह्लादनपुर-वत्प्रवेशमहोत्सवः । वैशाखे सुदि ७, सा० अमपचन्द्रकारिताद्भुततिलमयश्रीयुगादिदेवविम्ब-श्रीचतुर्विंशतिजिनालय-चतुर्विंशतिविषय-इन्द्रध्वज-श्रीअनन्तनायदण्डध्वज-श्रीजिनप्रबोधहरिस्तूप-मूर्ति-दण्डध्वजानेकशिलमयपिचलामय-विम्बानां विस्तरेण प्रतिष्ठामहोत्सवथ । ज्वेष्ट वदि ७, नरचन्द्र-राजचन्द्र-मुनिचन्द्र-पुण्यचन्द्रसाधूनां मुक्तिलक्ष्मी-सुक्तिश्रीसाध्याथ महाप्रभावनापूर्वं दीक्षा च ।

सं० १३४७ मार्गशीर्षे सुदि ६, श्रीप्रह्लादनपुरे मुमनिकीर्तिदीक्षा, नरचन्द्रादिमाधुमाध्वीनामुपस्थापना-मालागोप-णादिमहोत्सवथ । ततो मार्गशीर्षे सुदि १४, गदिगलुक्कायां म्याने म्याने तन्दिक्कानेग्यान्नुत्पायां मं० चण्डापुर मं० रादपपात्रेन मङ्गलमहाजनपरिग्रहद्राक्षणादिमेलोपकेन प्रवेशमहोत्सवः कारितः । मं० महलपात्रेन गममग्नंघमनेयारंकेन श्रीनाथगटनीधार्तद्वारधीअजितग्यामिनीधंपाया कारिता । पीप वदि ५, श्रीजीजापुरीय सा० लक्ष्ममिह-भे० प्राम-पानप्रमुखगनुदापेन गदिगलुक्काप्रवेशमहोत्सवः कारितः । श्रीजावालिपुरे श्रीजिनप्रबोधहरिस्तूपं मूर्तिस्थापनामहो-त्सवो दण्डध्वजगोपमहोत्सवथ माघ सुदि ११ सा० अमपचन्द्रेण कारितः । चैत्र वदि ६, श्रीजीजापुरे अमग्न-पद-

रत्न-विजयपरत्नमाधमो मुक्तिचन्द्रिका साध्वी च सत्समतीर्थं-आद्यापल्ली-गण्ड-नटपत्रकादिसंघमेलापकेन विस्तरेण दीक्षिता, मालारोप-परिग्रहपरिमाणान्दिमहोत्सवश्च संजातः ।

सं० १३४८ वैशाख सुदि ३, श्रीप्रह्लादनपुरे वीरशेखरस्य अमृतश्रीमाच्छपाथ दीक्षा, त्रिदशकीर्तिगणेशचर्याचार्य-पदम् । तस्मिन्नेव वर्षे श्रीपूज्यैः सुधाकलश-मुनिपल्लवसाधुपरिवृतैर्गणियोगतपश्चक्रे ।

सं० १३४९ भाद्रपद वदि ८, साधर्मिन्मनाकारस्य संपुत्रपस सा०अभयचन्द्रसुश्रावकस्य संस्तरकदीक्षा, अभय-शेखर इति नाम । मार्गशीर्ष वदि २, यशःकीर्तिदीक्षा ।

सं० १३५० वैशाख सुदि ९, करहेटक-अर्जुनादिविहितमपिस्तत्तीर्थयात्रामफलीकृतजन्मजीवितस्य वरडियानगर-सर्वाधिकारिणो नवलक्षकुरुलोचमस्य भा० ज्ञानगणसुश्रावकस्य सकलस्यपक्ष-परपक्षचमत्कारकारिणी संस्तरकदीक्षा, नरविलम्बाराजपरिति नाम ।

सं० १३५१ माघ वदि १, श्रीप्रह्लादनपुरे श्रीयुगादिदेवत्रिधिचत्ये मं० तिहुणसत्कश्रीयुगादिदेव-श्रेष्ठिजीवास्तक-श्रीमहावीरनिम्नप्रमुखाद्भुतनिम्नानां चत्वारिंशदधिकरूपदशतीप्रमाणानां महं० तिहुण-श्रे० वीजासुश्रावकाम्यां समुदा-यसहिताभ्यां विस्तरेण प्रतिष्ठामहामहोत्सवः कारितः । पञ्चम्या श्रीपूज्यानामनेकमाधुमाध्वीश्रावकश्राविकापरिवृतानां मालारोपमहामहोत्सवनिन्दः, विश्वकीर्तिमाधोहंमलक्ष्मीमाच्छपाथ दीक्षा । ८००(१)

८१.सं० १३५० जिनचन्द्रधरिगुरुवदेषेन वा० राजशेखरगणिः सुबुद्धिराजगणि-हेमविलकृष्णगणि-पुण्यकीर्तिगणि-रत्नसुन्दरमुनिसहितः श्रीबृहद्भामो निहतयान् । ततश्च तत्रत्यठ० रत्नपाल-सा० चाहडप्रधानश्रावकप्रेषिताभ्यां सभ्राट्-हेमराज-भागिनेयवाचंश्रावकभ्यां सपरिवारभ्यां सा० बोधियपुत्रेण सा० मूलदेवश्रावकेण श्रीकौशाम्बी-वाणारसी-काकिन्दी-राजगृह-पावापुरी-नारिन्दा-क्षत्रियबुण्डग्राम-अयोध्या-रत्नपुरादिनगरेषु जिनजन्मादिपत्रितेषु तीर्थया-त्रा कृता । तैः श्रावकैः साधं समुदायसहितपूर्वविहितहस्तिनागपुरयात्रेण वा० राजशेखरगणिना सपरिवारेणैतानि तीर्थानि वन्दितानि । राजगृहमगीप उडंडविहारं चतुर्मासी कृता, मालारोपणादिनिन्दिमहोत्सवश्च कृतः । तथा तत्रैव वर्षे नाना-द्भुतपुण्यपल्लीश्रीश्रीभीमपल्लीतः सा० धनपालसुश्रावकमत्पुत्र सा० भडसिंह-सा० सामलश्रावककृतसंघेन श्रीप्रह्लादन-पुरीय-भीमपल्लीय-श्रीपत्तनीय-सत्यपुरीयाद्यनेकस्यपक्ष-परपक्षमेलापकेन च साधं प्रस्थाप्य वारुचातुरीपरभूतगीर्वा-णोपाध्याय-श्रीनिवेशममुद्रोपाध्यायप्रमुखासुमाधुमण्डलीपरिवृतैर्जगत्पूज्यैः श्रीमत्पूज्यैः श्रीशङ्खधरपुरालङ्कारचूडामणि-श्रिन्तातीतसुसम्पादनापहस्तितचिन्तामणिः ससारदुःखदायाप्रिपाथः श्रीपार्श्वनाथः प्रणतः । तत्र च श्रीसंघेन स्नात्र-पूजाउद्यापनक ध्वजारोपादिमहोत्सवा विहिताः । ततः सर्वसंघसन्निताः श्रीमत्पूज्याः श्रीपत्तने समाजगुः । तत्र च श्रीशान्तिनाथप्रिधिचत्ये सविस्तरध्वजारोपादिमहोत्सवपूर्वकनानाविधयाद्यमाननन्दीतृप्यप्रवर्तमानान्नाचङ्गुयेषु सक-लपत्तनमध्यस्थसमस्तचैत्येषु विस्तरेण चैत्यपरिपाटीं विधाय, श्रीपूज्याः श्रीभीमपल्लीया समायाताः । पश्चाच्छ्रीजीवा-पुरीयसमुदायाभ्यर्चनया वीजापुरे चतुर्मासी कृता । तत्र च सं० १३५ [३१] मार्गशीर्षकृष्णपञ्चम्या श्रोत्रासुपूज्यवि-धिचत्ये मुनिसिंह-तपःसिंह-जयसिंहसाधमो दीक्षिताः, मालारोपणादिनिन्दिमहोत्सवश्च संजातः ।

ततः श्रीजावाल्लिपुरे तत्समुदायाभ्यर्चनया विहारः । तस्मिन्नेव संवत्सरे सा० सलरणश्रावकपुररत्न सा० सीहा श्रावक-माण्डव्यपुरीय सा० ज्ञानगणसत्पुत्रसा० मोहनश्रावकभ्यां निर्मितसंघेन श्रीजावाल्लिपुरीय-श्रीसम्पानयनीय-श्रीजिसलमेरवीय-श्रीनारापुरीय-रुणापुरीय-श्रीमालीय-सत्यपुरीय-प्रह्लादनपुरीय-भीमपल्लीयाद्यनेकमहद्वि-क्ष-श्रीमा-लङ्गातिमण्डनश्रीयोगिनीपुरवास्तव्य सा०बाहासुश्रावकपुर सा० लोहेदेवप्रमुखाप्रभूतश्रावकमेलापकविभूषितेन मार्गानव-रतविरचितावारितसत्रचैत्यपरिपाद्यनेकमहामहोत्सवेन श्रीजावाल्लिपुराद् वैशाखकृष्णपञ्चम्या प्रस्थाप्य, प्रभूतमुनिमण्ड-

लीसंसेव्यमानैः श्रीचतुर्विधश्रीभ्रमगसंघस्तूपमानैर्जगत्पूज्यैः श्रीमत्पूज्यैः श्रीअर्चुदालङ्कारकारिणौ समस्तदौर्गत्यविदारिणौ श्रीयुगादिदेव-श्रीनेमिनाथजिनेश्वरौ नमस्कृतौ । ततोऽपहस्तितकलिकालमहाचौरेण महादानपराभूतदेवतरुवरेण परम-वासनास्त्रालितानेकभवसहस्रसंचितदुष्पापौघेन श्रीसमस्तविधिमार्गसंघेन श्रीइन्द्रपद-स्त्रात्र-ध्वजारोपादिमहोत्सैरुद्देशतो द्रुम द्वादश सहस्राणि कृतार्थीकृतानि । तदनन्तरं हर्षाङ्कुरपूरितः स्वसुकृतमहाराजपूजितः सदान्वः श्रीविधिमार्गसंघः क्षेमेण श्रीजावालपुरे विस्तरेण प्रविष्टः ।

सं० १३५४ ज्येष्ठ वदि १०, श्रीजावालपुरे श्रीमहावीरविधिचैत्ये सा० सलखगपुत्र सा० सीहाकारितो दीक्षा-मालारोपणादिमहोत्सवः संजातः । तस्मिन्महसि वीरचन्द्र-उदयचन्द्र-अमृतचन्द्रसाधूनां जयसुन्दरीसाध्व्याथ दीक्षादा-नोत्सवः सम्पन्नः । तस्मिन्नेव वत्सर आपाठशुक्लद्वितीयायां सिरियाणकग्रामे श्रीमहावीरप्रासादोद्धार-श्रीमहावीरविश्व-स्थापना श्रे०भाडाश्रावकपुत्रेण श्रे०जोधाश्रावकेण महाविस्तरेण कारिता । सं० १३५५ ।

सं० १३५६ राजाधिराजश्रीजैत्रसिंहविजया मार्गशीर्षसितचतुर्थ्यां श्रीजेसलमेरौ श्रीपूज्याः समायाताः । तत्र च श्रीमहाराजजैत्रसिंहेन योजनद्वयसंयुत्तरागमनेन बहुमानपूर्वकं सा० नेमिकुमारप्रमुत्समस्तसमुदायेन च प्रभूतद्रव्य-वेचनेन विधिमार्गप्रभावनापूर्वकं निःस्नानादितूर्पेषु वाद्यमानेषु, पठरुषु चन्दिष्टुन्देषु, स्थाने स्थाने संज्ञायमाननपन-मनःप्रह्लादकारिप्रेशणीयकेषु, श्रावकश्राविकाभिर्विस्तार्यमाणेषु रास-गीत-धवलमङ्गलेषु, स्वपक्ष-परपक्षचेतश्मत्कार-कारी श्रीपूज्यानां प्रवेशकमहोत्सवः संजातः ।

सं० १३५७ मार्गशीर्षशुक्लनवम्यां श्रीमहाराजजैत्रसिंहप्रेषितनिःस्नानादिषु वाद्यमानेषु दीक्षा-मालारोपणादि-महामहोत्सवः संजातः । तत्र श्रे०लक्ष्म-भा०गजपुत्रौ जयहंस-पद्महंसनामानौ दीक्षितौ ।

सं० १३५८ माघशुक्लदशम्यां श्रीपार्श्वनाथविधिचैत्ये महाविस्तरेण निःस्नानादिषु वाद्यमानेषु श्रीममेतशिखररदि-चिम्बानां प्रतिष्ठामहोत्सवः श्रीमत्पूज्यैः कृतः । सा० केशवपुत्रेण सा० तोलीश्रावकेण कारापितः, फाल्गुनशुक्लपञ्चम्यां मालारोपण-मम्यज्जारोपादिमहोत्सवश्च सम्पन्नः ।

ततः सं० १३५९ फाल्गुन वदि ११, श्रीवाहदमेरौ सा० मोरुलसिंह सा० बीजडप्रमुत्समुदायाभ्यर्चनया श्रीपूज्याः श्रीपुगादिदेवतीर्थं नमस्कृतवन्तः ।

तत्र च सं० १३६० माघ वदि १०, सा० बीजड-सा० धिरदेवादिसुश्रावकैः प्रभूतद्रव्यवेचनेन श्रीजिनशामन-प्रभावनापूर्वं मालारोपणादिनन्दिमहोत्सवः सविस्तः कारितः । तत्र च श्रीशीतलदेवमहाराजविजया मं० नाणचन्द्र-मं० शुमारपाल-श्रे०पूर्णादिमनुदायाभ्यर्चनया च श्रीगम्यानपने श्रीशान्तिनाथदेवतीर्थं श्रीपूज्येणमश्रके ।

ततः सं० १३६१ शान्तिनाथविधिचैत्ये मं० नाणचन्द्र-मं० कुमरपाल-भा० पद्म-श्रे०पूर्णा-मा० रूपचन्द्र-प्रमुरममुदायेन द्वितीयदेशाल सुदि ६, श्रीजावालपुरीय-मपादलक्षीयप्रमुरगनानानगधाम रास्त्रव्यमंधमेलारुकेन श्रीपार्श्वनाथप्रमुरगनानाचिम्बानां प्रतिष्ठामहोत्सवः, दशम्यां च मालारोपणादिनन्दिमहोत्सवः मरुलव्यपक्ष-परपक्षचमन्कार-रफारी श्रीदेवगुरुप्रमादाप्रिर्षाः कारितः । अस्मिन्महोत्सवे ५० लक्ष्मीनिशमगणि-पं० हेमभूषणगण्योशं चनायापेपदं दद्यमिति ।

८२. ततः श्रीजावालपुरीयममुदायाभ्यर्चनया श्रीजावालपुरे श्रीमहावीर]द्वं धीपूज्या नमश्शुः । तत्र च सं० १३६४ वैशाखशुक्लपयोदश्यां, मं० सुनमिह-मा० गुमट-मं०नयनमिह-मं० दुम्पाज-मं० मोरुगत्र-मा० गीहा-प्रमुरममस्तर्षीममुदायादिद्विनानानप्रोत्सवणापूर्वं श्रीमत्पूज्येणानंश्रीराजगृहादिमहानीर्थनमस्कारगमसुसत्रिगतव्य-पुत्रप्रमाणारवा०राजनेगण्येगण्यपेपदं प्रदद्यम् । स्वपक्ष-परपक्षचमन्कारी मात्स्योचगादिनन्दिमरोत्सवश्च श्रीममुदा-

देहडानुज ० थिरदेवपुत्रिकायाः श्रीजिनचन्द्रस्वरिखहरतकमलदीक्षिताया रत्नमञ्जरीगणिन्या महत्तरापदं प्रदत्तम्—  
श्रीजपद्धिमहत्तरति नाम विहितम्, प्रियदर्शनगणिन्याः प्रवर्तिनीपदं च ।

ततः श्रीसमुदायाभ्यर्चनया श्रीपूज्याः पचनपुरवरे समायाताः । तत्र च सं० १३६९ मार्गशीर्षसितपष्ठ्यां स्वप-  
क्ष-परपक्षचेतश्चमत्कारकारकेण श्रीसमुदायविधापितमहोत्सवेन 'जयति जिनशासनम्' इति समुत्साहपूर्वकं श्रीपूज्यैर्ज-  
गत्पूज्यैश्चन्दनमूर्ति-भुवनमूर्ति-सारमूर्ति-हीरमूर्तिनामकं क्षुद्रकचतुष्टयं विहितम्, केवलप्रभागणिन्याः प्रवर्तिनीपदं च  
प्रदत्तम्, मालारोपणादिमहानन्दिमहोत्सवश्च कृतः ।

सं० १३७० माघशुक्लैकादश्यां पुनः श्रीसमुदायकारितसकलस्वपक्ष-परपक्षचेतश्चमत्कारकारी दीक्षामालारोपणादि-  
नन्दिमहामहोत्सवः सकलजगरकल्पद्रुमावतारैः श्रीमत्पूज्यैः कृतः । तस्मिन्महोत्सवे निधानप्रुनेपशौनिधि-महानिधि-  
साध्वीद्वयस्य च दीक्षा प्रदत्ता ।

ततः श्रीभीमपह्लीसमुदायाभ्यर्चनया श्रीपूज्याः श्रीभीमपह्ल्यां समायाताः । तत्र च सं० १३७१ फाल्गुनशुक्ल-  
कादश्यां श्रीमत्पूज्यैः साधुराजश्यामलप्रमुखश्रीभीमपह्लीसमुदायकारितः श्रीअमारिवोपणावारितसत्रसंपूजासाधार्मिक-  
वात्सल्यादिनानाविधप्रोत्सर्षणापूर्वकं सकलजनमनोहारी व्रतग्रहणमालारोपणादिनन्दिमहामहोत्सवः कृतः । तस्मिन्महो-  
त्सवे त्रिभुवनकीर्तिमुनेः, प्रियधर्मा-आज्ञालक्ष्मी-धर्मलक्ष्मीसाध्वीनां च दीक्षा प्रदत्ता ।

८५. ततः श्रीपूज्यपादाः श्रीजावालपुरीयसमुदायगाढतराभ्यर्चनया श्रीजावालपुरे विहृताः । तत्र च सं०  
१३७१ ज्येष्ठशुद्धिदशम्यां सं० भोजराज-देवसिंहप्रमुखसकलश्रीजावालपुरीयसमुदायकारितः सकलस्वपक्ष-परपक्षचेतश्च-  
मत्कारकारी समस्तजनमनोहारी दीक्षामालारोपणादिनन्दिमहामहोत्सवः श्रीपूज्यैः कृतः । तस्मिन् महोत्सवे देवेन्द्रदत्त-  
मुनि-पुण्यदत्तमुनि-ज्ञानदत्त-चारुदत्तहृनीनां पुण्यलक्ष्मी-ज्ञानलक्ष्मी-कमललक्ष्मी-मतिश्रीसाध्वीनां च दीक्षा  
प्रदत्ता । ततो म्लेच्छकृतो भङ्गः श्रीजावालपुरे जातः । ततः श्रीपूज्याः श्रीशम्यानपन-श्रीरुणापुरी-श्रीवच्चेरकादि-  
नानास्थानवास्तव्यसकलसमुदायिनां समाधानशुत्पाद्य श्रीरुणातः श्रीश्रीमालकुलोत्तंसैः श्रीजिनशासनप्रभावकैः सकल-  
साधार्मिकव्रतसैः साधुमानलपुत्ररत्नैः सा०माहा-सा०धान्ध्रुप्रमुखभ्रातृभिः सह सकलसपादलक्षणगरागमवास्तव्यसम-  
स्तसुश्रावकशकटशतत्रयमेलापकेन श्रीपूज्यपादैः श्रीफलवधिकार्यां सकलातिशयनिधानस्य म्लेच्छव्याकुलसकलसपाद-  
लक्षणनपदक्षारसमुद्रामृतकूपतुल्यस्य श्रीपार्थनाथस्य प्रथमो यात्रामहामहोत्सवश्चक्रे । तस्मिन् यात्रामहोत्सवे श्रीवि-  
धिसंघसुश्रावकैः श्रीद्वन्द्वपादिनानापदग्रहण-अवारितसत्र-श्रीसाधार्मिकवात्सल्य-श्रीसंघपूजादिनानाविधश्रीजिनशास-  
नप्रोत्सर्षणापूर्वकमेयं सौवस्वापतेयं सफली चक्रे । पश्चाच्छ्रीनागपुरसमुदायाभ्यर्चनया श्रीपूज्या नागपुरे विहृताः ।

ततः श्रीलोहदेव-सा०लक्षण-सा० हरिपालप्रमुखश्रीउच्चापुरीयविधिसमुदायानुचाराभ्यर्चनया नानाम्लेच्छसंकुले  
महामिथ्यात्वबहुले श्रीसिन्धुमण्डले महाश्रीमत्सौं प्रवर्तमाने दुर्गममरुस्थल्यां सौवज्ञानघ्यानवलशालिभिः श्रीमेघकु-  
भारदेवकृतसान्निध्यैर्षुगाप्रवरागमश्रीजिनचन्द्रस्वरिभित्तेकस्तुसाधुरिहृतैः श्रीधर्मकल्पद्रुमारोपणाय विहारश्चक्रे । तत-  
स्तदेशालङ्कारे श्रीउच्चापुरीप्रत्यासन्ने श्रीदेवराजपुरे श्रीउच्चापुरीयविधिसमुदायकृतप्रवेगकोत्सवाः श्रीपूज्या महामिथ्या-  
त्वरान्योत्पाटनायावस्थिताः । तत्र च सकलसिन्धुमण्डलसुश्रावकगाढतराभ्यर्चनया सं० १३७३ वर्षे मार्गशीर्ष-  
शुद्धिचतुर्थ्यां श्रीआचार्यपदस्थापनाव्रतग्रहणमालारोपणादिमहामहोत्सवाः सकलाज्ञानिलोकसम्यक्त्वोपार्जनहेतवः  
श्रीपूज्यपादैः प्रारब्धाः । पश्चान्महोत्सवदिनेपरि आरम्भसिद्धिरात्रौ ज्ञानघ्यानातिशयसंस्मारितश्रीजिनदत्तस्वरियुग-  
प्रवरागदैः श्रीपूज्यैश्चतुर्मासीमध्येऽपि गुरुतराजविहारेण संजायमानशून्यजनपदेषु तस्करादिनानोपद्रवबहुलेष्वपि  
मार्गेषु सौवज्ञानातिशयवलेन कुशलं परिभाष्य, स... धीसल-महणसिंहसुश्रावकौ श्रीदेवराजपुराच्छ्रीगूर्जरामुद्रकल्पे

श्रीपत्तने श्रीविवेकसमुद्रमहोपाध्यायानां पार्श्वे लक्षण-तर्क-साहित्यालङ्कार-ज्योतिष्क-स्वसमय-परसमयसारनिष्कनिष्कणनिकपोपमे समग्राचार्यगुणालङ्कृतमात्रस्य स्वशिष्यरत्नस्य पण्डितराजराजचन्द्रस्य समाकारणाय प्रेषितौ । ततः श्रीउपाध्यायैः सहृद्वदिशानुसारेण ताम्सां सह पुण्यकीर्तिगणि दत्त्वा पं० राजचन्द्रमुनिः प्रेषितः । ततः श्रीमत्पूज्य-गुरुतरध्यानबलाकर्षिताधिष्ठायककृतसाम्निध्यात् तस्कराद्यनेकोपद्रवानवगणय्य कार्तिकचतुर्मासिकदिने स्वदीक्षागुरु-श्रीपूज्यपादपद्ममहातीर्थं पं० राजचन्द्रमुनिना नमस्कृतम् । ततश्च श्रीमत्पूज्यैः श्रीउचापुरीय-श्रीमरुकोट-श्रीक्यासपुर-प्रमुखसिन्धुदेशनानगरग्रामवास्तव्यासंख्यशुभावकसंघमहामेलोपकेन स्थाने स्थाने प्रेक्षणीयेषु संजायमानेषु, दीयमानेषु तालारासेषु, नृत्यमानेषु युवतीजनेषु, पापकृमानेषु वन्दि.....पु दीयमानेषु, श्रे०उदयपाल-श्रे०गोपाल-सा०चरसिंह-ठ०कुमरसिंहप्रमुखमहाद्विकसुश्रावकलोकैः स्वर्णान्नवस्नदानेषु क्रियमाणेषु अवारितसत्रेषु संजायमानेषु साधर्मिकवात्सल्येषु श्रीआचार्यपदस्यापना-व्रतग्रहण-भालारोपणादिनिन्दिमहामहोत्सवश्रेके । तस्मिन् महोत्सवे स्वशिष्यरत्नस्य समग्रविद्यावृद्धिपानकुम्भापिसमानस्य वाक्चातुरीविनिर्जितसुराचार्यस्य पण्डितराजचन्द्रमुनिवरस्य आचार्यपदं प्रदत्तम्-श्रीराजेन्द्रचन्द्राचार्या इति नामधेयं च कृतम् । ललितप्रभ-नरेन्द्रप्रभ-धर्मप्रभ-पुण्यप्रभ-अमरप्रभसाधूनां दीक्षा प्रदत्ता । अनेकश्रावकश्राविकालोकैर्माला गृहीता, सम्यक्चारोपसामायिकारोपश्च कृतः । तस्मिन् महोत्सवे सापुराजयशोधवल-कुलप्रदीपेन सा०नेमिकुमारपुत्ररत्नेन श्रीजिनशासनप्रभावकेण सकलसाधर्मिकवत्सलेन सा०चरसिंहसुश्रावकेण विशेषतः श्रीसाधर्मिकवात्सल्यवारितसत्रामारिवोपणाश्रीसंघपूजानिर्माणपूर्वकं स्वस्वाप्तयेयं सफलीचक्रे ।

८६. ततः पुनः सं० १३७४ फाल्गुनवदि पट्टीदिने श्रीउचापुरीयादिनानगरग्रामवास्तव्यसकलसिन्धुदेशविधिसमुदायकारितः श्रीपूज्यैर्व्रतग्रहणमालारोपणोत्थापनादिनिन्दिमहामहोत्सवः सकलस्वपक्ष-परपक्षचैतथमत्कारकारी कृतः । तस्मिन् महोत्सवे दर्शनहित-श्रुवनहित-त्रिभुवनहितमुनीनां दीक्षा प्रदत्ता, श्राविकाशतेन च माला गृहीता । एवं श्रीदेवराजपुरे महामिथ्यात्वतिमिरं चतुर्मासीद्वयेनोन्मूल्य श्रीपूज्याः [सा ?]री० पूर्णचन्द्रस्तुत्रोदारचरित्रश्रीजिनशासनप्रभावक सारी० हरिपालसार्थवाहसाम्निध्येन मत्स्यलवालुकसमुद्रमुल्लङ्घ्य श्रीनागपुरे श्रीसमुदायकृतगुरुतर-प्रवेशकमहोत्सवाः समायाताः । ततः श्रीकन्यानयनवास्तव्यश्रीश्रीमालकुलोत्तंसश्रीजिनशासनप्रभावक सा०कालासुश्रावककारिता श्रीकन्यानयनादिसमग्रवागडदेश-सपादलक्षदेश-नगरग्रामवास्तव्यनानासुश्रावकमहासंघमेलोपकेन श्रीफलवर्धिकायां श्रीपार्श्वनाथदेवस्य श्रीपूज्यैर्द्वितीयवारं यात्रा कृता । महाद्विकसुश्रावकलोकैरवारितसत्रसाधर्मिकवात्सल्यश्रीसंघपूजानिर्माणपूर्वकं श्रीजिनशासने महती प्रभावना चक्रे ।

ततः सं० १३७५ माघशुक्लद्वादश्यां श्रीनागपुरे मन्त्रिदलकुलोत्तंस-ठ०विजयसिंह-ठ०सेह-सा०रूदाप्रमुख-श्रीयोगिनीपुरसमुदायसंघपुरुषमन्त्रिदलीय-ठ०अचलप्रमुखसमग्रडालामरुसमुदाय-श्रीकन्यानयन-श्रीआसिका-धीनरभटप्रमुखनानगरग्रामवास्तव्य-समस्तवागडदेशसमुदाय-मं०कुमर-मं०भूधराजप्रमुखकोशवाणासमुदाय-नानानगरग्रामवास्तव्यसमप्रसपादलक्षसमुदाय-सा०सुभटप्रमुखश्रीजावालपुर-श्रीशम्भानयनप्रमुखमारुवत्रासमुदायादिनानाजनपद-प्रचुरसमुदायमहामेलोपके स्थाने स्थाने संजायमानेष्ववारितसत्रेषु, कार्यमाणेषु महाप्रेक्षणीयेषु, नृत्यमानेषु युवतीजनेषु, दीयमानेषु तालारासेषु, क्रियमाणेषु साधर्मिकवात्सल्येषु, दीयमानेषु महामहद्विकसुश्रावकलोकैः कनककटकहूपकटकवस्नदानेषु, श्रीवर्धमानस्वामितीर्थप्रवर्तनपरायणैः श्रीपूज्यैः श्रीनागपुरीयसमुदायाभ्यर्धनया स्वपक्ष-परपक्षासंख्यजनमनोहारी सकलमहामिथ्यादृश्लोकमत्तकावधूननकारी श्रीव्रतग्रहणमालारोपणादिनिन्दिमहामहोत्सवश्रेके । तस्मिन् महोत्सवे सोमचन्द्रसाधोः शीलसृष्टि-दुर्लभसृष्टि-श्रुवनमृष्टिसाध्वीनां दीक्षा प्रदत्ता । पं०जगच्चन्द्राणोः सर्वविद्याविलासिनीनाट्यनाट्योपाध्यायकल्पस नानाशिष्यरत्ननिष्पादनलब्धिसमुद्रस्य द्विधा स्वसन्तान-जस्य परिभाषितसपट्टलक्ष्मीयोग्यस्य तस्य पण्डितराजङ्गलकीर्तिगणेश वाचनाचार्यपदम् । धर्ममालागणिनी-पुण्य-

येन कारितः । ततश्चौरचरटाद्युपाद्युतेऽपि मागे मण० दुर्लभसाहाय्यात् श्रीभीमपृष्ठ्याः समाजम् । ततः श्रीपत्नीयश्रीकोट्टिकाश्रीशान्तिनाथविधिचैत्ये श्रीश्रावकपौषधशालासन्निवेशनप्रमुखश्रीधर्मकृत्यपेशलसा० जेसलप्रभृतिश्रीसमुदायाभ्यर्चनया श्रीपत्ने श्रीशान्तिनाथदेवं नमस्कृतवन्तः । ततः श्रीस्तम्भतीर्थीयिकोत्प्लिकाश्रीअजितनाथदेवविधिचैत्यालयश्रीश्रावकपौषधशालाप्रमुखसद्वर्त्मकृत्यकुशलेन सा० जेसलेन सामान्यमाणाः श्रीश्रीरीपके श्रीपार्धनाथदेवं नमस्कृत्य सा० जेसलकारितेन स्वपक्षपरपक्षचमत्कारकेणासुकृतमन्त्रीधरश्रीवस्तुपालकारितश्रीजिनेधरछरिमहाप्रवेशकमहोत्सवेन श्रीस्तम्भतीर्थे श्रीपृज्याः श्रीअजितनाथदेवं नमश्चक्रुः ।

८३. ततः सं० १३६६ ज्येष्ठ वदि १२, नानावदागव्रातसद्भूतसर्वपूर्वजकुलेन सार्धमिकवत्सलेन सा० जेसलश्रावकेण मेलितेन श्रीपत्नीय-श्रीभीमपृष्ठीय-श्रीशाहडमेरवीय-श्रीशम्भानयनीयसमस्तसंधमेलापकेन स्वकीयवृहद्भ्रातृ सा० तोलियनिवेशितसंधपुर्पदेन लघुभ्रातृ सा० लासुनिवेशितपच्छेवाणपदेन विपमदुःपमाकालेऽप्यतुच्छम्लेच्छसंकुलेऽपि देशे श्रीस्तम्भतीर्थाच्छ्रीदेवालयप्रचलनमहोत्सवो विहितः । तेन सह श्रीमत्पृज्या जयवह्मभगणि-हेमतिलकगण्यादि-साध्वेकादशकेन प्र० रत्नद्युतिगणिन्यादिसाध्वीपञ्चदशकेन च वरियस्यमानाः श्रीमहातीर्थनमस्करणाय प्रस्थिताः । ततः स्थाने स्थाने चैत्यपरम्परासु चैत्यपरिपाठ्याद्यनेकमहोत्सवेषु श्रीसंधेन क्रियमाणेषु, नानाविधतृपेषु वाद्यमानेष्वनेकश्रावक(श्राविका?) लोकेन श्रीमद्देवगुरुगणेषु गीयमानेषु, मृदुघट्टैः स्वकीयनव्यकाव्येषु पठ्यमानेषु, क्रमक्रमेण पीपलाउलीग्रामे सर्वोऽपि संघः समायातः । तत्र च श्रीशत्रुञ्जयमहातीर्थपर्यंतावलोकमहोत्सवः श्रीसंधेन कृतः । ततोऽपारसंसारपारावारनिमज्जन्तुजातप्रवहणायमाननिःशेषदेशगतजन्तुजातपृज्यमानश्रीशत्रुञ्जयमहातीर्थालङ्कारश्रीदेवाधिदेवश्रीयुगादिदेवपादपन्नमस्करणायाश्राहर्षप्रकर्षपादुर्भूताङ्कुरप्रपवित्रितैः श्रीचतुर्विधसंधपरिवृतैः श्रीपृज्यैर्विहिता । तत्र च सा० सलखणपुत्ररत्न सा० मोकलसिंहादिसुश्रावकैः श्रीइन्द्रपदादिमहोत्सवाः सविस्तरा विहिताः । तत्र च ज्येष्ठशुक्लद्वादश्यां मालारोपणादिनन्दिमहोत्सवः सविस्तरः श्रीसमुदायेन कारितः ।

ततः सुराप्तालङ्कारश्रीगिरिनारसंस्थितश्रीनेमिनाथमहातीर्थनमस्करणाय चतुर्विधसंधपरिवृताः श्रीपृज्याः प्रस्थिताः । नेदीयोगच्छदतुच्छम्लेच्छकटकोपट्टनेऽपि सुराप्त्रदेशे जगन्नाथश्रीनेमिनाथप्रसादाच्छ्रीअम्बिकासावित्र्याच्छ्रीमत्पृज्याज्ञानवलाच सुखंसुखेन श्रीउजयन्ततलहड्डिकायां सर्वोऽपि संघः प्राप्तः । ततः श्रीनेमिनाथकल्याणकत्रयपवित्रितश्रीउजयन्तमहापर्यंतराजालङ्कारभ्राट्मोथरसौभाग्यसुन्दरनेमिनाथपादवचमहातीर्थे श्रीपृज्याः सकलसंधसमन्विता नमश्चक्रुः । तत्र च सा० कुलचन्द्रकुलप्रदीप सा० वीजडप्रमुखसकलसुश्रावकैः श्रीइन्द्रपदादिप्रोत्सवपणा विहिता । ततः श्रीनेमिनाथदेवं नमस्कृत्य, स्थाने स्थाने नानाप्रभावनां विधाय, श्रीपृज्याः श्रीसंधसमन्विताः श्रीस्तम्भतीर्थे समायाताः । तत्र च सा० जेसलश्रावकेण श्रीदेवालयस्य श्रीमत्पृज्यानां च महता विस्तरेण प्रवेशकमहोत्सवश्चक्रुः । तत्र च चतुर्मासीं विधाय श्रीस्तम्भनकालङ्कारश्रीपार्धनाथदेवतीर्थे मन्त्रिदलीप ठ० भरहपालसुश्रावकसाहाय्याच्छ्रीमत्पृज्या वयन्दिरे ।

८४. ततः श्रीबीजापुरे श्रीवासुपृज्यदेवं नमस्कृतवन्तः । तत्र च सं० १३६७ माघकृष्णनवम्यां श्रीमहावीरप्रमुखशैलमयादिविम्बानां प्रतिष्ठा श्रीमत्पृज्यैर्महता विस्तरेण कृता, मालारोपणादिनन्दिमहोत्सवश्च जज्ञे । ततः श्रीभीमपृष्ठीय-श्रीसमुदायाभ्यर्चनया श्रीमहावीरदेवं नमस्कृतवन्तः । तत्र च सं० १३६७ फाल्गुनशुक्लप्रतिपदि, सकलश्रीभीमपृष्ठीय-श्रीपत्नीय-श्रीप्रह्लादनपुरीयसमस्तश्रीसमुदायमेलापके नानाविधपुण्याकदानादिप्रभावनापुरस्सरं शुद्धकत्रयं धुष्टिकाद्वयं च श्रीपृज्याश्चक्रुः । तन्नामानि च परमकीर्त्ति-वरकीर्त्ति-रामकीर्त्ति-पद्मश्री-व्रतश्रीरिति । तस्मिन्नेव च दिने मालारोपणादिनन्दिमहोत्सवः सविस्तरः श्रीसमुदायेन कारितः । पं०सोमसुन्दरगणेशचानाचार्यपदं दत्तम् ।

तस्मिन्नेव वत्सरे सा०क्षेमन्धर-सा०पद्मा-सा०साठलकुलावत्सेन निजमुजोपाजितचारुकमलाकेलिनवासेन कुङ्कुमपत्रिकादिना दानसन्मानपूर्वकविहितश्रीपत्तन-श्रीप्रह्लादनपुर-श्रीजावालिपुर-श्रीशम्यानयन-श्रीजेसलमेरु-श्रीराणुकोट्ट-श्रीनागपुर-श्रीरुणा-श्रीवीजापुर-श्रीसत्यपुर-श्रीश्रीमाल-श्रीरत्नपुरादिप्रभूतश्रावकसंधमेलापकेन निष्प्रतिमपुण्यपथशालिना स्वैर्यगाम्भीर्यादिगुणगणमालिना सचीर्थयात्रापवित्रगात्रसा०धनपालनन्दनेन श्रीभीमपल्लीपुरीवास्तव्येन राजमान्येन सद्धर्मकर्मकुशलैः सुश्रावकसाधुसामलेन श्रीतीर्थयात्रा प्रारम्भि । तस्य च सकलसमुदायसहितस्य गाढाभ्यर्थनया प्रचुर-म्लेच्छसंकुलेऽपि जनपदेऽविचलसुधवसुश्राविकाभिर्गीयमानेषु धवलमङ्गलेषु, दीयमानसु चचरीषु, पठत्सु भट्टपट्टेषु, वाद्यमानेषु प्रवरतृपेषु, महतोत्साहेन श्रीवर्धमानस्वामिजनतोत्सवपवित्रितायां चैत्रशुक्लत्रयोदश्यां नानातिशयशालिनः श्रीचतुर्विधसंधसहिताः श्रीजगत्पूज्याः श्रीपूज्याः श्रीदेवालयेन सह श्रीभीमपल्लीतः प्रास्थिपत । ततश्च पदे पदे शुभ-शकुनैः प्रेर्यमाणाः श्रीशङ्खेश्वरे महाप्रभावभवेन श्रीपार्थनाथजिनं महता विस्तरेण नमस्कृतवन्तः । तत्र च समस्तसंधेन दिनाष्टकं श्रीपार्थनाथमहातीर्थं महानमोत्सवो व्यचयि । ततः पाटलाग्रामे श्रीनेमिनाथतीर्थं चिरकालीनं नमस्कृत्य श्रीराजशेखराचार्य-जयवह्मभगण्यादिसाधुषोडशक-प्र० बुद्धिसमृद्धिगणिन्यादिसाध्वीपञ्चदशकपरिभ्रुताः सकलप्राग्भार-धोर्येषु साधुसामलेन, भण० नरसिंहपुत्रासा-दुर्लभादिबान्धवव्यस्तसंघरक्षाभारेण भण०पूर्णपुत्ररत्नेन, वर्यौदार्यशालिना भण० लूणाकेन पाश्चात्यपदनिर्वाहिणा समस्तविधिसंधेन च कलिताः, प्रतिपुरं प्रतिग्रामं निःशङ्कं गीतनृत्यवाद्यादिना जिनशासनप्रोत्सर्पणायां विजृम्भमाणायां क्रमक्रमेण सुखंसुखेन श्रीशुभ्रजालङ्कारत्रैलोक्यसारसमस्ततीर्थपरम्परापरिभ्रुतं प्रविहितसुरासुरनरेन्द्रसेधं श्रीनाभेयदेवम्, श्रीउज्जयन्ताचलशिखरमण्डनं समस्तदुरितखण्डनं सौभाग्य-कमलानिधानं यदुकुलप्रधानं करुणाकत्रयादिनानातीर्थावलिविराजमानं श्रीअरिष्टनमिस्वामिनं च नूतनस्तुतिस्तोत्रविधानपूर्वकं परमाभावनया सकलसंधसहिताः श्रीपूज्या महता विस्तरेणावन्दिपत । तत्र च श्रीजावालिपुरवास्तव्यमहा-जनप्रधानगुणनिधान सा० देवसीहसुत-सा०थालगनन्दनाभ्यां निजकुलमण्डनाभ्यां सा० कुलचन्द्र-सा० देदासुश्रावकाम्यां द्वयोरपि महातीर्थयोः प्रचुरस्वापतेयसफलीकरणेन श्रीन्द्रपदमङ्गीकृतम् । गोष्टिकवस्रोधवलपुत्ररत्नेन गोष्टिक-शिरपालेन प्रभूतद्रव्येण श्रीउज्जयन्ते श्रीअम्बिकादेव्या माला गृहीता । अन्यैरपि श्रावकपुङ्गवैः सा० श्रीचन्द्रपुत्र सा० जाह्ण-सा० चाहडपुत्र सा० क्षाञ्जण-सा० ऊधरण-नवलक्षकनेमिचन्द्र-धे०पूना-सा० तिहुणा-भा०पदमपु०भउणा-सा० महणसीह-सा० भीमापु० लूणसीहादिभिः श्रीतीर्थपूजा-संधपूजा-साधमिकवात्सल्यावारितसत्रादिषु, अमेयस्वस्वा-पतेयसफलीकरणेन महत् पुण्यानुबन्धिपुण्यं समुपाजितम् । एवं च विपमकालेऽपि लोकोत्तरधर्मनिधानेन वरेण्यपुण्य-प्रधानेन श्रीविधिसंधेन सज्जनचित्तहारिणी सर्वजनचमत्कारकारिणी श्रीतीर्थयात्रा विहिता निर्विघ्नम् । समस्ततीर्था-चली महत्या प्रभावनया वन्दित्वा सा०सामलादिसंधसहिताः सपरिवाराः श्रीजिनचन्द्रशर्यः क्षेमेण अपाठचतुर्मासके श्रीवायडग्रामे जीवितस्वामिकां श्रीमहावीरप्रतिमां निष्प्रतिमां महाविस्तरेण नमस्कृतुः । ततः श्रावणप्रथमपक्षे नृत्य-न्तीषु धर्मभाविकासु श्राविकासु, गायन्तीषु नागराङ्गनासु, स्थाने स्थाने विधीयमानेषु प्रेक्षणीयेषु, पठत्सु वन्दित्वादेषु, श्रावकजनैर्दीयमानेषु महादानेषु, सकलसंधसहितानां लोकोचरातिशयशालिनां श्रीजिनचन्द्रशरीणां श्रीविधिसमुदायेन महाविस्तरेण महत्या प्रभावनया श्रीभीमपल्ल्यां प्रवेशमहोत्सवः कारितः । संपागतेन श्रीदेवगुर्वाजात्रपितालोचतेन श्रीसाधमिकवत्सलेन भण० लूणासुश्रावकेण श्रीपूज्यपादान्ते श्रीसंधपाश्चात्यपदप्राग्भारनिर्वाहणमहाप्रभावनाकरणममु-पाजितं पुण्यं सर्वं स्वमातृदैनशीलतपोभावनोद्यताया भण०धेनीसुश्राविकायाः प्रदत्तम् । तया च श्रद्धानपरयाऽ-नुमोदितम् ।

.....न्यां श्रीभीमपल्लीसमुदायकारितमहामहोत्सवेन प्रतापकीर्त्यादिशुल्लभयोत्थापना शुल्लकद्वयं च पूज्यैर्व्यचयि । तन्नामानि तरुणकीर्तिस्तेजःकीर्तिः, साष्टयोश्च व्रतधर्मा दृढधर्मैति । तस्मिन्नेव दिने ठ० हांमिउपुत्रस ठ०

सुन्दरीगणिन्योः प्रवर्तनीपदं च प्रदत्तम् । ततश्च ठ० विजयसिंह-ठ० सेहू-ठ० अचलप्रमुखसमप्रसंघशकटाधमहामे-  
लापकेन श्रीफलवर्षिकायां श्रीपार्श्वनाथस्य श्रीपृथ्वैस्तृतीयवारं यात्रा कृता । तत्र च जिनशासनप्रभावनाकरणप्रवणेन  
सर्वसाधार्मिकवत्सलेन मन्त्रिदलकुलोचंसेन ठ० सेहूसुश्रावकेण जैथलमहस्रद्वादशप्रदानपूर्वकमिन्द्रपदग्रहणेन, अन्यैः  
सुश्रावकलोकेरमात्यादिपदग्रहणेन अवारितस्रसंधपूजासाधार्मिकवात्सल्यस्वर्णरजतकटकवस्त्रादिदानैश्च श्रीजिनशासने  
महती प्रभावना चक्रे । श्रीपार्श्वनाथदेवभाण्डागारे च जैथलसहस्र ३० समुत्पन्नाः । ततः पुनः श्रीपूज्याः श्रीसं-  
घेन सह नागपुरे समायाताः ।

८७. ततः सं० १ ३७५ वैशाखवद्यष्टम्यां नानावदातव्रातसमुद्भूतसर्वपूर्वजकुलेन निजभुजोपाजितचारुकमलाकैलिनिवा-  
सेन मन्त्रिदलकुलोचंसेन-ठ० प्रतापसिंहपुत्ररत्नेन श्रीजिनशासनप्रभावनाकरणचतुरेण सकलसाधार्मिकवत्सलेन नि-  
प्रतिमपुष्पपण्यालिना स्यैर्यौदार्यगाम्भीर्यादिगुणगणमालिना सकलराज्यमानेन ठक्कुरराजअचलसुश्रावकेण प्रतापा-  
क्रान्तभूतलपातसाहिश्रीकृतवदीनसुजायपुरमाणं निष्कास्य कुङ्कुमपात्रिकदानसन्मानादिपूर्वं श्रीनागपुर-श्रीरुणा-श्री-  
कोसवाणा-श्रीमेडता-कडुयारी-श्रीनवहा-कुञ्जणू-नरभट-श्रीकन्यानयन-श्रीआसिका-झरे [?] रोहद-श्रीयोगिनी-  
पुर-धामइना-यमुनापारनानास्थानवास्तव्यप्रभूतसुश्रावकमहामेलापकेन प्रारम्भिते श्रीहस्तिनागपुर-श्रीमथुरामहातीर्थ-  
यात्रोत्सवं श्रीवज्रस्वामि-श्रीआर्यसुहृत्सिद्धिस्त्रिवत्सर्वातिशयशालिने जगत्पूज्याः श्रीमत्पूज्या जयवल्लभगणि-पं० पद्म-  
कीर्तिगणि-पं० अमृतचन्द्रगण्यादिसाध्वष्टक-श्रीजयद्विमहचराप्रमुखापत्नी..... श्रीचतुर्विधसंघसहिताः प्रचुम्ब्लेच्छ-  
वलीसंकुलेऽपि जनपदे अविधयसुधवाभिः सुश्राविकाभिर्गायमानेषु धवलमङ्गलेषु, दीयमानानु चघरीषु, पठन्तु नाना-  
विधेवन्दिबृन्देषु, वाद्यमानेषु द्वादशविधनान्दीर्घेषु, श्रीदेवालयेन सह श्रीनागपुरात् प्रचलिताः । ततश्च पदे पदे शुभ-  
शङ्कनैः प्रेर्यमाणाः सकलसंघकार्यप्रारंभारधुराधौरेयेण निरुपमदानविरस्कृताशेषकल्पद्रुमेण ठ० अचलसुश्रावकेण, श्री-  
श्रीमालकुलोचंसेने श्रीदेवगुप्तज्ञाचिन्तामणिविभूषितमस्तकेन अङ्गीकृताशेषसंघप्राशाल्यपदप्राम्गारेण सा० सुरराजपुत्र-  
रत्नेन साधुराजरुद्रपालसुश्रावकेण समस्तसंघेन च कलिताः, प्रतिपुरं प्रतिग्रामं निःशङ्कं गीतनृत्यवाद्यादिना श्रीजिन-  
चैत्येषु चैत्यप्र(परि)पाटीकरणपूर्वं श्रीजिनशासनप्रोत्सर्पणायां विनृम्भमणायानां क्रमक्रमेण श्रीनरभटे श्रीजिनदक्षरि-  
प्रतिष्ठितं नवफणमण्डितं समग्रातिशयनिधानश्रीपार्श्वनाथमहातीर्थं श्रीसमुद्रायकारितासमप्रवेशकमहोरसवाः श्रीपूज्या  
नमश्चक्रुः ।

ततश्च श्रीनरभटसमुद्रायेन श्रीचतुर्विधसंघसमन्वितानां श्रीपूज्यानां श्रीसंघपूजादिनिर्माणेन महती प्रभावना चक्रे ।  
ततः स्थानात् पुनः श्रीचतुर्विधसंघश्रीदेवालयसमन्विताः श्रीपूज्याः ममप्रवागडदेगुनगरग्रामवालाव्यपसुश्रावकलोक-  
मनोरथमालां परिपूरयन्ते महतीरसाहेन श्रीकन्यानयने श्रीजिनदक्षरिप्रतिष्ठितं सकलतीर्थसुकृत्कल्पं स्तानिशाधिर्न  
श्रीवर्षमानस्वामिर्न नमश्चक्रुः । मेहर-पद्म-सा० कालाप्रभुगुश्रीकन्यानयनसमुद्रायेन मरुल्लेच्छसंकुलेऽपि नगरे दिन्दु-  
कवारकवत् स्थाने स्थाने तंजायमानेषु प्रेयणीषु, श्रीदेवालयश्रीमंथममन्वितानां श्रीपूज्यापदानां प्रवेशकमहोत्सवर-  
णपूर्वकं श्रीसंघपूजामाधार्मिकवात्सल्यनिर्माणपूर्वकं च श्रीमहावीर्गनीधिं मयमवान्तरेणाजितवापाकदमलापहारिणी महतीं  
प्रभावना चक्रे । तत्र च श्रीसंघेन श्रीवर्षमानस्वाम्यप्र दिनाष्टकं गुरुनगेन्नाहपूर्वकमटाहिक्रिमहामहोत्सवश्चक्रुः ।

८८. ततः स्थानात् ममप्रयमुनापार-यागडदेगुसुश्रावकयन्तुङ्गमशतचतुष्टय-शकटागतपञ्चक-शृणुमशतममकार्त-  
रूपलोकमहामेलापकेन वाद्यमानानु टोह्यपरम्परानु, मांगेषु स्थाने स्थाने दीयमानानु चघरीषु, वाद्यमानेवहर्निधं द्वादश-  
विधनान्दीर्घेषु, असंख्यम्लेच्छाधपरम्परानुगम्यमानः, ठ० जयनपाल-ठ० विजयसिंह-ठ० सेहू-ठ० कुमरपाल-ठ०  
देवसिंहप्रमुखसनानामन्त्रिदलीप-सुश्रावक-ठ० मोजा-श्रेष्ठि-पद्म-सा० काला-ठ० देपाल-ठ० पूर्ण-श्रेष्ठि-महणा-ठ० गनू-सा०  
दृणा-ठ० फेरुपमुखानेकश्रीश्रीमालीपु-सुश्रावकश्रेष्ठि-पूनाड-सा० कुम्भरपाल-मं० मेहा-मं० वीन्हा-सा० तान्हा-सा० मं०

हिराजप्रमुखऊकेशवंशीयासंख्यसुश्रावकपरम्परैकवितानः श्रीचक्रवर्तिमहासैन्यसमानः, चास्त्रोष्णीभिर्धमुनामहानदी-  
सुचीर्य क्रमक्रमेण निःशङ्कं मन्दमन्दप्रयाणकैः श्रीशान्तिनाथ-श्रीकुन्धुनाथ-श्रीअरनाथतीर्थङ्करचक्रवर्तिनां गर्भाव-  
तार-जन्म-दीक्षा-ज्ञानकल्याणकचतुष्टयपवित्रितवसुन्धरं हस्तिनापुरं चक्रवर्त्तिसमानश्रीमत्पूज्य-सेनानीसमानठ०  
अचल-पाश्चात्यपदनिर्वाहक-सा०रुदपालालंकृतः श्रीचतुर्विधोऽपि संघः सम्प्राप्तः ।

८९. ततश्च श्रीमत्पूज्यैः श्रीचतुर्विधसंघसमन्वितैर्नूतनकृतस्तुतिस्रोत्रनमस्कारभजनपूर्वं श्रीशान्तिनाथ-कुन्धुनाथा-  
रनाथदेवानां भवभवोपाजितपापपङ्कोच्चारिणी यात्रा चक्रे । श्रीसंघेन च श्रीइन्द्रपदादिग्रहणावारितसत्र-सार्धार्थिकवात्स-  
ल्य-श्रीसंघपूजानिर्मापण-हेमरजतकटकतुम्बरवस्त्रवितरणपूर्वकं कलिकाले प्रवर्तमानेऽपि श्रीकृतयुगवच्च्रीवीरशासने  
स्वपक्ष-परपक्षचेतश्चमत्कारकारिणी महती प्रभावना चक्रे । तत्र च ठ०हरिराजपुत्ररत्नेनोदारचरित्रेण श्रीदेवगुर्वाञ्जाचि-  
न्तामणिविभूषितमस्तकेन ठ०मदनानुजेन ठ०देवसिंहसुश्रावकेण जैथलसहस्रविंशत्येन्द्रपदं गृहीतम् । ठ०हरिराजदि-  
महद्विकसुश्रावकैरमात्वादियुगानि गृहीतानि । सर्वसंख्यया देवभाण्डागारे जैथललक्ष १ सहस्र ५० समुत्पन्नाः । तत्र च  
दिनपञ्चकं श्रीजिनशासनप्रोत्सर्षणां विधाय श्रीहस्तिनागपुरात् सर्वोऽपि संघः श्रीमथुरामहातीर्थोपरि प्रचलितः सन्  
स्थाने स्थाने प्रोत्सर्षणां विदधानः श्रीयोगिनीपुरप्रत्यासन्ने तिलपथस्थाने समायतः । अत्रान्तरे द्रमकपुरीयाचार्येण  
युगप्रवरागमश्रीजिनचन्द्रसूरीणामतिशयमसहिष्णुना दुर्जनस्वभावेन खर्णच्छत्रधरणसिंहासनेपवेशनादिकं पै[शु]न्यं  
महाराजाधिराजपातसाहिकुतवदीनाग्रे कृतम् । ततश्च म्लेच्छस्वभावेन पातसाहिना समग्रोऽपि संघस्तत्राग्रहे कारितः ।  
श्रीपूज्याः सपरिवाराः संघपुरुष-ठ०अचलादिमहद्विकसुश्रावकसमन्विताः स्वपार्थे समाकारिताः । ततश्च श्रीमत्पूज्य-  
मुखकमलावलोकेनादेव न्यायिमहोदयिना प्रतापाक्रान्तसमग्रभूतलेन श्रीअलावदीनसुरत्राणपुत्ररत्नेन श्रीकुतवदीनसुरत्रा-  
णेन कथितम्-‘एतेषां श्वेताम्बराणां मध्ये दुर्जनोक्तं वाक्यं न किमपि जावटीति’ । पश्चाद् दीपानाग्रे आदिष्टम्-‘एतेषां  
कर्णवारं सम्यगालोच्य येऽन्यायिनो भवन्ति ते शिक्षणीयाः’-इत्युक्त्वा श्रीपूज्यादीपाने प्रेषिताः । ततश्च प्रधाना-  
धिकारिपुरुषैः सम्यङ्न्यायान्यायं परिभाष्य द्रमकपुरीयाचार्यो नष्टोऽपि सन् निष्कासयित्वा राजद्वारे ऊर्ध्वकृतः ।  
पश्चादालापितः सन् किमपि सत्यमब्रुवत् । श्रीपूज्यानामग्र एव राजद्वारे लक्षसंख्यम्लेच्छ-हिन्दुकप्रत्यक्षं यष्टि-मुष्टि-  
लकुटादिग्रहणैः कुट्टयित्वा विगोपयित्वा च वन्दी कृतः । श्रीपूज्यानामग्रे कथितम्-‘युष्माभिः सत्यभाषिभिर्न्यायै-  
कमहोदयिभिः सत्यश्वेताम्बरैः पातसाहिमेदिन्यां परिश्रमणं स्वेच्छया करणीयम्, अत्रार्थे शङ्का काऽपि न कार्या’ ।  
पश्चाच्च्रीपूज्यैः साधुराजतेजपाल-साधुराजखेतसिंह-ठ०अचला-ठ०पेरुणामग्र आदिष्टम्-‘वयमितः स्वानात् पातसा-  
हिमेपिता अपि तदैव व्रजिष्यामो यदाऽस्य द्रमकपुरीयाचार्यस्य दुर्जनस्वभावस्यापि मोचनं विधास्यथाम्’ । यतः श्री-  
वर्धमानशिष्येण श्रीधर्मदासगणिनोपदेशमालायामुक्तमस्ति-

जो चंदणेण बाहुं आलिप्पइ वासिणाइ तच्छेइ ।

संयुणइ जोवि निदइ महरिसिणो तत्थ समभावा ॥

[८१]

अन्यशास्त्रेष्वुक्तमस्ति-

शशौ मित्रे तृणे त्रैणे स्वर्णेऽहमनि मणौ मृदि ।

मोक्षे भवे च सर्वत्र निःस्पृहो मुनिपुद्गवः ॥

[८२]

इति श्रीपूज्यानां शुभमित्रसमष्टीनां समतृणमणिलोपुत्काञ्चनानां कल्याणमष्टद्राणां गाढवरं मोचनाभिप्रायं  
विज्ञाप सर्वोऽपि राजलोको नगरलोकश्च भक्तकानधूननपूर्वकं श्रीपूज्यानां गुणग्रहणरूपरायणो जग्रे । ततः श्रीपूज्या  
.....सातेजपालादिभिः कारणिकपुरुषान् सम्बोध्य स द्रमकपुरीयाचार्यो मोचयित्वा स्वपथशालायां प्रेषितः ।

पक्षाच्छ्रीपूज्या अश्वपतिवहुमानिता महाम्लेच्छराजलोकनगरलोक-सा० तेजपाल-सा० खेतसिंह-सा० ईश्वर-ठ० अचलप्रभु-  
खासंख्यसुश्रावकलोकानुगम्यमाना गुरुतरप्रभावनापूर्वकं पा(खां)डासरायस्थाने समायाताः । अस्मिन् प्रस्तावे श्रीपूज्यानां  
समग्रसंधय च श्रीजिनशासनप्रभावकैः सकलराजमान्यैः सर्वकार्यनिर्वाहणसमर्थैः सकलसंधाधारैः श्रीश्रीमालकुली-  
चंसैः सा० तेजपाल-सा० खेतसिंह-सा० ईश्वरसुश्रावकैः सकलसंधपुत्रधरुणोदारचरित्रेण चतुर्दिक्षु विख्यातेन मन्त्रि-  
दलकुलोत्तरेण ठ० अचलसुश्रावकेण ठ० श्रीवत्सपुत्रराजसमन्वितेन च भयं साहाय्यं कृतम् । अत्रान्तरे चतुर्मासी  
लम्बा । ततः श्रीपूज्याः संधविसर्जनं विधाय ठ० अचलादिभिः सुश्रावकैर्वरिवस्वमानाः खण्डकसराजौ चतुर्मासीं चक्रुः ।

अत्रान्तरे पुनः श्रीमत्पूज्यैः श्रीसुरव्राणकधनेन श्रीसंधानुरोधेन च 'रायाभियोगेण गणाभियोगेण' मित्या-  
दिसिद्धान्तवचनमनुसरद्भिश्चतुर्मासीमध्येऽपि श्रावणमासे संघभारनिर्वाहक-ठ० अचल-पाश्चात्यपदनिर्वाहकसा० रुद-  
पालादिसमप्रवागडदेशसुश्रावकसंधमहाभेलापकेन श्रीमथुरायां श्रीसुपार्श्व-श्रीपार्श्व-श्रीमहावीरतीर्थकराणां महता  
विस्तरेण यात्रा कृता । श्रीसंधेन च अवारितसत्रश्रीसाधर्मिकवात्सल्यादिभिर्महती प्रभावना चके । ततः पुनः श्रीयोगि-  
नीपुरे समागत्य पा(खां)डासरायस्थाने श्रीपूज्यैः श्रेया चतुर्मासी चके । श्रीजिनचन्द्रस्वरिस्तूपे च वारद्वयं सविस्तार  
यात्रा कृता ।

९०. ततश्चतुर्मास्यनन्तरं श्रीमत्पूज्यैः शरीरे कम्परोगेण सावाधितैः सौवज्ञानध्यानबलेन स्वायुः श्रेयं परिभाष्य स्वह-  
स्तदीक्षितस्य द्विधास्वस्तान्तानप्रभवस्य स्वपट्टलक्ष्मीपाणिग्रहणयोग्यलक्षणस्य तर्क-साहित्यालङ्कार-ज्योतिष्कारविचार-  
चतुरस्य स्वसमय-परसमयान्मोधितारणतरण्डस्य स्वशिप्परत्नस्य वा० कुडलकीर्तिपणेः स्वपट्टस्थापनस्वपरिभाषितनामका-  
रापणादिसर्वशिक्षासमन्वितचिष्टिकागोलकः श्रीराजेन्द्रचन्द्राणां निमित्तं विश्वासपात्रश्रीदिवगुर्वाज्ञानिरत-ठ० विजयसिं-  
हहस्ते समर्प्य चाहुमानकुलोत्तंसगरणामगतयज्ञपञ्चराणकश्रीमालदेवेन गाढतरोपरोधेन समामन्त्र्यमाणैः श्रीयोगि-  
नीपुराच्छ्रीमेडतास्थानकोपरि विहारश्चक । ततो मागे धामइना-रोहदप्रमुखनानास्थानसुश्रावकलोकान् चन्दापयन्तः  
श्रीकन्यानयने श्रीमहावीरदेवं नमश्चक्रुः । तत्रागतेः श्रीमत्पूज्यपादैः तापश्वासदिना घनवरमावाधितैः श्रीकन्या-  
नयनीयसमुदायप्रत्यक्षं चतुर्विधसंधमिथ्यादुष्कृतदानपूर्वकं पुनः सर्वशिक्षासमन्वितो हरेरो विश्वासपात्रप्रवर्तकजप-  
बलभगणिहस्ते श्रीराजेन्द्रचन्द्राचार्याणां निमित्तं प्रदत्तः । ततो मासमेकं श्रीकन्यानयनीयसमुदायस्य समाधानमु-  
त्पाद्य श्रीनरमटादिनानास्थानसुश्रावकलोकान् चन्दापयन्तः श्रीमेडतास्थाने समायाताः । तत्रापि राणकश्रीमालदे-  
वाभ्यर्चनया श्रीसमुदायसमाधानाय च चतुर्विधसिद्धिदानानि स्वित्वा स्वनिर्वाणयोग्यं स्थानं परिभाष्य श्रीकेशवाणा-  
स्थाने श्रीपूज्याः समायाताः । तत्रागतेः श्रीमत्पूज्यैः सं० १३७६ आषाढशुक्लनवमीरात्रिप्रथमसार्धग्रहरे... शुभशुभपिठि  
..... श्रीचतुर्विधसंधमिथ्यादुष्कृतदानमदनकलाङ्कितहस्तकर्मलः अलिता(१)नशनई-  
स्तिमल्लैः स्वर्गलक्ष्मीपाणिग्रहणं चके ।

ततः श्रीसमुदायेन श्रीवर्धमानस्वामिनिर्वाणसमयशिविक्रान्तमानगुरुतमासंख्यमण्डपिकाशोभितविमाननिर्भा-  
षपूर्वकं वाद्यमानेषु द्वादशविधनान्दीर्घेषु, उच्छाल्यमानेषु नालिकेतादिकलमूहेषु, अविधयसुधवाभिः श्राविकाशि-  
र्गीपमानेषु पूर्वमहर्षिगीतेषु, प्रभातसमये नगरलोक-राजलोकमहामेलापकेन निर्वाणमहामहोत्सवः सविस्तरमश्चके ।

ज्योतिर्लक्षणतर्कमन्त्रसमपालङ्कारविद्यासमा,  
दुःशीला वनिता इवात्रभुवने वाञ्छन्ति हातुच्छताम् ॥

[८३]

पङ्कापहारनिखिले महीतले गर्मिनिर्जरतरलितैः । ।  
विधाय घेऽस्तं गताः श्रीस्वर्गं ये\*.....॥

[८४]

ये तु रीनेपुत्रनिचतवयं मुक्तं मा हृत्पाकुलं (१),  
सद्यस्तत्पथगामिभिः सहचरैः सौराज्यसौभिक्ष्यकैः ।

स्थास्यामोऽपनयः(१) कथं वयमिति ज्ञात्वेव चिन्तातुरैः,  
प्रातः श्रीजिनचन्द्रसूरिगुरवः स्वर्गस्थिता मङ्गलम् ॥

[८५]

भान्यं भूचलये क्षयं कलिपतेर्दुर्भिक्षसेनापते-  
ज्ञात्वा तन्मथनोद्यताः सुरगुरुं प्रष्टुं सखायं निजम् ।

मन्ये नाशिकमन्त्रधारणयुताभावात् पत्रादृष्टता (१),  
राजानो जिनचन्द्रसूरय इति स्वर्गं गता दैवतः ॥

[८६]

पश्चान्मन्त्रीश्वरदेवराजपौत्रेण मं० माणचन्द्रपुत्ररत्नेनोदारचरित्रेण मं० मून्धराजसुश्रावकेण तस्मिन् स्थाने श्रीम-  
न्पूज्यपादुकासमन्वितं स्तूपं कारितम् ।

----- \*

९१. ततश्चतुर्मास्यनन्तरं जयवह्मभगणिः श्रीपूज्यप्रदत्तं सर्वशिक्षासमन्वितं लेखं गृहीत्वा श्रीभीमपल्लवां श्रीराजेन्द्र-  
चन्द्राचार्याणामन्तिके समायातः । ततः श्रीमदाचार्यां जयवह्मभगणिप्रमुखसाधुसमन्विताः श्रीपत्ने विहृताः । तत्र च  
विपमकाले महादुर्मिक्षे प्रवर्तमानेऽपि खजानाप्यानवलेन श्रीचतुर्विधस्य संघस्य कुशलं परि...सिद्धिरामावदातैर्निजगुरु-  
श्रीमत्पूज्यादेशप्रतिपालननिमित्तैः श्रीराजेन्द्राचार्यवर्यैः सं० १३७७ ज्येष्ठार्द्रिकादश्यां कुम्भलये श्रीमूलपदस्थापना-  
महोत्सवविनिश्चयथाकृत । पश्चाच्छ्रीश्रीचन्द्रकुलावतंसेन श्रीजिनशासनप्रभावनाकरणनिरतेनोदार्यविनिर्जित...सा०  
जाल्हरपुत्ररत्नेन साधुराजतेजपालसुश्रावकेण स्वभ्रातृसा० रुद्रपालपरिवृतेन मूलपदस्थापनामहोत्सवकाराणाय  
मारं श्रीमदाचार्याणां प्रसादादङ्गीकृत्य, चतुर्दिक्षु श्रीषोमिनीपुर-श्रीउचापुर-श्रीदेवगिरि-श्रीत्रिवरहृद-श्रीस्तम्भती-  
र्थीदीर्घाश्च समप्रजनपदनगरग्रामवास्तव्यसमप्रविधिमार्गसुश्रावकाणां तद्दिनोपरि समाकारणाय कुङ्कुमपत्रिकां दत्त्वा  
लेखवाहकाः प्रेषिताः । पश्चात् सर्वस्थानकविधिसमुदायाः प्रमुदितवदना अहमहमिकया महाविपमकाले प्रवर्तमानेऽपि  
'तद्दिनोपरि श्रीपत्ने समाजगमूः । ४० विजयसिंहोऽपि श्रीपूज्यप्रदत्तं मूलपदयोम्यश्लिष्यस्थापनशिक्षाचिष्टिका...कं गृही-  
त्वा श्रीषोमिनीपुरात् तद्दिनोपरि श्रीपत्ने समायातः । ततः सर्वस्थानकसमुदायसमागमनं ज्ञात्वा स्वप्रतिज्ञातार्थनिर्वाहणा-  
खनैचिभिः (१) श्रीराजेन्द्रचन्द्राचार्यैः श्रीजिनचन्द्रधरिर्मद्रञ्जवासमूलस्तम्भप्रायसकलविद्यापाठनाद् द्वितीयोपाध्या-  
यश्रीविवेकसमुद्रमहोपाध्याय-प्रवर्तकजयवह्मभगणि-हेमसेनगणि-वाचनाचार्यहेमभूषणगणिप्रमुरसुमाधुवयश्चिप्रन्ने-  
लापके श्रीजयद्विमहचरा-प्र० बुद्धिममृद्धिगणिनी-प्र० प्रियदर्शनागणिनीप्रमुससाध्वीत्रयोर्विशति-सर्वस्थानरुमवस-  
सुदायमहामेलापके च जयवह्मभगणिहस्त-श्रीमत्पूज्यस्वहस्तप्रदलेखः, ४० विजयसिंहहस्त-श्रीमत्पूज्यस्वह-  
स्तप्रदत्ता गोलक्रमप्यस्या चिष्टिका च याचिता । तदाकर्णनात् तदुपादेव चतुर्विधसंघोऽपि नवनिधानप्राप्तिसिद्धय-  
कष्टोलाभूतपूरितो नृत्यं कर्तुमारंभे । पश्चाच्छ्रीमदाचार्यरत्नलितनिजगुरुं प्राप्रतिपालनोद्यतैः सर्वातिशयशालिभिः श्रीच-

\* अत्र पुनः मूलादर्शे २४-२५ अक्षरमितः पङ्क्तिभागः धृत्यरूपेण मुक्तोऽस्ति ।

तुविधविधिसंघपरिद्धतैः साधुराजतेजपालप्रमुखनानास्थानसमुदायैरहमहमिकया स्थाने स्थाने कार्यमाणेषु प्रेक्षणीयेषु-  
दीयमानेषु स्वर्णरजतकटकतुरगवह्नानदानेषु, नानाविधकाव्यं परम्पराभिः पठत्तु बन्दिभृन्देषु, क्रियमाणेषु महद्विक-  
सुश्रावकलोकैः श्रीसाधर्मिकवात्सल्येषु, वाद्यमानेष्वहर्निशं द्वादशविधनान्दीर्घतुल्येषु, संजायमानासु संघपूजासु, स-  
र्वशिक्षासमन्वितश्रीपूज्यप्रदत्तगोलकचिष्टिकालेखातुसारेण सर्वलब्धिचितानसंस्मारितपूर्वागणधराणामुद्भूतभाग्यप्रताप-  
लङ्केश्वराणां स्वैर्यौदार्यगाम्भीर्यादिगुणावलीसमुपाविर्तहीराड्डहासराकाशशाङ्ककरनिकसोदरगोक्षीरधाराहारिहारप्रालेयो-  
ज्ज्वलदन्तिदन्तक्षोदसमानयशःकाचकूर्पूरपूरवासितविधवलयाणां स्वसहाध्यायिनां नवनाट्यरसावतारतात्कालिक-  
सम्पादितनवनवविच्छिचित्काव्यपरम्पराविस्मापिताशेषकोविदचक्राणां ज्ञानध्यानाविश्ययसंस्मारितकलपूर्वद्विरीणां निखि-  
लविद्यापारीणानां वाक्चातुरीविनिजितसुराचार्याणां मन्त्रीश्वरराजकुलप्रदीपमन्त्री ४० जेसलरत्नकुक्षिधारिणीमन्त्रिणी-  
जयतश्रीपुत्राणां चत्वारिंशद्वर्षप्रमाणानां समप्रयुगप्रवरागमकमलकैलिलियानां वाचनाचार्य.....श्रीशान्ति-  
नाथदेवाग्रे सकल..... श्रीगूर्जरत्रामुकुटकल्पनरसमुद्भूतश्रीपत्तनवास्तव्यनानामहद्विकस्रपक्ष-परपक्षमहाव्यावहारिका-  
संख्यलोकगुरुतरानेकराजलोकचेतथमत्कारकारी म्लेच्छबहुलेऽपि समग्रजनपदे श्रीश्रेणिक-श्रीसम्प्रति-श्रीकुमारपाल-  
महाराजाधिराजचारकवत् श्रीयुगप्रधानपदवीसंस्थापनमहामहोत्सवशक्रे । श्रीपूज्योपदिष्टश्रीजिनकुशलधरय इति नाम-  
निर्माणश्रीपूज्यदायितश्रीपूज्यसमवसरणप्रदानपूर्वकं श्रीयुगप्रवरागमश्रीजिनचन्द्रसूर्यादेशप्रासादोपरि महाकलशाधि-  
रोपथ चक्रे । तस्मिन् महोत्सवे सम्पूर्णाचिन्त्यमनोरथमालेनोदारचरित्रेण साधुराजतेजपालेन सर्वस्थानकवास्तव्यः श्रीच-  
तुविधसंघः समग्रोऽपि बहुप्रदानपूर्वं बहुमानितः । अनेकगच्छाश्रिताः शतसंख्या आचार्याः सहस्रसंख्याः साधवश्च  
वस्त्रादिप्रदानेन रैलिकचित्ताः कृताः । समस्तवाचकाचार्याऽपि सम्पूरितमनोरथः कृतः । साधुराजसामलपुत्ररत्नेन  
सर्वसाधर्मिकवत्सलेन श्रीभीमपल्लीसमुदायमुकुटकल्पेन पुरुषसिंहेन साधुराजवीरदेवसुश्रावकेण, श्रीभीमालकुलोच-  
स-सा० वज्रलपुत्ररत्नसाधुराजसिंहेन, मन्त्रिदलकुलोचसेन राजमान्येन श्रीदेवगुर्वाज्ञाचिन्तामणिविभूषितमस्तकेन ४०-  
विजयसिंह-४० जैत्रसिंह-४० कुमरसिंह-४० जवनपाल-४० पाहाप्रमुखश्रीमन्त्रिदलीयसमुदायेन, साधुराजसुभटपुत्र-  
रत्न-सा० मोहण-मं० धनु-ज्ञांकाप्रमुखश्रीजावालपुरीय-सा० गुणधरप्रमुखश्रीपत्तनीय-साहु० तिरुणाप्रमुखश्रीवीजा-  
पुरीय-४० पडमसिंहप्रमुखश्रीआशापल्लीय-गो० जैत्रसिंहप्रमुखश्रीस्तम्भतीर्थीयसमुदायैश्च श्रीसंघपूजा-श्रीसाधर्मि-  
कवात्सल्यवारितसत्रनिर्माणपूर्वकममेयं स्वस्वापतेयं सफलीचक्रे । तस्मिन्नेव दिने श्रीमालारोपणादिनन्दिमहामहो-  
त्सवः श्रीपूज्यैश्चक्रे । ततः श्रीसमुदायेन श्रीशान्तिनाथदेवाग्रे युगप्रधानश्रीजिनकुशलधरिपड्निवेशनसंस्तवनायं गुरु-  
तरोत्साहपूर्वकमष्टाष्टाहिकाः कृताः ।

१२. तदनन्तरं श्रीपूज्याः श्रीजिनकुशलधरयः प्राप्तयुगप्रधानराज्या महामिथ्यात्वशूचाटनाय दिग्विजयं कर्तुकामाः  
साधुवीरदेवसुश्रावककारितगुरुतरप्रवेशकमहोत्सवाः श्रीभीमपल्ल्यां प्रथमां चतुर्मासां चक्रुः । ततश्च सं० १३७८ माघ-  
शुक्लतृतीयायां साधुवीरदेवप्रमुखसकलश्रीभीमपल्लीसमुदायेन श्रीपत्तनीयसमुदायमहामेलापकेन सकलजनमनश्चमत्कार-  
कारी दीक्षोत्थापना-मालारोपणादिनन्दिमहामहोत्सवः श्रीसाधर्मिकजात्यल्यश्रीसंघपूजादिनानाप्रभावनपूर्वकं कारितः ।  
तस्मिन् महोत्सवे श्रीराजेन्द्रचन्द्राचार्यवर्षेण भाला गृहीता, देवप्रभमुनेर्दीक्षा दत्ता, वाचनाचार्यहेमभूषणगणैः श्रीअभि-  
पेकपदम्, वं० मुनिचन्द्रगणेशाचर्यापदं प्रदत्तम् । तस्मिन्नेव च वर्षे स्वप्रतिज्ञावार्थप्रतिपालनप्रवर्षिणः श्रीपूज्यैः  
स्वज्ञानध्यानभेदेन सकलगच्छाच्छवास्तव्यसमुद्यतानां श्रीविवेकसमुद्रोपाध्यायराजानामायुःश्रेयं विज्ञाय श्रीभीम-  
पल्लीतः श्रीपत्तने समागत्य ज्येष्ठपक्षचतुर्दशीदिन आरोग्यशरीराणामपि श्रीविवेकसमुद्रमहोपाध्यायानां चतुर्विध-  
संघेन सह मिथ्यादुष्कृतदानं दापयित्वा, गुरुतरश्रद्धानपूर्वकमनश्चनं प्रत्याख्यानं च दत्तम् । तदनन्तरं च श्रीपूज्यपा-

वारविन्दं ध्यायन्तः श्रीपञ्चपरमेष्ठिनमस्कारमहामन्त्रं स्मरन्तो नानाविधाराधनामृतपानं कुर्वन्तः श्रीसमुदायकृतप्रोत्स-  
र्पणाः स्वकर्णाभ्यां श्रीउपाध्याया आकर्णयन्तो ज्येष्ठमुदिद्वितीयायां सकलामरगुरुजनयर्थं स्वर्गं प्राप्ताः । पश्चाच्छ्री-  
पत्नीयसमुदायेन गुरुतरविमाननिर्माणपूर्वकसकलजनमनश्चमत्कारकारी निर्वाणमहामहोत्सवः कृतः ।

तदनन्तरं च श्रीपूज्यैः स्वकीयसुगुरुश्रीजिनचन्द्रसूरिस्वसहाध्यायिश्रीराजेन्द्राचार्य-श्रीदिवाकराचार्य-श्रीराज-  
शेखराचार्य-वा० राजदर्शनगणि-वा० सर्वराजाद्यनेकमुनिमण्डलीपाठकानां वारत्रयं भणितश्रीहैमव्याकरणपृहृष्टुचि-  
पद्विंशत्सहस्रप्रमाणश्रीन्यायमहातर्कादिसर्वशास्त्राणां सकलगच्छगौरवाणां श्रीविवेकसमुद्रोपाध्यायानां स्तूपं श्रीसमु-  
दायपार्श्वार्थं कारापयित्वा अपाढशुक्लत्रयोदश्यां महता विस्तरेण वासक्षेपः कृतः । ततः श्रीपत्नीयसमुदायाभ्यर्थनया  
श्रीपत्नें द्वितीया चतुर्मासी कृता ।

९३. ततः सं० १३७९ वर्षे मार्गशीर्षवदिपञ्चम्यां नानानगरप्रामवास्तव्यासंख्यमहाद्विकसुश्रावकलोकमहामेलापकेन  
श्रीसार्धमिकवत्सलेन श्रीजिनशासनप्रोत्सर्पणाप्रवीणेनोदारचरित्रेण दक्षदाक्षिण्यौदार्यधैर्यगाम्भीर्यादिगुणगणमालालङ्क-  
तसारेण युगप्रवरागमश्रीजिनप्रबोधसूरिसुगुरुवज्रसाधुराजजह्णगुणरत्नेन स्वभ्रातृ-सा०रुद्रपालकलितेन साधुराजतेज-  
पालसुश्रावकेण दिनदशकादारभ्य संजायमानेषु महाप्रेक्षणीयेषु, दीयमानेषु तालारासेषु, नृत्यमानेष्वचलाष्टन्देषु, दीय-  
मानेष्वभेयस्वस्वापतेषु, क्रियमाणेषु श्रीसंघपूजाश्रीसार्धमिकवात्सल्यावारितसत्रेषु, सकलगूर्जरत्रामुक्कटभूतश्रीपत्नीय-  
महामहद्विकमहाजानलोक-राजलोकमहामेलापकेन महिष्ठजलयात्रापूर्वकं गुरुतरार्थ्यकारी स्वपक्ष-परपक्षचेतोहारी प्रति-  
ष्ठासहामहोत्सवः श्रीशान्तिनाथविधिचैत्ये कारितः । तस्मिन्नेव दिने श्रीशत्रुञ्जयतीर्थोपरि साधुराजतेजपालादिसमुदाय-  
कारितिश्रीयुगादिदेवविधिचैत्यप्रारम्भः सा०नरसिंहपुत्ररत्नश्रीदेवगुणज्ञाप्रतिपालनोद्यतखीवडसुश्रावकोद्यमेन संजातः ।  
तस्मिन् महोत्सवे श्रीशान्तिनाथप्रमुखश्रीजैलमय-रत्नमय-पिचलामयविव्मनां सार्धशतं स्वकीयं मूलसमवमरणद्वयं  
श्रीजिनचन्द्रसूरि-श्रीजिनरत्नसूरिप्रमुखनानाधिष्ठायिकानां मूर्त्तयश्च श्रीपूज्यैः प्रतिष्ठिताः । तस्मिन् महोत्सवे श्रीभीमप-  
ष्टीसमुदायमुक्कटकल्पेन सा० श्यामलपुत्ररत्नेनोदारचरित्रेण साधुवीरदेवेन श्रीपत्नीय-श्रीभीमपष्टीय-श्रीआशापष्टी-  
यसमुदायेन श्रीसंघपूजा श्रीसार्धमिकवात्सल्यैः साधुसहजपालपुत्रसा० थिरचन्द्र-सा०धीणापुत्रसा० खेतसिंहप्रमुखश्रा-  
वकैः श्रीद्वन्द्वपदादिमहामहोत्सवनिर्माणदिना महती प्रभावना चक्रे । ततः श्रीवीजापुरीयसमुदायाभ्यर्थनया श्रीपूज्याः  
श्रीवीजापुरीयसमुदायेन सह श्रीवीजापुरे सकललोकाध्यर्षकारकगुरुतरप्रवेद्यकमहामहोत्सवपूर्वकं श्रीवासुपूज्यदेवमहा-  
तीर्थं नमश्कृतः । ततः श्रीवीजापुरीयसमुदायेन सह श्रीत्रिशङ्कमके विहताः । तत्र च साधुराजजेसलपुत्रसाम्यां श्री-  
जिनशासनप्रभावकाभ्यां-साधुराजजगधर-साधुसलक्षणसुश्रावकाभ्यां सकलजनमनश्चमत्कारकार्यनेकसहस्रसंख्यलोकम-  
हामेलापकेन प्रवेद्यकमहामहोत्सवः कारितः । ततः स्थानाच्छ्रीआरासणमहातीर्थे श्रीवारङ्कमहातीर्थे श्रीवीजापुरीयश्री-  
त्रिशङ्कमीयसमुदायेन सह मन्त्रिदलकुलोत्तंसश्रीदेवगुणज्ञाप्रतिपालनोद्यत-ठ० आसपालपुत्ररत्न-ठ० जगत्सिंहसुश्राव-  
कप्रमुखश्रीसार्धमिकवात्सल्यश्रीसंघपूजां श्रीश्रावितसत्रमहाध्वजारोपादिनानाविधोत्सर्पणापूर्वकं तीर्थयात्रां कृत्वा  
श्रीपत्नें तृतीयां चतुर्मासी चकृतः ।

तदनन्तरं सं० १३८० वर्षे कार्तिकशुक्लचतुर्दश्यां श्रीजिनशासनप्रभावनाकरणप्रवीणेन स्वपूर्वजमरुशलीकल्प-  
पृथुसाधुराजयशोधयलयत्साधर्मिकवत्सलेन निर्गर्वचूडामणिना साधुश्रीचन्द्रकुलप्रदीपश्रीजिनप्रबोधसूरिसुगुरुचक्रव-  
र्त्त्यनुजसाधुजाह्णगुणरत्नेन युगप्रवरागमश्रीजिनकुशलसूरिसुगुरुराजपञ्चाभिषेककारापणोपाजितदीपादृहासहारतुपादिम-  
करकरनिकरगोधीरधराधवलवदुपण्यशःप्रामारेण साधुराजतेजपालसुश्रावकेण स्वानुजमाधुद्रुद्रपालपरिवृतेन श्रीगुण-  
ज्ञानिष्पद्यमानविधिचैत्यपोष्यमूलनायकश्रीयुगादिदेवविम्बं सप्तविंशत्युलप्रमाणं कर्ष्ममट्टं कारयित्वा, मकलस्थान-  
नावास्तव्यसर्वसमुदायान् कुक्ष्यपत्रिकादानपूर्वकं समाभ्यन्ध, क्रियमाणेष्वचवारितसत्रेषु, दीयमानेष्वभेयेषु स्वस्वापतेषु,

गीयमानेषु प्रहर्निशमविधयसु धुवाभिर्नारीमी रासम्बुन्देषु, नृत्यमानेषु खेलरुममूहेषु, सम्पद्यमानेषु श्रीताधर्मिकगात्स-  
ल्येषु, समग्रश्रीपचनीयमहामहद्विकल्पवहारिकलोकैः राजलोकमहामेलापकेन गुरुतरजलपात्रानिर्माणपूर्वकं सकलजनम-  
नथमत्कारकारी नानाभजोपाजितपापसंभारापहारी प्रतिष्ठासहामहोत्सवः सविस्तरतरः कारितः । तस्मिन् महोत्सवे साधु-  
तेजपालकारितश्रीयुगादिदेवप्रमुखानेकशैलमय पिचलामयविम्बानां श्रीजिनप्रबोधसरि-श्रीजिनचन्द्रसरिभूर्त्तीनां श्री-  
कपर्दयक्ष-श्रीश्वेतपालाम्बिकाधमिष्ठायाफिकानां नानासुधावककारितानां प्रतिष्ठा संजाता । श्रीशत्रुञ्जयप्रासादयोग्यद-  
ण्डध्वजप्रतिष्ठा च । तस्मिन् महोत्सवे सा०धीणाधुवरत्नसा०खेतसिंहादिसुश्रावकैरिन्द्रपद-श्रीयुगादिदेवमुखोद्घाट-  
नादिमालाग्रहणपूर्वकमेयं स्वस्वापतेयं सफलीकृतम् । मार्गशीर्षवदिपध्यां च सविस्तरतरः श्रीमालारोपण-श्रीसम्प-  
चजारोप-सामायिकारोप-परिग्रहपरिमाणानिन्दिमहामहोत्सवश्च कृतः ।

९४. तदनन्तरं सं० १३८० श्रीयोगिनीपुरवास्तव्येन श्रीश्रीमालकुलोत्तसेन गङ्गाम्बुप्रवाहनतुल्यच्छाशयेन श्रीजिनशा-  
सनप्रभावनाकरणप्रवीणेन पूर्वं कृतसविस्तरतरश्रीकलवधिकाहतीर्थयात्रोत्सवेनोद्भटभाग्यप्रतापलङ्केश्वरेण दानाध-  
कृतमकलविश्वम्भरादावुर्वेण साधुहरपुत्रत्वेन साधुश्रीरयपतिसुधावकेण राजमान्यप्रभाकरुनिदेशविख्यातोद्भटचरि-  
त्रस्वपुत्रत्नसाधुराजधर्मसिंहपार्श्वत् पातसाहिश्रीग्यासदीनमहाराजाधिराजपुरमाणं सरुलमीरमलिकशिरोनपूननकारकं  
श्रीराजप्रधानश्रीनेत्रसाहाय्येन निष्कासयित्वा, श्रीपूज्याना श्रीपचनस्थिताना समीपे, श्रीशत्रुञ्जयोजयन्तादिमहातीर्थ-  
यात्रारणार्थं स्वविज्ञप्तिरूपादानपूर्वकं मानुषाणि प्रेषितानि ।

तदनन्तरं सकलातिशयनिधानेनानिध्यानादिगुणगणानुकृतसकलपूर्वयुगप्रधानैः श्रीपूज्यैः श्रीजिनकुशलसरिभिः  
सम्पक् परिभाष्य श्रीतीर्थयात्राकरणादेशः प्रदत्तः । तदारणनादेव हर्षाद्बुलचेतसा साधुश्रीरयपतिसुधावकेण प्रभाव-  
कोदारचरित्रपुत्रत्नसाधुमहणसिंह-साधुधर्मसिंह-साधुशिरराज-साधुअमयचन्द्र-पौत्रमीम्भ-भ्रातृसाधुजवणपालादि-  
सारपरिवारपरिवृत्तेन श्रीपूज्योपदिष्टनिधिना श्रीयोगिनीपुरसमुदायमुकुटरूपमभिदलबुलोत्तसेनाधुजणपाल-श्रीदेव-  
गुर्वाज्ञाप्रतिपालनोद्यतश्रीश्रीमालीयसाधुभोजा-सा०छीतम-ठ०केरु-धामइनावास्तव्य सा०रूपा-सा०वीजाप्रमुख-प-  
श्वउलीसा०क्षेमन्धरप्रमुख-श्रीलक्ष्मीवडीवास्तव्यसमुदायान् श्रीयोगिनीपुरप्रत्यासन्नानेरुग्रामसमुदायांश्च भेलयित्वा,  
स्वपुत्रत्नसाधुराजधर्मसिंहराजनेन अत्यसंजण(?) श्रीयोगिनीपुरराजमार्गेण वाद्यमानेषु द्वादशविधनान्दीर्घेषु, दीप-  
मानेषु रासकेषु, गीयमानेषु गीतेषु, पठसु श्रीसुररागादिमहाराजपन्दित्रन्देषु, दीयमानेषु कनकाक्षपट्टांशुक्रादिना-  
नविधेषु दानेषु, अश्वधिरूढराघसानन्दोलप्रम्परराधिरिकृताज्ञाचक्रेषु, प्रथमवैशाखवदिसप्तम्यां नूतनरूपेणप्रासाद-  
सदृशः श्रीदेवालयस्य चतुर्विधसंघसमन्वितस्य निष्क्रमणमहामहोत्सवः कृतः । तदनन्तर प्रथमदिनादारभ्य  
प्रतिदिनमवारितसत्रं दुराणो गुर्वाडम्बरेण साधुश्रीरयपतिसुधावकः समग्रसंचान्वितः श्रीरूपायनपने समायातः ।  
तत्र च श्रीयुगाप्रधानश्रीजिनदत्तसरिप्रतिष्ठितश्रीमहावीरदेवतीर्थराजस्य यात्रानिर्माणपूर्वकं समग्रम्लेच्छानामपि  
सम्पक्त्वदायिनी प्रभाषना कृता । ततः स्थानाच्च श्रीजिनशामनप्रभावकमवलोकितसधुराधुरीणश्रे०पूना-श्रे०  
पद्मा-श्रे०राजा-श्रे०रात-ठ०देपाल-साधुराजकाला-साराद(?)पूनाप्रमुखश्रीसमुदायो गुर्वाडम्बरेण मा०देदाप्रमुख-  
श्रीआमिकासमुदायः श्रीसंघेन सह प्रचलितः । तदनन्तर ग्रामनगरादिषु प्रोत्सर्पणा दुराणः सर्वोऽपि संघः श्रीनर-  
भटे समायातः । तत्र च श्रीजिनदत्तसरिप्रतिष्ठितं नवस्कटाविभूषितं सर्वविशयप्रधानं श्रीपार्श्वनाथदेवाधिदेवं नाना-  
विध ...पूर्वकं सरुलसंघेन नमश्चक्रे । ततः स्थानाच्च मा०भीमा-सा०देवराजादिममुदायः श्रीसंघेन सह प्रचलितः ।  
तदनन्तर सारुवास्तव्यसा०गोपालप्रमुखानानाधरग्रामवास्तव्यानेरुधाराः श्रीनरहा-इच्छानुवास्तव्यसा०काण्हाप्र-  
मुखविधिसमुदायादिश्रावकाश्च संघेन सह प्रस्थिताः । ततः पश्चात् श्रीजिनशामनप्रभाषना दुराणः सर्वसंघमन्वितः  
साधुश्रीरयपतिसुधावकः श्रीकलवधिकाया श्रीपार्श्वनाथदेवयात्रार्थं समायातः । तत्राऽऽगतं साधुश्रीरयपतिसंघममुद्रे

हुङ्गुमपत्रिकाप्रदानपूर्व पूर्वमाकारित श्रे०हरिपालपुत्ररत्न श्रे०गोपाल-सा०पासवीरपुत्र सा०नन्दन-सा०हेमलपुत्र सा० कट्टया-सा०पूर्णचन्द्रपुत्रप्रभावक सा०हरिपाल-सा०पेथड-सा०चाहड-सा०लाखण-सा०सीवा-सा०सामल-सा०कीक- टप्रमुत्तथ्रीउच्चकीय-सा०वस्तुपालप्रमुखश्रीदेवराजपुरीय-श्रीक्यासपुरवास्तव्य सा०मोहनप्रमुत्तसमुदाय-सा०ताहण- प्रमुत्तश्रीमरुकोट्टसमुदायादिसकलसिन्धुनगरग्रामसमुदायाः, सा०लखमसिंहप्रमुत्तश्रीनागपुरादिसपादलक्षसमुदायाः, सा० आंकाप्रमुखश्रीमेडतासमुदाय-मं०केल्हाप्रमुखश्रीकोसवाणासमुदाया नदीनां प्रवाहा इव अहमहमिकया प्रविष्टाः । ततः स्थानात् संघः सर्वोऽपि सा०भेळप्रमुखश्रीगुडहासमुदायमात्मना सह गृहीत्वा श्रीजावालिपुरे सकलराजलोकनगरलोक- स्त्रीममुदायकृतमहाप्रवेशकोत्सवः समायातः । तत्र च गुर्वाडम्बरेण सकलविपक्षहृदयकीलकानुकारिणी श्रीचैत्यप्रपा- व्यादिप्रभानना श्रीसंधेन कृता । ततः स्थानाच्च सा०महिराज-कोरण्टकवास्तव्यसा०गाङ्गाप्रमुत्तानेकस्वपक्षपरपक्षीयाः श्रमना यात्रार्थं संधेन सह प्रचलिताः । पश्चात् सर्वोऽपि संघः श्रीश्रीमाले श्रीशान्तिनाथदेवयात्राम्, श्रीभीमपल्ल्यां श्रीनाथडे च श्रीमहावीरदेवयात्रां च गुरुतरप्रभावनापूर्वं निर्माय, ज्येष्ठवदित्तुर्दश्यां श्रीगूजेरत्रामुकुटकल्पे प्रभूतम्ले- च्छव्यवहारिकममूहसंकुले श्रीपत्तने महाराजाधिराजसैन्यलीलां दधान अवाप्तितः । पश्चात् सकलस्वपक्ष-परपक्षाऽश्वर्यो- त्पादनपूर्वकं श्रीदशार्णभद्रमहाराजाधिराजवन्महर्ष्या महाभक्त्या च श्रीशान्तिनाथस्वावरतीर्थं युगप्रवरागमसुगुरुचक्र- वसिथ्रीजिनकुशलसरिचरणारविन्दं जङ्गमतीर्थं च सुवर्णानस्रष्टुटिनिर्माणपूर्वकं साधुराजश्रीरयपति-सा०महणमिहप्रमु- रानानास्थाननास्तव्यसर्वसमुदायैर्नमश्चक्रे । तदनन्तरं श्रीशान्तिनाथपुरतो महामहर्ष्याऽष्टाद्विकामहोत्सवं कुंराणिन श्री- संधेन श्रीपत्तनीयदेवालयेषु, अश्वधिरुडेयु वाद्यमानेषु ढोलेषु, दीयमानेष्वमेवेषु स्वस्वापतेषु, वमथमायमानेषु ढाद- शनिधनान्दीर्त्येषु, असंख्यलोकमहामेलाकेन सकलजनचेतश्चमत्कारकारिणी मिथ्यादशामप्युपवृद्धाद्वारेण श्रीमप्य- च्चोपार्जनदायिनी असहिष्णुलोकहृदयशल्यानुकारिणी सनिस्तरवा चैत्यप्रपाटी कृता ।

९५. तदनन्तरम्, सकलसंघमुकुटकल्पसंपरुरुपसाधुश्रीरयपति-सकलसंघभारनिर्वाहणप्रवीणसा०महणसिंह-श्रे० गोपाल-सा० जवणपाल-सा० काला-सा० हरिपालप्रमुत्तश्रीदेशान्तरीपसमुदायमुल्लयसुश्रानकैः, साधुराजजाहणकुल- प्रदीपमकलोत्तमवनिर्माणोपाजितप्रुण्यकदम्बकृमाधुराजतेजपाल-श्रीश्रीमालडुलोत्तमसाधुगजजल[ . . . ] वृत्तान- तंमरुमाधुश्रीरयपतिसंधाङ्गीकृतपाश्चात्यपदश्राग्भारनिरुपमनिर्वाहणोद्यतसाधुराजराजसिंह-साधुश्रीपतिप्रुगन्तमाधुडुल- चन्द्र-सा०धीगापुत्ररत्नसा० गोसलप्रमुत्तश्रीपत्तनीय-श्रीहम्मीरपत्तनीयसमुदायमुल्लयसुश्रानकैश्च त्यक्तागन्तार्गाम- त्याग्रीचाद्यन्यायालकृतगात्रप्रचण्डकलिकालभूपालभयारुम्पमानैः श्रीपूज्यश्रीजिनकुशलसरिधर्मचक्रान्द्रपादा विज्ञप्ताः पत्-स्वामिन् । प्रत्यासन्नायामपि वर्षायां समागतायाम्, सकलसंघोपरि महत्प्रसादं निधाय अनेकोपद्रव्यदि- महाभद्रवलिष्ठुष्टकलिकालमहीपालकृतपद्रुक्षणाय प्रमद्य तीर्थनिजययात्रायां पादानधारणं क्रियतां येनाम्नाकं मन- शिन्तिनार्थमप्यक्षयस्तक्षणादेव सम्पनीयघन्तः । पश्चाद् दक्षिण्यैरुमहोदधयः परोपकृतिरूपोपताहनिशुद्धयः श्रीप्रा- यंशुदग्निश्रि-श्रीयपरस्वामि-श्रीमदभयदेवश्रि-श्रीजिनदचश्रिप्रमुत्तानेरुयुगप्रवरागमावदातातुकार्यं वदाननिर्माणो- पाजितमत्कीर्त्तयः श्रीजिनकुशलप्रयः-

जो अचमद्गइ संघं पावो धोयं पि माणमपलित्तो ।

सो अण्णाणं षोलह दुवग्गमात्तामागरे भीमे ॥१॥

[७७]

• सिरिममणसंघआसापणाओ पायिदि जं दुहं जीवा ।

तं माहिंउं ममत्थो णइ परि भययं जणो षोह ॥२॥

[८८]

नित्थपणामं काउं कहेइ माहाग्गेण महेणं ।

मत्थेसि सरीणं जोयणनीहरिणा भययं ॥३॥

[८९]

तत्पुञ्जिष्या अरहया पूह्यपूया य विषायकम्मं च ।  
कयकिबोऽवि जह कह कहैइ नमए तथा तित्थं ॥४॥

[९०]

इत्यादिश्रीआवश्यकादिसिद्धान्तानुसारेण;

“यः संसारनिरासलालसमतिर्मुक्त्यर्थमुत्तिष्ठते,  
यं तीर्थं कथयन्ति पावनतया येनास्ति नान्यः समः ।  
यस्मै तीर्थपतिर्नमस्यति सतां यस्माच्छुभं जायते,  
स्फूर्तिर्यस्य परा वसन्ति च गुणा यस्मिन् स संघोऽर्च्यताम् ॥१॥ [९१]

लक्ष्मीस्तं स्वयमभ्युपैति रभसात् कीर्तिस्तमालिङ्गति,  
प्रीतिस्तं भजते मतिः प्रयतते तं लब्धुमुत्कण्ठया ।  
स्वःश्रीस्तं परिरञ्जुमिच्छति मुहुर्मुक्तिस्तमालोकते,  
यः संघं गुणसंघकेलिमदनं श्रेयोरुचिः सेवते ॥२॥” [९२]

इत्यादिपूर्वाचार्यवाक्यैश्च श्रीसंघः श्रीतीर्थकराणामपि मान्यः किमस्मादशामिति स्वचेतसि परिभाष्य, प्रत्या-  
सन्नभानिर्नी चतुर्मासीमप्यवगणय्य, श्रीसंघगाढतराग्रहं च ज्ञात्वा, श्रीपूज्याश्रक्रीन्द्रसमानाः प्रधानसाधुमसद-  
शसंसेव्यमानचरणारविन्दाः, श्रीजयद्विमहचराप्रमुख-पुण्यसुन्दरीगणिनीप्रमुखसाम्ब्येकौनविंशतिपरिवृताः, साधुश्री-  
रयपतिसुश्रावकं श्रीचतुर्विधसंघसंन्ये समग्रसंन्याधिपसेनानीसमानं विधाय, साधुराजसिंहं च संघसंन्यपाश्चात्यपद-  
प्राग्भारनिर्वाहणपदे निधाय, सा०महार्णसिंह-सा०जयणपाल-सा०भोजा-सा०काला-ठ०फेरु-ठ०देपाल-श्रे०गोपा-  
ल-साधुराजतेजपाल-साधुराजहरिपाल-मा०मोहण-मा०गोसलप्रमुखानेकमहद्विकसुश्रावकमहारथान् सज्जयित्वा श-  
कटपञ्चशती अश्व[ ]शतीसंरयसुभटपदातिवर्गप्रमाणेन श्रीसंघसंन्येन सह बाद्यमानेषु निःस्वानप्राग्नेषु अश्वाधिरू-  
ढेषु ढोह्लेषु, गुर्माडम्बरेण कलिकालभूषणनिर्जगार्थं स्वरुपसिद्ध्यर्थं च ज्येष्ठशुक्लपष्टीदिने शुभमुहूर्ते स्वगुरुश्रीजिन-  
चन्द्रखरिराजं ध्यायन्तः प्रचलिताः ।

तदनन्तरम्, प्रतिदिनं संजायमानेष्वनारितसत्रेषु, प्रतिपदं दीपमानेषु रासकेषु, श्रीसंघमैन्वोत्थितरजःपरम्परा-  
समाच्छादिताम्बरीशाङ्गणेषु, भविष्यत्शुद्धकानां दीपमानेषु प्रतिदिनं महर्द्धां पुष्पांरुदानेषु, सकलनगाग्रामा-  
धियमलिक-हिन्दुकादिसमग्रलोकसंसेव्यमानश्रीसंघसंन्याधिपे च श्रीशङ्खधरे श्रीपार्श्वनाथतीर्थराजे नमस्कृत्य, श्री-  
महापूजामहाध्वजारोपादिना प्रभाषनां निधाय, क्रमक्रमेण दण्डकारण्यप्रायं बालकदेशमतिव्रम्य, समग्रन्लेच्छाधिप-  
कृतसाहाय्याः श्रीपूज्या निरामधवृत्त्या सर्वसंघममन्विताः समग्राधिष्टायककृतमान्निष्पयः श्रीशुभुञ्जयतलहट्टिकायां  
प्राप्ताः ।

तत्र च श्रीपार्श्वनाथदेवपारां निधाय अपाडनदिष्टीदिने सकलतीर्थानुप्राधानं समातिशयनिधानं शुभुञ्जय-  
शैलालङ्कारायमाणं श्रीयुगादिदेवतीर्थराजं सफलसंघपरिवृताः श्रीमत्पूज्या नन्वालङ्कारमारनूतनकृतस्तुतिसौत्रन-  
मस्कारनिर्माणपूर्वकं नमस्कृतवन्तः । साधुश्रीरयपतिसुश्रावकेण पुत्रकलत्रपरिवृतेन प्रत्येकं प्रत्येकं नगद्विषु हेमटङ्कैः  
प्रथमा पूजा कृता कारिता च; अन्यैर्महद्विकसुश्रावकैश्च रूप्यटङ्कादिना पूजा कृता । तस्मिन्नेव च दिने श्रीयुगादिदेव-  
पुरतो देवमद्र-यशोभद्रशुद्धरुयोः सविस्तरतरो दीधामहामहोत्सवः कृतः ।

तदनन्तरम्, श्रीजिनशामनप्रभावनाकरणप्रगुणेन श्रीदेवगुर्जापतिपालनममुद्यतेन माधुश्रीरयपतिमहासंघ-  
पाश्चात्यपदप्राग्भारनिर्वाहणेनारिताहनिशाब्दानोपाजितपुण्ययशःप्राग्भारेण चतुर्विधमुत्थितशयातुशुभश्रीश्रेणिन्म-

हाराजाधिराजराज्यभारनिर्वाहणप्रवीणश्रीअभयकुमारेण श्रीसुराष्ट्रमहीमण्डलभूपालश्रीमहीपालदेवप्रतिशरीरकल्पसमग्र-  
संघकार्यनिर्वाहणप्रवीणप्रभावकसाधुराजमोखेदेवानुजपरिवृतेन श्रीमीमालकुलोत्तंसाधुञ्जलकुलप्रदीपेन साधुराजसिंह-  
सुश्रावकेण, वाद्यमानेषु द्वादशविधनान्दीतूयैषु, दीयमानेषु स्वर्णकटकवस्त्राधदानेषु, ध्रियमाणेषु मेघाडम्बरछत्रेषु,  
ढाल्यमानेषु चामरेषु, गीयमानेषु गीतेषु, संजायमानेषु श्रीसाधार्मिकवात्सल्येषु, निष्पाद्यमानेष्ववारितसत्रेषु, संपद्य-  
मानासु सविस्तरतरासु श्रीसंघपूजासु, साधुश्रीरयपतिप्रमुखमहासंघमेलापकेन आपाढाद्यसप्तम्यां जलयात्रानिर्माण-  
पूर्वकमष्टम्यां श्रीयुगादिदेवमूलचैत्ये स्वकारितश्रीनेमिनाथविश्वप्रमुखानेकविश्वानां स्वभाण्डागारयोग्यश्रीसमवस-  
रणस्य श्रीजिनपतिस्वरि-श्रीजिनेश्वरस्वरिप्रमुखगुरुमूर्त्तीनां च अनेकभवोपाजितपापविध्वंसकः स्वशिष्यलक्ष्मणपुरजित-  
पुगप्रवरागमश्रीजिनचन्द्रस्वरिभिः स्वर्गात् समागतैः कैश्चिच्छाद्वोत्तमैरवलोक्यमानैर्गवेष्यमाणः प्रतिष्ठामहामहोत्सवः  
समग्रलब्धिनिधानजङ्गमयुगप्रधानश्रीजिनकुशलस्वरिहस्तकमलेन कारितः । तस्मिन्नेव च दिने साधुराजजाह्नणकुलप्रदी-  
पायमानेन सर्वधर्मकृत्याराधनानुकृतश्रीवर्धमानपरमसुश्रावकाऽऽनन्द-कामदेवादिश्रावकवर्गेण संप्रीणिताशेषयाचकग-  
णेन साधुराजतेजपालसुश्रावकेण स्वानुजसांरुद्रपालसहितेन श्रीपत्तनप्रतिष्ठापितश्रीयुगादिदेवमूलनायकविश्वस्य श्री-  
समुदायसहितेन कारिते नूतननिष्पन्ने प्रासादे समग्रवैज्ञानिकवर्गं कुरुकहस्तशङ्खलिका-कम्बिका-पट्टांशुकादिवस्त्रसन्मान-  
दानपूर्वकं श्रीसम्प्रतिमहाराजाधिराजसमानसाधुश्रीरयपतिप्रमुखनानास्थानवास्तव्यसर्वश्रावकवितानमेलापकेन स्थापना  
प्रासादप्रतिष्ठा च श्रीवज्रसाम्यनुकारिश्रीपूज्यहस्तकमलेन कारिता । नवम्यां सविस्तरतरः श्रीमालारोपण-श्रीसम्प-  
ञ्चारोपण-श्रीपरिग्रहपरिमाण-मामापिकारोपनन्दिमहोत्सवः श्रीयुगादिदेवमूलचैत्य एव श्रीपूज्यैर्विहितः । तस्मिन् दिने  
सुखकीर्तिगोपेर्वाचनाचार्यपदं दत्तम्, सहस्रसंख्यश्रावकश्राविकाभिर्निन्द्यारोहणं च कृतम् । तस्मिन्नेव च दिने नूतन-  
निष्पन्ने प्रासादे सविस्तरतरो ध्वजारोपमहोत्सवः संजातः । एवं दिनदशकं यावच्छ्रीशुशुभ्रयशैलोपरि सदावारितसत्र-  
निर्माणपूर्वकं मूलचैत्य-स्वचैत्ययोः श्रीमहापूजाकरणपट्टांशुकादिनानावस्त्रैस्तकमहाध्वजादानस्वर्गाभ्रवस्त्रदानसम्पूरिता-  
शेषयाचकमन्तानेन्द्रपदादिविधानादयो महामहोत्सवाः श्रीमीमालकुलोत्तंसाधुराजहनुकुलप्रासादकुम्भायमानश्रीयो-  
गिनीपुरारोवाहनिशानानाविधवस्तुदानाधःकृतकल्पवृक्षसन्तानसाधुश्रीरयपति-साधुमहणसिंह-साधुराजतेजपाल-साधु-  
राजराजसिंहप्रमुखसकलसंघेनाहमहमिकया चक्रिरे । तस्मिन् महोत्सवे श्रीउद्यानगरीवास्तव्यरोहंढहेमलपुत्ररत्नेन सां-  
कड्यासुश्रावकेण भ्रातृपुत्रश्रीजिनशासनप्रभावकसां हरिपालसहितेन द्विवह्नुकरुद्रमशत २६७४ श्रीहृद्रपदं गृहीतम्,  
मश्रिपदं च सांघीणापुत्ररत्नेन साधुगोसलेन द्रम्मशतपदकेन गृहीतम् । अन्यान्यपि पदानिन्द्रपरिवारयोग्यानि  
प्रभूतश्रावकश्राविकाभिर्गृहीतानि । सर्वसंख्यया श्रीयुगादिदेवभाण्डागरे प्रतिष्ठामालोद्भूतन-श्रीहृद्रपदमहोत्सव-  
फलशुभपठनादिना द्रम्मसहस्र ५० समुत्पन्नाः ।

९६. तदनन्तरम्, श्रीपूज्याः सर्वसंघपरिवृताः श्रीयुगादिदेवपुत्रकुलं निषाय तलहट्टिकायां संघमध्ये समायाताः ।  
ततः म्यानात् म्लेच्छसैन्योपद्रवात् मर्वशून्यायामजातमार्गायामपि सुराष्ट्रायाम्, संप्राप्तायामपि वर्षायाम्, श्रीमिचक्रमा-  
देवकृतनाहारयाः श्रीसंघमैत्र्ययुक्तकल्पप्रचण्डशामनसाधुश्रीरयपतिवशीकृतासंग्यम्लेच्छानुगम्यमानमार्गाः श्रीपूज्य-  
धर्मचक्रार्त्तयेथ्रुतुविधसंघसैन्यपरिवृताः पूर्वोक्तरीत्येन श्रीपत्तनादिमहानगरराजमार्गान् गुप्तेन, अध्वानेकशतादिमहा-  
मेलापकेन सुराष्ट्रालङ्कार-रत्नारगठनायकादिममगराजलोकेन नगरलोकेन च संदृग्गामनदत्तवद्गुमाना रक्षितगरालोक-  
प्रधानाः श्रीउज्जयन्तमहातीर्थतलहट्टिकायामासिताः । तत्र च रत्नारगठमध्ये मरुलस्वपथपरपथ-जनचेतधमन्कार-  
कारिणां चैत्यप्रपाटीं संघेन सह विषाय अपाडचतुर्माणरुदिने आबालनक्षचारिणं राज्यराजीमतीपरिहारकारिणं  
श्रीउज्जयन्तचलमहातीर्थालङ्कारं श्रीनेमिपुमारं नूतनकृत्वन्तुति-स्नोत्रदानपूर्वकं नमश्कृतुः । संधायिसमाधुश्रीरयपति-  
प्रमुखसुश्रावकैश्च श्रीशुशुभ्रयवप सुवर्णदंडादिना पूजा कृता । श्रीशुशुभ्रयवत् (१) तस्मिन्नेव दिने श्रीमहाल्लउत्तरनगर-

वास्तव्योदारचरित्रप्रभाकरनानाभिग्रहग्रहणपूर्वकं धन्दनार्थं समागत सा० जगत्सिंहपुररत्नसाधुजयतामुश्रारु-उद्धार-गढास्तव्यमहद्विकरीहृदङ्गाक्षण-री० रत्नपुररत्नसा० मोतादिसुश्रावकश्राविकाणां श्रीमन्मयक्त्वारोप-सामायिकारोप-परिग्रहपरिमाणोदिनन्दिमहामहोत्सवः कृतः । साधुश्रीरयपतिप्रमुखसंसंघमुश्रारुः शत्रुञ्जयमहातीर्थं ३३दिनचतुष्टयं सर्वादरेण महापूजा महाध्वजारोपादिमहोत्सवा निर्मिताः । परमिन्द्रपदं च श्रीहम्मीरपत्तनवास्तवेन श्रीजिनशामन-प्रभावकेण सा० धीणापुत्रत्नेन सा० गोसलमुश्रारकेण द्विवल्लुक्रम्मगत २४७४ गृहीतम् । मन्त्रिपदं च प्रभाकर-साधुशालामुश्रारुपुत्रत्नेन सा० वीजासुश्रारकेण द्रम्मशताष्टकेन गृहीतम् । शेषमुश्रारकैरन्यानि पदानि गृहीतानि । सर्वैरुपयया श्रीनेमिनाथदेवभाण्डागारे द्विवल्लुक्रम्मसहस्र ४० उत्पन्नाः ।

तदनन्तरम्, श्रीनेमीश्वरमुत्कलनं विधाय सर्वसंघमन्विताः श्रीपूज्यराजाधिराजास्तलहृदिकायां संघमध्ये सम्प्राप्ताः । तत्र च नानानिघोत्सवप्रमरनिर्माणेन प्रबलप्रचण्डकलिकालभृपालोन्मूलनलब्धप्रकर्षान् स्वस्वामिनो वीक्ष्य निजदानतिरस्कृतचिन्तामणि-कामधेनु कल्पद्रुमचयेन समुपाजितयशःपुञ्जेन साधुश्रीरयपतिसुश्रावकेश्वरेश्वरेण सा० महणमिहादिपुत्रपरिवृतेन दिनत्रयं यावदहर्निशं स्वर्णशङ्कलिकाकटकाचपद्मशंशुश्रीरुरीचीनांशुकादिस्तु-कौशल दक्षिणादानेन स्वस्वामिजयसंस्तवनाथं समप्रमुत्पाद्देशमध्यमर्त्यमेयपाचकगणौ यथेच्छं पोषितः । अन्यैरपि साधुराजराजसिंह-साधुराजतेजपाल-सा० हरिपालादिश्रावकैरन्यारितसवनिर्माणदिना हर्षप्रकर्यांकुलः कृतः ।

९७. तदनन्तरम्, ततः स्थानात् प्रस्थाय सम्पादितस्वार्थसम्पत्तयः साहाय्यीभूतयुगप्रसारागमश्रीजिनचन्द्रश्रि श्री-अम्बिकाप्रमुखनानादेवदेवतामलयो लक्षण-तर्क-साहित्यालङ्कार-नाटक-ज्योतिष्क-मन्त्र-गण-छन्दोविद्यासंस्फुरता तुरगपद-कोट्यरूपरुण-नानालङ्कार-शाल्यकरण-चिन्तितदिनानामसमस्थापूरणादिना रञ्जिताशेषकोविदचक्रचूडामणयः अस्खलितवैश्वर्यारोपणोपाजितचन्द्रचन्द्रज्योत्स्नमानमानकीर्चयः स्वाग्दतोद्योतितस्वचन्द्रकुलोद्भूतानेकपूर्वधरयो युग-प्रधानश्रीजिनकुशलश्रिसुगुरुचक्रार्चयः श्रीतीर्थयात्रारगतफलीकृतात्मजन्मानेकापामसमुपाजिताभेयस्वस्वपातेये-नाहर्निशं श्रीजिनशामनापरशामनोद्भवमहापुरुषसमूहैर्निन्दार्गवर्त्तस्तूपमानेन नानाविधाभिग्रहप्रतिपालनपत्रिरीकृ-ताजन्मदेहेन मनोराञ्जितार्थसम्प्राप्तिसमुद्भूतमहाहर्षनिरुमिताननेन साधुश्रीरयपतिप्रमुखमरुलविधिमार्गसंघेन सह निरानाघवृत्त्या वर्षपूर्वानिविराधनानिवृत्त्या शून्यमपि सुराष्ट्रादेशं राजमार्गवदतिलङ्घ्य श्रीसंघनिर्मितासु स्थाने स्थाने संजायमानासु प्रभावरानासु, सुखं सुखेन श्रीपत्तनोपवने श्रावणशुक्लरथोदर्यां समवसृत्य, दिनपञ्चदशकं च यावच्च-तुर्दिग्भ्यः समागतश्रीचतुर्विधसंघस्य महत्समाधानमद्युत्पादनार्थं श्रीसंघमध्येऽव्यथिताः ।

तदनन्तरम्, भाद्रपदवधेकादश्यां चिन्तितार्थसम्पादनसमयेन साधुश्रीरयपतिसुश्रावकेण सा० महणमिहादि-पुत्रपरिवृतेन साधुतेजपाल-साधुराजसिंहसहस्रां चाहमहमिरुया देशान्तरियसंघमद्युदाय-श्रीपत्तनीयममग्रस्यपपरपक्ष-महाजनलोत्सवमहामेलापकेन दीयमानेषु दानेषु, गीयमानेषु गीनेषु, नृत्यमानेषु खेलभृन्देषु, राद्यमानेषु डादशविध-नानदीर्तुषु, अश्राधिरूढनानादोहनादनविस्मापितापिल्लोकेषु, मरुलराजलोकरुनगरलोकचैतश्रमत्काररुग्गि ममस्तदुर्जनजनहृदयोद्विगहारी स्वजनजनमनोऽम्भोजवननिकासनश्यांतुकारी वचनातिगः श्रीपूज्यराजानां श्रीरामचन्द्र[वत्]प्र-वेशकमहामहोत्सवः श्रीपत्तने संजातः ।

९८. तदनन्तरम्, साधुश्रीरयपतिः सुधावज्रो द्वितीयारं श्रीपत्तनीययाचकरुण संपोष्य ममग्रसंघपरिवृतः श्री-पूज्यराजपादान् मुत्कलाप्य श्रीपत्तनात् प्रस्थाय, आगमनरीत्यैव स्थाने स्थाने प्रभावरना कुर्वाणो युगप्रसारागमश्रीजिन-चन्द्रश्रिनिर्माणपत्रिनिते श्रीकोशवाणके ममग्रसंघपरिवृतः प्राज्ञः । तत्र च श्रीजिनचन्द्रश्रिस्तूपे महाध्वजारोप-महा-पूजास्ताननिलेपननिर्माणवारितमन्त्रकरणतुराकरुनकादिदानादिना प्रोत्यर्षणां विधाय, पुनर्द्वितीयार श्रीफलद्वि-

कार्यां यात्रां च-कृत्वा, वस्त्रादिदानसन्मानपूर्वकं देशान्तीयसंघान् स्वे स्वे स्थाने प्रविष्टान् कृत्वा, यथागमनमार्गेषु श्रीयोगीनीपुरे प्रभूतम्लेच्छसंकुले सुपुत्ररत्नसाधुराजधर्मसिंहकारितनिर्गमनमहोत्सववत्समधिकतरप्रवेशकमहामहोत्सवेन श्रीदेवालयसमन्वितः साधुश्रीरस्यपतिमुश्रावकः प्रविष्टः कार्तिकवदिचतुर्थ्याम् ।

१९. तदनन्तरम्, पुनः सं० १३८१ वैशाखवदिवश्रम्यां श्रीपत्तने श्रीशान्तिनाथविधित्वैये श्रीयोगीनीपुर-समागतश्रीश्रीमालकुलोत्तंस-सा० रुद्रपाल-सा० नींबा-श्रीजावालिपुरागतमञ्जिभोजराजपुत्र मं० सलखणसिंह-रङ्गाचार्यलख-  
(ख)ण-श्रीसत्यपुरागत मं० मलयसिंह-श्रीभीमपल्लीसमागतसाधुराजवीरदेवप्रमुखसमग्रसमुदाय-श्रीस्तम्भतीर्थगततय०  
छाडा-श्रीधोषावेलकुलागतसा० देपाल-मं० कुमार-सा० खीमडग्रमुखानेकमुश्रावकसमुदायमहामेलापकेन दिनपञ्चद-  
शकाराभ्य संजायमानेषु महाप्रेक्षणीयेषु, त्रितर्यमाणेष्वनेषु स्वस्वापतेषु, दीयमानेषु तालरासेषु, सम्पद्यमाना-  
सु सविस्तरतरासु श्रीसंघपूजासु, क्रियमाणेषु श्रीसाधुभिर्कत्रातसत्याचारितसत्रेषु, भविष्यत्सुल्लङ्घ्यल्लिकानांसकललोका-  
श्यांरिपादनपूर्वं दीयमानेषु सविस्तरतरेषु पुष्पाङ्कदानेषु, साधुजाह्णपुत्ररत्नाभ्यां समस्तोत्सवसम्पादनोपाजिततुल्यपुण्य-  
कदम्बकाम्यां साधुराजतेजपाल-सा० रुद्रपालसुश्रावकाम्यां श्रीश्रीमालकुलोत्तंस-सा० आना-सा० राजसिंह-भण० लूगां-  
सा० श्वेत्सिंह-सा० देवराज-भण० पन्न-मन्नाप्रमुखसमस्तश्रीपत्तनीयसमुदायपरिवृत्ताभ्यां चतुर्थ्यां सविस्तरतमजलया  
श्राधिसानानिर्माणपूर्वकं मकलजनमनश्चेतश्चमत्कारकारी भवभवोपाजितपापहारी समस्तमहाजनलोकप्रत्यासन्नानेक-  
ग्रामशास्त्रपलोकमस्तकावधूननकारी प्रतिष्ठाभहामहोत्सवः कारितः । तस्मिन् महोत्सवे समग्रलक्ष्यतुक्त्वश्रीवज्र-  
स्वामिप्रमुखानेकयुगप्रधानः स्वगुरुचक्रवर्तिश्रीजिनचन्द्रसुरिकृताहंनिशसाहायैः श्रीजिनकुशलसरिभिः श्रीजावालि-  
पुरयोग्यमहामहोत्सवविभ्र-श्रीदेवराजपुरयोग्यश्रीयुगादिदेवविभ्र-श्रीशुक्रजयस्थितबृह्णवसहीप्रासादजीर्णोद्धारार्थ-  
सा० छज्जलपुत्ररत्नसाधुराजराजसिंह-साधुमोखदेवकारितश्रीश्रेयांसमुखानेकविभ्र-श्रीशुक्रजयस्थितस्वप्रासादमध्यस्थ-  
भण० लूगाकारिताप्यापदयोग्यचतुर्विंशतिविभ्रप्रमुखशिलमयविभ्रानां सार्धशतद्वयं प्रतिष्ठितम्, पिच्छलामयानां  
संलक्षैव नास्ति । श्रीउच्चापुरीयोग्यश्रीजिनदत्तसरि-जावालिपुर-श्रीपत्तनयोग्यश्रीजिनप्रबोधसरि-श्रीदेवराजपुरयोग्य  
श्रीजिनचन्द्रसरिमूर्तीनां श्रीअग्निवाक्यविष्टायिकानां प्रतिष्ठा कृता । स्वभाण्डागारयोग्यं प्रधानं समवसरणं च  
प्रतिष्ठितम् । पञ्चार्थां च व्रतग्रहणोत्थापना-मालारोपणादिनिन्दमहामहोत्सवोऽतिशयेन सविस्तरतः कृतः । तस्मिन्  
महोत्सवे देवभद्र-यशोभद्रसुल्लङ्घ्योत्स्थापना कृता । सुमत्तिसार-उदयसार-जयसारसुल्लङ्घकानां धर्मसुन्दरी-चारि-  
प्रसुन्दरीसुल्लङ्घिकयोश्च दीक्षा दत्ता । जयधर्मगणेः श्रीउपाध्यायपदं दत्तम्-तन्नामधेयं च श्रीजयधर्मोपाध्याय इति  
कृतम् । अनेकसाध्वीश्राविकाभिर्माला गृहीता । प्रभूतश्रावकश्राविकाभिः श्रीसम्पत्कारोप-सामाधिकारोपश्रीश्रावक-  
दशवतारोपथ कृतः ।

तदनन्तरम्, श्रीतीर्थयात्राकर्तृकामसाधुराजवीरदेवप्रमुखश्रीभीमपल्लीसमुदायाभ्यर्धनया श्रीपूज्याः श्रीभीम-  
पल्ल्यां साधुवीरदेवकारितसविस्तरतप्रवेशकपूर्वकं श्रीमहावीरदेवं वैशाखवदिवयोदश्यां नमस्कृत्यः ।

१००. तदनन्तरम्, तस्मिन्नेव संवत्सरे श्रीजिनशासनप्रभावेण सकलस्वपथ-परपथातल्पलोकमर्धाध्यापनो-  
द्यतमस्केन सकलभीमपल्लीसमुदायसुदृढरूपेन निजावदाततस्मारितस्वपूर्वजसाधुराजसौवड-सा० यशोधवल-साधु-  
राजभयचन्द्र-सा० साडल-साधु० धणपाल-सा० सामलसुश्रावकप्रमुखस्वपूर्वजकदम्बकेनोदार चरित्रेण दुष्करतगाभिप्र-  
हयलीप्रतिपालनप्रवीणेन साधुराजवीरदेवसुश्रावकेण सा० मालदेव-सा० हूलमसिंहस्वप्रातपरिवृत्तेन प्रताशक्रान्तभूत-  
त्पातमादिश्रीप्रासादीनसुसन्नापसंस्कुरमाणं निष्कास्य, सर्वदेशेषु कुङ्कुमपत्रिकाप्रदानपूर्वकं नानास्थानसमुदायात्  
मेलयित्वा, सकलातिशयनिधाना निजावदाततस्मारितश्रीगौतमस्वामि-श्रीसुधर्मस्वामि-श्रीजम्बूस्वामि-श्रीसुलभद्र-

श्रीआर्यमहागिरि-श्रीवज्रस्वामि-श्रीजिनदक्षरिप्रमुखानेकयुगप्रधाना युगप्रवरागमश्रीजिनकुशलद्वरयः श्रीमहातीर्थ-यात्रोपरि गाढतरनिबन्धेन सर्वस्थानसंघपरिवृतेन सा०वीरदेवश्रावकेण विज्ञप्ताः ।

तदनन्तरम्, द्धरिचक्रवर्चियुगप्रवरागमश्रीजिनचन्द्रद्वरिशिष्यचूडामणिभिः श्रीपूज्यपादैर्ज्ञानध्यानवलने सम्यक् परिभाष्य ज्येष्ठाघपञ्चम्यां साधुराजवीरदेवश्रावकं सकलश्रीविधिसंघसैन्यमुख्यत्वेन श्रीजिनशासनप्रभावकं सकल-कार्यनिर्वाहणसमर्थं साधुराजदेवपुत्ररत्नं साहुज्ञाञ्जामुश्रावकं साहुपूर्णपाल-साहुद्वष्टापरिवृतं श्रीसंघपाश्चात्य-प्राग्भारनिर्वाहणपदे संन्यस्य, पुण्यकीर्तिगणि-वा० सुखकीर्तिगणिप्रमुखसाहुद्वादशक-प्र० पुण्यसुन्दरीप्रमुखसाध्वीवृ-न्दपरिवृताः साधुराजवीरदेवकारितकृतयुगावतारमहारथतुल्यश्रीदेवालये चतुर्विंशतिपट्टकं महदुत्सर्पणापूर्वकं संस्थाप्य, शकट [ शत ] त्रयानेकाश्ववृन्दोद्भवन्दनानाज्ञातिसम्मिलिताभेयपदातिवर्गसम्मिलितसर्वस्थानवास्तव्यश्रीविधिसंघेन सार्धं सविस्तरतरश्रीदेवालयनिष्क्रमणमहामहोत्सवपूर्वकं श्रीभीमपल्लीतः श्रीपूज्यपादाः श्रीतीर्थनमस्करणाथं प्रत्यास-न्नायामपि चातुर्मास्यां गाढतमसर्वसंघोपरोधेन प्रस्थिताः ।

तदनन्तरम्, स्थाने स्थाने संजायमानेष्वचारितसत्रेषु, वाद्यमानेष्वश्राधिरूढेषु टोह्लेषु, निजशब्दवधिरिकृताम्ब-राशासु भेरीशब्देषु, दीयमानेषु तालारासकेषु, श्रीकरीऊ(?)मलिन विराजमानः सर्वोऽपि संघः, अन्तरगतश्रीवायड-नगरालङ्कारश्रीमहावीरदेव-श्रीशेरीपकालङ्कारश्रीपार्श्वनाथादिनानास्थानतीर्थेषु दिनद्वयं श्रीमहाध्वजारोपपूजाविशेषा-वारितसत्रनिर्माणपूर्वकं यात्रां विधाय श्रीशिरखिजे महानगरे समग्रलोकाश्चर्चकारकजङ्गमप्रासादकल्पश्रीदेवालयप्र-वेशकमहामहोत्सवपूर्वं प्राप्ताः । तत्प्रत्यासन्नश्रीआशापल्लीनगरीवास्तव्यव्यवहारिकमहणपाल-चप०मण्डलिक-सा० वयजलप्रमुखश्रीविधिसमुदायाम्यर्थनया सर्वसंघसुश्रावकपरिवृतैः श्रीपूज्यपादैः सकलजनार्थ्यकारकश्रीआशापल्लीसमु-दायकारितप्रवेशकमहामहोत्सवपूर्वकं श्रीआशापल्ल्यां श्रीयुगादिदेवतीर्थं नमस्कृत्य, सविररतो मालारोपणमहामहो-त्सवः कृतः ।

तदनन्तरम्, पुनः सर्वसुश्रावकलोकपरिवृताः श्रीपूज्याः श्रीसंघमध्ये समायाताः । तत्पश्चात्, ततः स्थानात् सर्वोऽपि संघो विशेषतो गुरुरताडम्बरेण श्रीस्तम्भनकश्रीपार्श्वनाथयात्राकरणार्थं सकलगूर्जरालङ्कारभूतश्रीस्तम्भ-तीर्थोपरि प्रचलितः सन् मार्गागतसर्वनगरग्रामेषु प्रधानप्रासादसमानश्रीदेवालयस्य प्रवेशकमहोत्सवं कुर्वणः श्रीस्तम्भतीर्थे प्राप्तः ।

१०१. तत्र च निरुपमातिशयशालिश्रीआर्यसुहृस्तिद्वरि-युगप्रवरागमानुकारिश्रीजिनकुशलद्वरिसुगुरुपदेशेन सर्वप्रकारेण श्रीसम्प्रतिमहाराजाधिराजसमानेन सकलयुद्धिनिधानेन साधुराजवीरदेवसुश्रावकेण सकलश्रीस्तम्भतीर्थ-वास्तव्योत्तममध्यमजघन्यलोकावालगोपालमहामेलापकेन महाम्लेच्छानां पश्यतामपि टोल्यमानेषु चामरेषु, धिय-माणसु श्रीकरीषु, वाद्यमानसु भेरीपरम्परासु, अश्राधिरूढटोह्लादिवादित्रनिनादवाधिरिकृताम्बराशाचकेषु, नृत्यमा-नेषु पदे पदे खेलकवृन्देषु, दीयमानेष्वविधवसुधामिनारीभी रासकेषु, गीयमानेषु श्रीतीर्थद्वरदेवश्रीयुगप्रधानश्री-संघपुरुषकृतावदातसंस्तवकेषु गीतेषु, पापञ्चमानेषु वन्दिवृन्देषु, दीयमानेष्वभेयेषु स्वस्वापतेषु, किं बहुना वचना-तिगेषु नानाविधेषु नाटकाद्युत्सवेषु संजायमानेषु, समग्रनगरहृष्टशोभातलिकातोरणनिर्माणपूर्वकं हिन्दुगाराज्यालङ्कार-मश्रीधरवस्तुपालकारितयुगप्रवरागमश्रीजिनधरद्वरिप्रवेशकमहोत्सववत्महाम्लेच्छराज्यप्रधानालङ्कारभूतसाधुराजजेस-लकारितसम्प्रातिशयनिधानश्रीजिनचन्द्रद्वरियुगप्रधानमहाप्रवेशकाधिकजङ्गमयुगप्रधानानेकलन्धिनियानश्रीजिनकुश-लक्ष्मीणां प्रवेशकमहामहोत्सवो हिन्दुकवारकवत्, श्रीरथयात्रानुकारिप्रासादकल्पश्रीदेवालययात्रानिर्माणपूर्वकं नवा-ङ्गुत्तिकारश्रीमदभयदेवद्वरिप्रकटितश्रीस्तम्भनकालङ्कारश्रीपार्श्वनाथविधिचत्वालयसंस्थितश्रीअजितस्वामितीर्थीयनू-

नकृत्नवनवालङ्कारस्तुतिस्तोत्रमणनपूर्वकं श्रीपूज्यैः सर्वचतुर्विधसंघपरिवृतैः सकलभवोपाजितपापकर्मलप्रक्षालनप-  
वित्रा यात्रा कृता ।

तदनन्तरम्, दिनाष्टकं यावत् साधुराजवीरदेवप्रमुखदेशान्तरियमहर्द्विकसुश्रावकैः श्रीस्तम्भतीर्थवास्तव्यश्री-  
विधिसमुद्रायेन च श्रीमहाध्वजारोपश्रीमहापूजा-स्वारितसत्र-श्रीसंघवास्तव्य-श्रीसंघपूजा-श्रीइन्द्रमहोत्सवामेयस्व-  
पतेयोत्सर्पणानिर्माणपूर्वकं सकलस्वपक्षलोकानन्ददायकाः सर्वविपक्षलोकहृदयकीलालुकारका महामहोत्सवाश्च चक्रिरे ।  
इन्द्रपदं च सांस्कृत्यसाधुश्रावकपुत्रत्वेन दो०खांभराजसुश्रावकाजुजेन दो०सामलसुश्रावकेण द्विव० द्र० शत १२  
गृहीतम् । श्रीमन्निपदादिपदानि चान्यैः सुश्रावकैर्गृहीतानि ।

१०२. तदनन्तरम्, श्रीस्तम्भतीर्थात् प्रस्थाय सर्वोऽपि संघः संजायमानेषु राजविधुरेष्वपि सर्वशून्यभूतेषु देशेषु,  
समग्रीत्साहपूर्वकं श्रीशुश्रूषोपरि प्रचलितः सन्, अन्तरागतश्रीधान्यूकामहानगरे संप्राप्तः । तत्र सकलनगरनायकेन  
मन्दिदलकुलोत्सेने ठ० उदयकर्णसुश्रावकेण श्रीसंघवास्तव्यश्रीसंघपूजानिर्माणपूर्वकं महती प्रभावना कृता । ततः पुनः  
प्रस्थाय, क्रमक्रमेण श्रीशुश्रूषयतलहृदिकायां सम्प्राप्तः । तदनन्तरं श्रीपूज्यपादैः सर्वसंघपरिवृतैः श्रीशुश्रूषयश्लोपर्य-  
प्यारोहं विधाय भवमयवल्लीश्रीमूलनासिलतासमानां द्वितीयवारं श्रीशुश्रूषपालङ्कारश्रीयुगादिदेवमहातीर्थयात्रां नाना-  
मन्दिन्युरसर्वालङ्कारसुन्दरनूतनकृतस्तुतिस्तोत्रप्रदानपूर्वकं कृत्वा, तदनन्तरं दिनदशकं यावत् सकलसंघमुख्यभूतसा-  
धुराजवीरदेवश्रीसंघपाश्यापदभारनिर्वाहक-सा० साहतेजपाल-सा० नेमिचन्द्र-योगिनीपुरवास्तव्यश्रीश्रीमालसा०  
रुद्रपाल-साहूर्नीभेदेव-मन्दिदलकुलोत्सेन० जवनपाल-सा० लखमा-श्रीजवालिपुरवास्तव्यसा० पूर्णचन्द्र-सा० महाजा-  
गुडहावास्तव्यसा० बाधूप्रमुखनानास्थानकवास्तव्यमहामहर्द्विकसुश्रावकैः श्रीमहाध्वजारोपमहापूजावारितसत्र-श्रीमाध-  
मिकवास्तव्य-श्रीसंघपूजा-श्रीइन्द्रपदमहामहोत्सवनिर्माणामेयस्वस्वापतेयैश्च पट्टांशुकादिनावावस्वस्वर्णकटकादिवित-  
रणपूर्वकं श्रीशुश्रूषोपरि श्रीजिनशासनश्रोतसर्पिका प्रभावना कृता । इन्द्रपदं च श्रीजिनशासनप्रभावनाकरणप्रगुणेन  
गाम्बुहोदहपुत्रत्वेन साधुलखमासुश्रावकेण द्विवह्नि(६)कर्मशतसत्रत्रिजिह्विर्गृहीतम् । अमाल्यपदं च श्रीयोगिनीपु-  
रवास्तव्यश्रीश्रीमालसा० सुरराजपुत्रत्वेन सा० रुद्रपालाजुजेन साहूर्नीभेदेवश्रावकेण द्विवह्नि(६)कर्मशतदशयत्तैर्गृहीतम् ।  
श्रेयपदान्यन्यमहर्द्विकसुश्रावकसुश्राविकाभिर्गृहीतानि । सर्वसंघयया श्रीयुगादिदेवमाण्डागारे श्रीविधिसंघेन सहस्रप-  
श्वद्वयप्रमाणं स्वस्वापतेयं सफलीकृतम् । स्वकीयश्रीयुगादिदेवविधिवैत्ये नूतननिष्पन्नशीतलुर्विश्रतिजिनालयदेवगृहि-  
कासु श्रीपूज्यराजैः सविस्तरतरः कलशध्वजारोपः कृतः ।

तदनन्तरम्, सर्वसंघपरिवृताः श्रीपूज्याः श्रीयुगादिदेवमुक्कलनं विधाय तलहृदिकायां ममायाताः । ततः  
सर्वोऽपि संघ आगमनसैर्त्येव गुर्वाडम्बरेण व्यापुत्र्य पुनः शैरीपके श्रीपार्थयात्रां विधाय, क्रमक्रमेण श्रीगङ्गेश्वर-  
ममायातः । तत्र च दिनचतुष्टयमवारितसत्र-श्रीमाधमिकवास्तव्य-श्रीमहापूजा-महाध्वजारोपनिर्माणपूर्वकं श्रीपार्थ-  
नाथप्रत्यामन्नाडालङ्कारश्रीनीमिधरयोर्नूतनकृतस्तुतिस्तोत्रप्रदानपूर्वकं सकलसंघपरिवृतैः श्रीपूज्ययात्रा कृता । तद-  
नन्तरं सकलसंघपरिवृताः श्रीपूज्याः श्रावणशुद्धकृदश्यां प्रभाररुमाधुराजवीरदेवकारितमविमन्तनप्रवेशरुनिर्माण-  
पूर्वकं श्रीमामपन्त्यां श्रीमहावीरदेवं नमश्चक्रुः । देशान्तर्गपः मयैः संघः माहुरीसुश्रावरुण गन्मानदानपूर्वकं  
गन्माने प्रविष्टः ।

१०३. तदनन्तरम्, सं० १३८२ षष्ठीं वेदांगमुदि ५ मापुगजमान [नन्दरी] रायमानस्यै पांदावेगाम्भी यांश्चः कृत्तमेरु-  
मन्दरपयोनिधिरिताननमप्रनगलो रुद्रुदायमानश्रीजिनशासनश्रीमहापूजा-महाध्वजारोपनिर्माणपूर्वकं श्रीपार्थयात्रा-  
पगुर्वाडि-पुनःपतिपाननापुगजवीरदेवसुश्रावककृतानि दीधामान्तगेचनादिनन्दिमहामतोन्मः श्रीमीमपन्त्यां-श्री-

पत्तनीय-श्रीप्रह्लादनपुरीय-श्रीवीजापुरीय-श्रीआशापल्लीयादिनानास्थानसमुदायमहामेलापकेन वाद्यमानेषु द्वादशवि-  
धनान्दीर्घेषु, दीयमानेषु तालारासेषु, नृत्यमानास्त्रिधवसुधवासु नायिकासु, संजायमानासु श्रीसंचपूजासु, क्रिय-  
माणेषु श्रीमाधर्मिकवात्सल्येषु, दीयमानेष्वमेवेषु स्वस्वापत्तेषु, सम्पद्यमानेष्वारितमन्त्रेषु, दिनत्रयममारिघोषणानि-  
र्माणपूर्वकं हिन्दुकवारकवत्सकलजनमनश्चेतधमत्कारकारी विपक्षहृदयकीलानुकारी सकलातिशयनिधानैः सर्वलब्धिप्र-  
धानैर्नजवादात्संस्मारितपूर्वस्वरिभिः श्रीजिनकुशलस्वरिभिश्चक्रे । तस्मिन् महोत्सवे क्षुल्लकचतुष्टयं क्षुल्लिकाद्यं कृतम्,  
तेषां नामानि त्रिनयप्रभ-मतिप्रभ-हरिप्रभ-सोमप्रभक्षुल्लकाः, कमलधी-ललितश्रीक्षुल्लिके इति । प्रभूतमाध्वीधावि-  
काभिर्मांला गृहीता । अनेकश्रावकश्राविकाभिः सम्यक्चारोप-सामायिकारोपः कृतः, परिग्रहपरिमाणं च गृहीतमिति ।

तस्मिन्नेव संवत्सरे श्रीपूज्याः श्रीसत्यपुरीयसमुदायाभ्यर्चनाया श्रीसत्यपुरे श्रीममुदायकारितसविस्तरतरप्रवेशक-  
महोत्सवाः श्रीमहावीरदेववीर्यराजं नमश्चक्रुः । तत्र च माममेकं श्रीसमुदायस्य ममाधानं सट्टपाद्य. श्रीलाटहृदसमु-  
दायाभ्यर्चनया श्रीलाटहृदे श्रीसमुदायविहितसविस्तरतरप्रवेशकमहोत्सवाः श्रीमहावीरदेवाधिदेवं नमश्चक्रुः । तत्र च  
पक्षमेकं श्रीसमुदायस्य समाधानं समुत्पाद्य, श्रीरागभटमेरवीयममुदायाभ्यर्चनया श्रीरागभटमेरौ श्रीसमुदायकारितस-  
कलस्वपक्ष-परपक्षचेतधमत्कारकारिप्रवेशकमहोत्सवाः श्रीयुगादिदेवतीर्थनाथं नमस्कृत्य चतुर्मासीं चक्रुः ।

१०४. पश्चात्, तत्र च सं० १३८३ वर्षे पौषशुक्लपूर्णिमायां श्रीजिनशामनप्रभारनाश्रीसाधर्मिकवात्सल्यादिनाना-  
धर्मकृत्यकरणौघतसाधुराजप्रतापसिंहप्रमुखश्रीरागभटमेरवीयममुदायाभ्यर्चनया श्रीजेमलमेरवीय-श्रीलाटहृद-श्रीसत्य-  
पुर-श्रीप्रह्लादनपुरीयादिनानास्थानास्तत्त्वमहद्विकसुश्रावकलोकाहमहामेलापकेन संजायमानेषु श्रीमाधर्मिकवात्सल्य-  
श्रीसंचपूजादिनानाश्रिषेषु धर्मकृत्येषु, दीयमानेषु तालारासेषु, क्रियमाणेष्वारितमन्त्रेषु, अमारिघोषणानिर्माणपूर्वकं  
श्रीउत्थापना-मालारोपण-श्रीसम्यक्चारोपण-सामायिकारोपण-परिग्रहपरिमाणादिनान्दिमहामहोत्सवं चक्रुः ।

१०५. ततस्तस्मिन्नेव संवत्सरे श्रीजालिपुरीयममुदायगाटवराभ्यर्चनया मकलातिशयनिधानाः समग्रस्वरिमाला-  
प्रधानाः श्रीजिनकुशलस्वरिखुगप्रधानाः श्रीरागभटमेरुतः प्रख्याप ममग्रगण्यमारपुराधरणधौरेष्वकीयपूर्णजगद्विभ्र-  
कोद्वरणकारित-श्रीशान्तिनाथमहाविष्णुमन्वितोत्तुत्तोरग्निरुपगुरुकारमानादशितरं श्रीलक्षणमेटरुनगरे युगप्र-  
रागमस्वकीयदीक्षागुरुश्रीजिनचन्द्रस्वरिगुरुजन्ममहोत्सवमौजन्मदीक्षाप्रणमहामहोत्सवविलोकनपत्रिभूतागिरि-  
स्वपक्ष-परपक्षजनताननाः श्रीगन्धानयने च श्रीशान्तिनाथदेवाधिदेवम्, श्रीसमुदायकारितगविस्तरतरप्रवेशकमहो-  
त्सवा नमस्कृत्य क्रियन्ति दिनानि उभयस्थानममुदाययोः ममाधानं च समुत्पाद्य श्रीविधियमेकमलजननप्रगेहमंगारे  
श्रीजालिपुरे नानोत्सवनिर्माणममुद्यत श्रीजालिपुरीयमहागमुदायकारितगविस्तरतरप्रवेशकमहामहोत्सवाः  
स्वहलकमलप्रतिष्ठितं श्रीजालिपुरीयममुदायमनोराञ्छितार्थपूरणाद्गीटवप्रतिज्ञं श्रीमहावीरदेवमहावीर्यराजचरण-  
कल्पद्रुमं नमश्चक्रुः । तत्र च मन्त्रीस्वरलक्षरवृत्तप्रदीप सं० गोजराजपुत्रग्न सं० मलयजमिह-मा० चाहट-  
पुत्ररत्नमा० शास्त्राणप्रमुखश्रीजालिपुरीयविधिममुदायाभ्यर्चनया श्रे० हरिपालपुत्रग्नश्रे० गौसालप्रमुखश्रीउद्यरीय-  
देवराजपुरीयममुदाय-मन्त्रीस्वरपुराधरणधौरेष्वथरत्नमा० जाह्णपुत्रग्नमापुराजनेजपाल-मा० रुद्रपालप्रमुखश्रीप-  
त्तनीय-श्रीजेमलमेरवीय-श्रीगन्धानयनीय-श्रीश्रीमालीय-श्रीमत्यपुरीय-श्रीगुडहाप्रमुखनानाजगत्प्रामाण्यार्थ-  
रूपश्रीविधिममुदायश्रावकलोकाहमहामेलापकेन दिनदशपञ्चरात्राभ्यर्चनं संजायमानेषु मन्त्रिष्वक्षुल्लिकानां मन्त्रिस्वरिषु  
पुष्पाद्दानमहामहोत्सवेषु, दीयमानेषु तालारासेषु, अनेकमहामहद्विकसुश्रावकलोकाः स्वर्गजयश्राद्धगानैः मन्त्री-  
विष्णुमन्त्रिष्वमेवेषु स्वस्वापत्तेषु, दीयमानेष्वारिष्वसुधवासुधामिर्गामिभिः माने स्थाने गीनेषु, श्रीमंत्रपूजा-साधर्मिक-  
वात्सल्याकारितममागिघोषणादिनानाप्रमानानामु प्रवर्तमानामु, सं० १३८३ वर्षे कान्गुनसदिनत्रयमातिशयेन वि-  
मदुःषमाकाञ्छे प्रवर्तमाने, सख्यस्वपक्षपरपक्षोपमपक्षमन्त्रिष्वलोकाणां मन्त्रकेहन्ताप्यागेह... इत्यान्तामपि, निष्पम-

सौवज्ञानध्यानबलातिशयादांगामिकुशलं परिभावयद्भिः श्रीजिनकुशलसूरिभिः सुपमसुपमावत्सकलस्वपक्ष-परपक्षा-  
संलयन्तेच्छलोकचेतश्चमत्कारकारी विधिधर्मप्रभावनाप्रद्विष्टलोकहृदयक्रीलसुकारी निर्विघ्नः श्रीप्रतिष्ठा-व्रतग्रहणो-  
त्थापना-मालारोपण-श्रीसम्यक्चारोपादिनिन्दिमहामहोत्सवः सविस्तरतः कृतः । तस्मिन् महोत्सवे श्रीराजगृहनिवा-  
सितप्रलोकक्रीडास्थानकश्रीवर्धमानस्वामिचरणकमलन्यास-श्रीगौतमस्वामिप्रमुखश्रीमहावीरैकदशगणपथादिमहामु-  
निनिर्वाणपवित्रीकृतथीवैभारगिरिशैलोपरि ४० प्रतापसिंहकुलप्रदीपमान्दिकुलोत्तंसंघपुरुष ४० अचलकारितश्री-  
चतुर्विधतिजिनालयोत्तुङ्गतोरणप्रासादमूलनायकयोग्यश्रीमहावीरदेवप्रमुखानेकशिलमय-पिचलामयायनेकविम्बानां गु-  
रुमूर्चीनामधिष्ठापिकानां च प्रतिष्ठा संजाता । क्षुल्लकपदकं च कृतम्, तन्नामानि न्यायकीर्ति-ललितकीर्ति-सोम-  
कीर्ति-अमरकीर्ति-नमिकीर्ति-देवकीर्तिमूनय इति । अनेकाभिः श्राविकाभिर्माला गृहीता नानाधावकश्राविकाभिः  
श्रीसम्यक्चारोप-सामायिकारोप-द्वादशव्रताङ्गीकारश्च कृतः ।

१०६. तदनन्तरम्, सिन्धुदेशालङ्कारश्रीउच्चानगर-श्रीदेवराजपुरवास्तव्यमहद्विकुश्रावकसमुदायगाढतरोपरोधव-  
शाद् युगप्रवरागमश्रीअप्यसुहस्तिस्वरिलोकौचरावदातप्रकटनपरा दुष्करतरनिरतिचारचारित्रशीलप्रतिपालनलोकौचस्त-  
पोविधानाकृष्टकिङ्करीतभूष्यन्तरामरनिकरसतवहितसांनिध्योद्भूराः समाथितसौवध्यानातिशयनिरुपमगम्भीरदेविकु-  
ञ्जराः सांयत्रिताष्टादशसहस्रशीलाङ्गमहास्थनिकरा नवपदत्रिंशिकास्त्रिगुणजात्याश्वघृष्टव्यासवसुन्धराः पराजय्यानेक-  
मुनिमण्डलीपदातिवर्गासारपरिवारा युगाध्यश्रीजिनकुशलसुरिसुपुरुचकीधरा महाश्लेच्छकुलाकुलगुरुतरश्रीसिन्धुमण्डलो-  
परि महाभिध्यात्वतुदन्तिभूपालोन्मूलनार्थे स्वाश्रितश्रीविधिधर्मघरणीधवसंस्थापनार्थं चैत्रायपद्ये दिग्बिजयसुहृत् वि-  
द्यस्य, स्थाने स्थाने शुभशङ्कनेः प्रेयमाणाः, पुनर्द्वितीयवारं मार्गागतश्रीधर्मनयन-श्रीसेडनगरादिसर्वस्थानेषु साज्ञा-  
भूपालसंस्थापनां कुर्वाणाः, क्रमक्रमेण मरुस्थलीजनपदमुखकल्पश्रीजिसलमेरुहादुर्गमध्यनिवासिसामान्यनराज्यप्रहा-  
सान्दर्यैत्पाठनाय श्रीराजलोक-नगरलोकमहामेलापकेन वाद्यमानेषु द्वादशविधनान्दीतृषु, दीपमानेषु महद्विकुश्रा-  
वकैरभयेषु स्वस्वाप्तयेषु, श्रीविधिसङ्घायकारितसकललोकचेतश्चमत्कारकारिप्रवेशकमहोत्सवपूर्वकं स्वहस्तकमलप्रतिष्ठितं  
निःशेषविभमालाविनाशनसमुद्यतं श्रीपार्श्वनाथदेवाधिदेवचरणारविन्दद्वैतं नमस्कुर्यन्ति स्म ।

पथात्र दिनद्वयपञ्चकैः सकीयचाक्चतुरीसङ्गलतपाञ्जानन्दैर्यच्छेदनं विधाय, सर्वजनसुरासहैः शानावबो-  
धभूपालं संस्थाप्य, श्रीउचकीय-श्रीदेवराजपुरीयसुभावेधराः श्रीपूजयुगवराः, श्रीपर्वतां प्रवर्तमानायामपि साधि-  
ष्यकार्यम्बुदामरनिकराः, किङ्करीभूतमरुस्थलीमप्यस्थानेकभूतप्रेतपिशाचनिकराः, शनैः शनैः स्वच्छन्दलीडया  
द्वैपांसित्यादिनासासमित्यलङ्काराः, मरुस्थलीमहाममुर्धं श्रीपचनराजमार्गवत् समुद्रहृद्य, वाद्यमानेषु द्वादशविधना-  
न्दीतृषु, समग्रलोकनगरलोकमहामेलापकेन नानाविधखर्गपट्टांशुकादिदानपूर्वकं श्रीदेवराजपुरीयमशुदायकारिवगुरु-  
वरपवेशकमहोत्सवाः, स्वहस्तकमलप्रतिष्ठितं श्रीपुगादिदेवतीर्थराजं नमश्नुः ।

१०७. तदनन्तरम्, तत्र चाहनिर्गं धर्ममर्दण्डरत्नविराजमानव्याख्यानसेनाधिपतिना मिथ्यालभूपालपत्राधिप-  
शागनादिनीमालभूपालान् प्राणिहृदयदुर्गमप्यसिताम् भायकेन निर्घाठ्य, श्रीमत्पूजयमहाराजाधिराजाः श्रीउचकी-  
यसमुदायगाढराभ्यर्चनया नानाविधाशौचशक्लियालिनो दुर्जयमिथ्यात्वारनिपालोन्मूलनार्थं तत्राजधानीममायां  
दिन्दुकारके वादीन्द्रद्विषयटपधाननश्रीजितपतिस्त्रियुरुगक्रान्तिचणाम्भोरुहपवित्रितायां श्रीउचार्वा नगरमप्य-  
निगामिचातुर्वर्ण्यश्लेच्छराजलोकसंस्थपमेलापकेन वाद्यमानेषु द्वादशविधनान्दीतृषु, महद्विकुश्रावकैरभयेषु या-  
चरमनोशांतिष्ठाधर्नचयेषु, श्रीउचकीयमहासमुदायकारितमदिसरतरप्रवेशकमहोत्सवाः श्रीचतुर्विधपट्टकालङ्कार-  
श्रीपुगादिदेवं नमस्कृत्य निःशङ्कचित्ता अपसिताः । पश्चात् मरुत्वैकागुगासहैः प्रचण्डपन्निमिष्यान्मूर्धमीधरं  
सरोत्तमगोपधर्मगुलाप्यारोपमश्रेण निर्घाठ्य, भासमेकं यावत् स्थिता, स्वपधाभितं श्रीनिपियधर्महराजं पदमूर्धं सं-

स्याप्य च पुनश्चतुर्मास्युपरि सकलानार्यसिन्धुदेशजनतानुगम्यमानचरणाः श्रीदेवराजपुरवरे श्रीपुगादिदेवं नमश्कुः ।

१०८. पश्चात्तदनन्तरम्, सं० १३८४ वर्षे माघशुक्लपञ्चम्यां प्रवर्धमानशिव्यसंप्रापपाद्यनेकलब्धि-आर्यानार्यदेशजिनधर्मप्रवृत्तिभूपालादिप्रतिबोधनशक्ति-निर्लोभताप्रचनप्रभापानाविधानश्रीद्विरमभाराधन-नानासमपार्थव्याख्यान-संवेगतासुरासुरवशीकरणता-परवादिनिर्घाटन-सर्पनगरग्रामजिनभुवनविभ्रमस्यापनादिनानाजिजलब्धिग्रहण्यदिंसंसारित् श्रीगौतमस्वामि-श्रीसुघर्मस्वामि-श्रीआर्यसुहस्ति-श्रीवयरस्वामि-श्रीआचार्यमन्त्रप्रकटीकरणप्रवीणश्रीवर्धमानद्विर-श्रीनवान्द्विचक्रारश्रीस्वभनकपार्थनाथप्रकटीकरणोपार्जितभूरियशःश्रीअभयदेवद्विर-अनेकदेवाराध्य-महस्थलीकल्प-द्रुमावतारश्रीजिनदचद्विर-वादीन्द्रद्विपटानिद्रावणपञ्चाननश्रीजिनपतिद्विर-नानास्थानसंस्थापितश्रीतीर्थङ्करदेशोत्तुङ्ग-तोरणप्रासादश्रीजिनेश्वरद्विरप्रमुखानेकस्वशोद्धवगणधरयुगप्रधानमालाप्रदातैः तपःक्रियाविद्याव्याख्यानध्यानातिशया-वर्जितकिङ्करीभूतामरमहाम्लेच्छहिन्दुकनरेश्वरमधुररुनिरसमाश्रितचरणाम्भोजयुगप्ररागमश्रीजिनचन्द्रद्विरशिष्पर-जैर्युगप्रधानपदवीप्राप्तयन्त्रप्रत्यन्दप्रवर्धमानप्रतिष्ठा व्रतग्रहण मालारोपण-श्रीमहातीर्थयात्राविधान-समुपार्जितगोक्षी-रघाराधनहीराट्टहासतपुराकरनिकरोज्ज्वलयश. काचकर्पूरवासितविश्वबलयैः सुगुरुचक्रवर्तिश्रीजिनदुशलद्विरभिः स्वैर्यौ-दार्यगाम्भीर्यादिनानागुणगणमुक्ताफिललतालङ्कताग्राश्रीदेवगुणज्ञास्त्रलितप्रतिपालनजात्यजाम्बुनदमुकुटालङ्कतोचमा-ङ्गश्रीजिनशासनप्रभानावलीविधिविक्रीडातिनोदविधानसमुद्यतश्रे०गोपालपुत्ररत्ने०नरपाल सा०वपरसिंह-सा०नन्द-ण-सा०मोखदेव-सा०लाक्षण-सा०आम्बा-सा०कडुया-सा०हरिपाल-सा०वीकिल-सा०चाहडप्रमुखानेकोचकीपम-हामहद्विकसुश्रावक-श्रीदेवराजपुर-श्रीक्रियासपुर-श्रीबहिरामपुर-श्रीमलिकपुरप्रमुखानानागरग्रामरास्तव्यासंख्यसु-श्रावक-राणक-राजलोक-नगरलोकगाढतराम्यर्थनया प्रचुरदिनादारम्य स्थाने स्थाने संजायमानेषु नानाविधेषु नाट-केषु, दीयमानेषु नराविधसुधवाभिर्नारीमिस्तालारासकेषु, हाहाहूहूममानानेरुगायनापलीभिर्गीयमानेषु गीतेषु, पापठ्यमानेषु भट्टघट्टवन्देषु, दीयमानेषु महामहद्विकसुश्रावकै राजलोकैर्नानाप्रकारखर्णरजतकटकतुङ्गमपट्टांशुकादि-वस्त्रादानेषु, संजायमानेषु भविष्यत्क्षुल्लङ्गक्षुल्लिकामालायाः सविस्तरतरेषु पुष्पाङ्कदानेषु, क्रियमाणेषु श्रीसार्धमिक-वास्तव्यश्रीसंघपूजाद्यनेकप्रकारेषु धर्मकृत्येषु, विषमदुःपमकाले प्रवर्तमानेषुपि सुपमाव-ङ्गीचक्रवर्तिपट्टाभिषेकमहोत्स-चानुकारी महामिथ्यात्यदैत्यनिनाशनमधुसूदनानुकारी सकलस्वपक्षमहाजनलोकचेतश्चमत्कारकारी प्रद्विष्टाखिललोक-हृदयकीलानुकारी सौंश्रीविधिवर्धमानप्रज्यसम्प्राप्तिमिथ्यात्वभूपालोन्मूलनश्रीसिन्धुदेशजिजययात्रारणसमुपार्जित-पुण्याज्यलक्ष्मीपाणिग्रहणसंस्तनकः श्रीप्रतिष्ठाव्रतग्रहणमालारोपणादिनिन्दिमहोत्सवः सविस्तरतश्चकिरे । तस्मिन् महो-त्सवे श्रीराणकोद्विधिविचैत्य-श्रीक्रियासपुरविधिविचैत्यमूलनायकयोग्यश्रीपुगादिदेवनिम्बद्वयप्रमुखानेकशिलमयपितृता-मयविम्बाना श्रीमत्पृथ्व्यप्रतरकीर्तिसम्भानुकारिणा प्रतिष्ठा संजाता । नवनिधानानुकारिशुद्धरुनवकं स्वायचं जातम्, क्षुल्लिकारयं च-तत्रामानि भावमूर्ति-मोदमूर्ति-उदयमूर्ति-विजयमूर्ति-हेममूर्ति-भद्रमूर्ति-मेघमूर्ति-पद्ममूर्ति-हर्ष-मूर्ति क्षुल्लिका इति, कुन्धमर्मा-विनयमर्मा-शीलमर्मा साध्य इति । सप्तमत्तनिश्राविकाभिर्माला गृहीता । अनेक-श्रावकश्राविकालोकैः परिग्रहपरिमाणग्रहण-सामायिकारोप-सम्यक्चारोपाः प्रचकिरे ।

१०९. ततश्च सं० १३८५ वर्षे लक्ष्मणच्छन्दोलेङ्कारसारनाटकप्रमाणप्रमाणप्रसिद्धमिद्वान्ताद्यनर्धनविष्यमहापुरवी-थीविज्ञेयजनप्रचारथीभूतवृत्ताप्रनिशातसौवमतिमातितरस्वतसुरद्विरभिः श्रीजिनदुशलद्विरभिः श्रीउचकीय-श्रीपहि-रामपुरीय-श्रीक्रियासपुरीयादिश्रीखरतरसमुदायमेलापके फाल्गुनशुद्धचतुर्थीदिने पदस्थापनाक्षुल्लङ्गमुल्लिकारोपनामा-लाग्रहणादिनिन्दिमहोत्सवः सविस्तरतश्चकिरे । तस्मिन् महोत्सवे पं०कमलाकरगणेश्वरार्चनाचार्यपद प्रदचम्, नूतनदीधि-वक्षुल्लिकानामुत्थापना कृता । विश्वतिश्राविकाभिर्मालाग्रहणं विहितम् । पद्भुभिः श्रावक-श्राविकाभिः परिग्रहपरिमाण-

११०. तदनन्तरम्, सं० १३८६ वर्षे निरुपमाकृत्रिमान्तरदृढतरभक्तिप्रगंभारशङ्कारमुभयं श्रीदेवगुंवांजाचिन्ताम-  
 निविभूषणप्रियं भावुकमस्तकश्रीजिनशासनप्रभावनायनीतलसमुल्लासनधनाधनलीसमवायश्रीषहिरामपुरीपरतरतसमु-  
 दायधनतरोपरोधवदतः सततविहितमुविहाराः स्वकीयसप्रसरज्योतिर्विसरापसारितान्तरधोरान्धकारा जागरूकीकृतवि-  
 चित्राचित्रमाङ्गलिकयप्रगंभाराः स्वीकृतचरणकरपालङ्करणमुश्रावकगणपरिवाराः श्रीजिनकुशलरियुगप्रवरा दिवाकरा  
 इव सकलमविककमलकाननप्रबोधनप्रवदादरा मोहान्धकारतिरस्कारकरणार्थं श्रीवहिरामपुरे सा० भीम-सा० देदा-सा०  
 धीर-सा० रूपाप्रमुखसमश्रीवहिरामपुरवास्तव्यश्रीविधिसमुदायविधीयमानसमग्रस्वक्षपप्रपक्षचेतश्चमत्कारकारिसवित्त-  
 रतरप्रवेशकमहोत्सवाः संमुखगतास्तोकलोकसमुत्कीर्त्यमानकुन्देन्दुमानानेकप्रविवेकशमदमसंयमप्रकाराः कमनीयरू-  
 पलान्पादिप्रमुणगुणश्रेणयः स्वमहिमातिशयनिशितपरशुधारात्तुनविभवह्योविततयः श्रीपार्थदेवविधिमन्दिरे समस्त-  
 समीहितसम्पादनसमर्थसेवं श्रीपार्श्वनाथदेवं नमस्कृतवन्तः ।

तत्र च प्रतिष्ठितं श्रीवहिरामपुरवास्तव्यविधिसमुदायेन श्रीपूज्यपादारविन्दवन्दनार्थमागतनानाम्प्रामवास्तव्यश्राव-  
 कसमुदायेन कौमलकश्रावकैरप्यहमहमिकापूर्वं..... श्रीसार्धमिकवात्मन्य-धीसंघपूजावार्तिमत्रनिर्मापपादिप्रभाव-  
 नासु विधीयमानासु, कार्यमाणेषु नागरिकजननिर्निमेषेक्षणप्रैक्षणगोपेषु, संजायमानेषु स्वाने स्वानेऽन्ये.... धकमलय-  
 जेत्यङ्ग(१)नर्तनपूर्वकं नागरिकलोकैः श्रीपूज्यगुणप्रामवर्णनेषु, कियन्त्यपि दिनानि स्थित्वा, नोभिगिष्यान्धकारतिर-  
 स्कारसमुल्लासश्रीकृत्यकुलपमहाप्रकाशनिवेश्य(२), श्रीवहिरामपुरात् श्रीश्रामपुरीयपरतरसमुदायमाहतरोगोभेन प्रस्ना-  
 य प्राच्ययुगप्रवरागमरसपादप्रधाराभावसुरिभोभूयमागयानतमस्काण्डज्जाडापुरे(३) श्रीक्यामपुगेपरि विजयः श्रीपूज्याः।  
 अत्र च...सा० धीणिगि-सा० जेट्ट-सा० वेला-सा० महाधरप्रमुखश्री.....लारवाहणीयममुदायेन श्रीलारवाहणे मकी-  
 यन्तेऽन्नायकसंमुखानयनपूर्वकम्, वाद्यमानडोलनान्दीतूर्ध्वयनिनादेन शुभरीक्रियमाणेषु दिग्गुणेषु, मिलितव...-  
 पादाथ तेमूली(१)व्रातसंमूलेदतुञ्जानुदभ्रमेणाकाण्डताण्डवाटम्बरं कुर्वन्सु मयूरेषु, मन्दिराङ्गेषु पच्यमानासु वन्द-  
 नो[मालिका]सु श्री...पूज्यानां प्रवेशकमहोत्सवो कारयांचक्रे । तत्र च, आरकलोकैः...संजायमानेषु श्रीवायमि-  
 कनालन्त्याभारितसत्रेषु, जायमानासु सवित्तरतरासु श्रीसंघपूजासु, दिनपटके.....प्रयोथा..... ततः स्थानान् प्रस्था-  
 यन्तारलखोजावाहनादिव.....मानप्रवेशकोत्सवा..... प्रागभागतुगमैरुश्रावकल्लोरानोन्गातरजःपुजात-  
 श्रव्यमा..... (अत्र कियान् निरोपणमुद्रितः प्रविशति) [1]

१११. तदनन्तरम्, नैमार्गिककुलसुहभक्तिप्रगंभारशङ्करद्वितमानवनिश्वधिप्रियमाणैः कुर्यंतं श्रीवयामुगनिरामि-  
 भे० मोहय-सा० कुमारगिह-ज्यव० रतीमगिह-सा० नापू-ना० जट्टप्रमुखश्रावकसमुदायेन युगप्रगगमधीजिनदृग्ज-  
 यरिपादाधारपागमुल्लदन्मलतराहादपयःपटलप्रैश्यमालाद्येनप्रोनु प्रभूतरोमाङ्कुरोदयेन शरीरपन्थेऽन्नायकनाथार्थ-  
 वृक्ककनिवदप्टकं तुत्फाष्टकं दुष्टलोकनिशाकं नदादाप, राजनोरु-नगन्तोरु-सा० पाचियमन्नाकोमलश्रावकरो-  
 मलापके वाद्यमतेष्यपरीकृतमद्रमाष्टपदीयमजलजपप्रगम्भीर्गमंत्रेषु नान्दीविषेषु, दीपमानसु महामिष्यान्प्रतिप-  
 न्यममंष्यधनहन्त्रीषु चक्षरीषु, गीपमानेष्विषयसुप्राभितार्गीमिः मरुतामङ्गलियममाञ्जनामनिषेषु धात्म-  
 कृतेषु, पापशयमानेषु महालपाटकहृदम्बकेन धीपूज्यगजदन्दिदन्नाचशापःपलाशयर्जनीनर्गेषु नन्वकाण्येषु, गीरसा-  
 नेषु वाद्यकपून्डेन ममप्रमर्जनं कर्णभृगतर्जकरालेषु गीषेषु, दूरमनोरुनागोचरगिताम्बरद्वन्द्वेनोन्मद्विष्टान् गीभिः  
 साचन्द्रिद्वारोपंभूमिन्तमोशिविजिस्तविनिमुं कनिजनिजहृत्वाभिः धीपूज्यगणोदन. सावित्रोपयमानकूपरेरा-  
 न्दसर्पानिदिपुषभाराभिगि नि..... पनारतागमा(?) अरो! अर्षोर्ता श्रेयान्पयावर्षीमानादुत-  
 नगमपूज्यं, अरो! अर्षोर्ता दुर्दमकण्ठुपुङ्गवरनीकरुमेटा. अरो! अर्षोर्ता ममपुत्रममपुत्रः मन्तोरुत-  
 नागरर्षोर्ता ममोप्यद्वयर्षोर्ता पचनमादापरसेन म्पुत्रमानयुगप्रका, अरुर्षोर्तापुत्रावरेण ददरंमानां नीद न-

पा(१)श्रिं जीवेत्यादिविधिधाश्रीवादेराशिष्यमाणः, अग्रेगच्छदतुच्छश्रीपूज्यपुण्यविलासाहृतप्रभृतकामकलशायमान-  
कामिनीजनवराङ्गविन्यस्तपूर्णकलशाः, सौवप्रभावातिशयनिशितपरशुप्रद्वनप्रत्युह्वयुह्वल्लिवितानाः, दुष्टम्लेच्छैरपि  
सुश्रावकलोकैरिव वन्द्यमानपादारविन्दाः, वादीन्द्रद्विपघटापञ्चाननाः, श्रीजिनपतिस्वरित्रीअजयमेरुमहानगरश्रीपूज्य-  
राजकारितमहाप्रवेशकमहोत्सवाहुारिणा निरवधिविधिमार्गदुष्टलोकमुखमालिन्यनिर्माणमपीर्क्षकफानुकारिणा सवि-  
स्तरप्रवेशकमहोत्सवेन प्रवेशिताः सार्वकामुकस्वप्रतिष्ठितश्रीयुगादिदेवपादस्वःपादपयुगं वन्दिरे ।

तत्र च विधिमार्गीयक्यासपुरवास्तव्यस्वरतरसमुदायेन कोमलश्रावकैश्च श्रीपूज्यज्ञानध्यानपवित्रचारित्रादिवरेण्य-  
गुणगणावर्जितैः प्रतिदिनविधीयमानशालिदालिहैयङ्गवीनवीनवीनपकाञ्जन्यञ्जनकलावलिवहुलश्रीसाधर्मिकवात्सल्ये-श्री-  
संपूजावारितसत्र-रासकप्रदान-खेलक-नर्तन-प्रेक्षणीयकनिर्माणदिभिर्गुर्वीश्रवचनप्रभावना चिरचयाञ्चके । श्री-  
पूज्याः कौतूहलागततुरुफुननायकान् स्ववचनचातुरीभिराह्लादयन्तः सुप्रथितामध्यात्वान्धकारशूरितरहलुललोहहृदयक-  
न्दरासु योधिलाभमहोद्योतमुञ्जासयन्तः, सुश्रावकभविकक.....  
.....दापयतश्चतुर्मांसुपरि श्रीदेवराजपुरे समस्तसमुदायकारितगुरु-  
तरप्रवेशकमहोत्सवाः श्रीयुगादिदेवं नमस्कृतवन्तः ।

११२. तदनन्तरम्, सं० १३८७ वर्षे श्रे०नरपाल-सा०हरिपाल-सा०आम्बा-सा०लक्षण-सा०वीकलप्रमुखश्री-  
उचकीयसमुदायगुरुतराग्रहवशादात्मत्रयोदशाः.....(अत्र कियान् पाठो नष्टः) ।

तत्र च मासमेकं पूर्ववचिर्भ्रमभावनां.....गूर्जनगर इव प्रकटतयाऽहर्द्वर्गकमलपरिमलं विस्तार्य श्रीउचापुरीतः  
श्रीपरशुरो[को]ड्वास्तव्यसा० हरिपाल-सा०रूपा-सा०आशा-सा०सामलप्रमुखसमुदायद्वाराग्रहवशाद् श्रीजिनकुश-  
लस्वर्यश्चक्रेणइयदि(१)यात्राकरणप्रवणाः प्रभूतश्रावकानुगम्यमाना नानाग्रामेषु श्रीपूज्यागमनोत्कर्णनोद्भवत्प्रमोदाभि-  
रामेषु श्रावकान् वन्दापयन्तः परशुरोकोड्डी वाद्यमानढोलनिनादमेदखिप्रतिनिनादेन गह्वरितेषु दिग्विबरेषु, संमुख-  
मागच्छल्लु शृङ्गारस्फारेषु नागरेषु, संजातगुरुतरप्रवेशकोत्सवा.....श्रीवाहिरामपुर-  
श्रीपार्श्वदेवपादारविन्दं नमश्चक्रुः । तत्र च महतीश्रीजिनशासनप्रभावनां पूर्ववद्विरचयां..... । ततः स्थानात्  
श्रीक्यासपुरादि.....ग्रामे एका रातिर्नगरे पञ्चरात्रमित्यनया रीत्या भविकलोरूपरोपकाराय ..... विहृत्य चतु-  
र्मांसुपरिश्रीदेवराजपुरवरे श्रीयुगादिजिनरन्द्रेन्द्रपादारविन्दं प्रणमुः ।

११३. तदथ सं० १३८८ वर्षे श्रीविमलाचलचूलाङ्कारहारश्रीमन्मानतुङ्गविहारशृङ्गारश्रीप्रथमतीर्थङ्करप्रमुरा-  
हर्द्विम्बनिफ्रप्रतिष्ठापन संस्थापन-व्रतग्रहण-भालारोपणादिमहामहोत्सवानेकदेशप्रदेशविहाराद्यवदातव्रतवितकदली-  
जातव .....संजातपशःकाचकर्षरूपरापारीपरिमलत्रिभुवनोदयस्वरिभिः श्रीजिनकुशलस्वरिभिर्दिशिष्टपरिष्ठानप्यान-  
चलेन सम्यक् समयं परिभाष्य निजश्रुजासमुपाजित.....निजितपारिजातकल्पद्रुमश्रीउचापुरी.....किंकस्तनको...  
लितसौवर्णतिलकायमानश्रीविधिममुदायश्रीवाहिरामपुर श्रीक्यासपुर-श्रीसिलारवाह्यादिनाननगरग्रामवास्तव्यमर्मि-  
न्युदेशश्रुसमुदायमेलालके प्रभूतदिनेभ्य आरभ्य नरीनुत्यमानेषु खेलकवितानेषु, दीपमानेषु श्रावकलोकेन सकर्णकर्म-  
सुधासेकेषु रासकेषु, संजापमानेषु श्रीसाधर्मिकवात्सल्यवावारितसत्रश्रीसंपूजादिषु, दीपमानेषु श्रावकलोकेन सततम-  
मेयेषु खसापतेयेषु, वितन्यमानेषु भाविलुङ्ग-क्षुल्लिकानां पुष्पाङ्केषु अ.....णायां स्वपक्ष-परपक्षचैतथमत्कारकारी  
पदस्थापन-व्रतग्रहण-भालारोपण-सामायिकारोपण-सम्यक्कारोपादिनन्दिमहामहोत्सवे मार्गशीर्षशुद्धशमीदिने  
निर्माणपमासो । तस्मिन् महोत्सवे गाम्भीर्योद्यार्थ्यर्थस्थैर्यार्जवविद्वलरुपितवर्गमितसत्सत्सौविहित्यज्ञानदर्शनचारित्रवि-  
शदपदत्रिंशत्स्वरिगुणगणमणिविषणीनां पं०वरुणकीर्तिणानीनामाचार्यपदं प्रदत्तम्-नाम श्रीतरुणप्रमाचार्याः; पं०लन्ध-



पाध्यायसंस्थापनास्वपुत्रिकादीक्षादापनप्रमुषदन्तिदन्तावदातांवादातत्रातसंजातसुपशःकुसुमश्रेणीसौरभमसुरभितसर्व-  
दिवकुटुम्बकेन साधुराजहरिपालसुश्रावकेण पितृव्यसाधुकदुक-आतसाधुकुलधर-सत्पुत्रसाधुशाङ्गण-सा० यशोधवल-  
प्रमुखसकलपरिवारपरिकलितेन सर्वेषु देशेषु कुङ्कुमपत्रिकाप्रेषणपूर्वं चतुर्दिक्षु सर्वस्थानश्रीविधिसंधान् सनामन्वय, मासै-  
कादारभ्य प्रतिदिने श्रीसाधर्मिकवात्सल्यादिनानाप्रभावनासंधपूजादिमहामहोत्सवेषु स्वभुजोपासितानेकसहस्रसंख्य-  
रूप्यटङ्ककव्ययेन याचकजनमनःसन्तोषोपपूर्वकं कारितः ।

तस्मिन् महोत्सवे साधुआम्बा-सा०ज्ञाना-सा०मम्पी-सा०चाहड-सा०धुस्सुर-श्रे०मोहण-सा०नागदेव-सा०गोसल-  
-सा०कर्मसिंह-सा०खेतसिंह-सा०बोधिप्रमुखनानास्थानवात्सव्यमहामहोद्दिक्सुशानकैश्च स्वकीयं स्वापतेयं सफली-  
चक्रे । तस्मिन्नेव महोत्सवे जयचन्द्र-शुभचन्द्र-हर्षचन्द्रमुनीनां महाश्री-कनकश्रीसुल्लिहायाश्च श्रीजिनपद्महरिभिर्दीक्षा  
प्रददे । यं०अमृतचन्द्रगणेशवाचनाचार्यपदं प्रदत्तम् । अनेकश्राविकाभिर्माता गृहीता । अनेकश्रावक-श्राविकाभिः श्रीस-  
म्यत्वारोप-श्रीसामायिकारोप-परिग्रहपरिमाणानि गृहीतानि । तदनन्तरं ज्येष्ठपुत्रकनवस्यां साधुराजहरिपालकारित-  
श्रीयुगादिदेवप्रमुखाहोद्दिम्बानां स्तूपयोग्य-श्रीजेसलमेरुयोग्य-श्रीक्यासपुरयोग्य-श्रीजिनकुशलद्वीणां मूर्तिव्यस्य  
प्रतिष्ठापनोत्सवः पदस्थापनानहोत्सववत् सविस्तरतरः कृतः । तस्मिन्नेव च दिने महता विस्तरेण श्रीचतुर्विधसंघम-  
होमेलापकेन श्रीजिनकुशलद्वीणां मूर्तिः स्तूपे संस्थापिता । तदनन्तरं पञ्चभिषेकमहोत्सवोपरि समागतश्रीजेसलमेर-  
वीयश्रीविधिसमुदायगाढतराभ्यर्चनया श्रीउपाध्याययुगलप्रमुखसाधुद्वादशपरिवारपरिवृतः श्रीपूज्याः श्रीजेसलमेरवी-  
यश्रीविधिसमुदायकारितस्वपक्ष-परपञ्चातच्छम्भेच्छानन्दकारिमविस्तरतरप्रवेशकमहामहोत्सवपूर्वकं श्रीपार्श्वनाथदेवा-  
धिदेवं नमस्कृतवन्तः । प्रथमा चतुर्मासी च तत्र कृता ।

११६. तदनन्तरम्, सं० १३९१ वर्षे यौपदिदशम्यां मालारोपादिमहोत्सवं सविस्तरतरं विधाय, लक्ष्मीमाला-  
गणिन्याः प्रवर्तिनीपदं दत्त्वा, श्रीपूज्या वाग्भटमेरूपरि विहृताः । तत्र च सा०प्रतापसिंह-सा०सातसिंहप्रमुखश्रीसमु-  
दायेन श्रीचाहमानकुलप्रदीपराणकश्रीशिखरप्रमुखश्रीराजलोकनगरलोकसंमुखरानयनपूर्वकं प्रवेशकमहोत्सवं विधाय  
श्रीयुगादिदेवमहातीर्थं नमस्कारिताः । तत्र च दिनदशकं श्रीसमुदायस्य समाधानं समुत्पाद्य, श्रीपूज्याः श्रीसत्यपुरो-  
परि विहृताः । श्रीसत्यपुरे च राजमान्यसर्वसंघकार्यनिर्वाहणसमयसाधुनिम्बप्रमुखश्रीसमुदायेन राणकश्रीहरिपालदे-  
वप्रमुखश्रीराजलोकनगरलोकमश्रुरानयनपूर्वकं प्रवेशकमहामहोत्सवः प्रचक्रे । श्रीमहावीरदेवं च श्रीपूज्या नमस्कृ-  
तवन्तः । तत्र च माघशुक्लपष्ठ्यां श्रीसमुदायकारितं सकलजनचेतथमत्कारकारकं व्रतग्रहणमालारोपादिमहोत्सवं  
चक्रुः । श्रीपूज्यैस्त्वस्मिन् महोत्सवे नयमागर-अभयमागरसुल्लोकयोर्दीक्षा प्रदत्ता । अनेकश्राविकाभिर्माता प्रगृहीता ।  
श्रीसम्यत्वारोपश्च कृतः । तत्र च किंचिद्दूतं भागमेकं श्रीसमुदायस्य ममाधानमुत्पाद्य, पश्चात् श्रीआदित्यपाठके  
संघपुरुषसा०वीरदेवादिदेवसमुदायकारितसविस्तरतरप्रवेशकमहामहोत्सवेन श्रीशान्तिनाथमहातीर्थं नमस्कृतः । ततो  
माघशुक्लपूर्णिमायां सा०जाहणकुलावतंससा०तेजपालप्रमुखश्रीमश्रुदायकारितः सविस्तरतरः प्रतिष्ठामहामहोत्सवो निर-  
चयाञ्चक्रे । तस्मिन् महोत्सवे श्रीशुभादिदेवप्रमुखजिनबिम्बपक्षशत्याः श्रीपूज्यैः प्रतिष्ठा विदधे । ततः फाल्गुनाद्यष्टौ-  
दिने मालारोपण-श्रीसम्यत्वारोपादिमहोत्सवो विरचयामासे ।

ततः सं० १३९२ वर्षे मार्गशीर्षविषष्टीदिने शुद्धरुषोरुत्थापनाश्राविकामालाप्रहणादिमहोत्सवश्चक्रे ।

११७. ततः सं० १३९३ वर्षे कार्तिकमासे श्रीपूज्यैलघुनयोभिरप्यवश्यकर्त्तव्यतया साधुतेजपालकारितमविस्तर-  
तरघनसारनन्दिपूर्वकं प्रथमोपधानतपो व्यूढम् । ततः श्रीश्रीमालकुलावतंससा०मोमदेवसुश्रावक्य श्रीजीरापट्टीममल-  
ङ्कारधीपार्श्वनाथजिननिर्वासविहितगाढतराभिग्रहस्य निरसिक्रया फाल्गुनाद्यदशम्यां श्रीपचनान् प्रस्थाय, नारउत्स्थाने

मं० गेहाकेन कारितमहाप्रवेशका दिनद्वयमवस्थाया श्रीआशोटास्थाने श्रीपूज्याः समायुः । तत्र च साधुश्यामलकुलो-  
त्तसेन श्रीशत्रुञ्जयादिमहातीर्थयात्रनिर्माणविश्वविख्यातनानावदातेन सङ्घपुरुषसाधुवीरदेवसुश्रावकेण श्रीविधिसमुदा-  
यसहितेन राज०श्रीसिं(रु)द्रनन्दनराज०गोधा-सामन्तसिंहादिसकलराजलोकनागरिकसम्मुखानयनपूर्वकं श्रीभीमपल्ली-  
कारितयुगप्रवरागमश्रीजिनशुशलस्ररिप्रवेशकमहोत्सववत् श्रीपूज्यानां सविस्तरतरः प्रवेशकमहोत्सवशक्रे । ततश्च साधु-  
मोखदेवकारितविहारक्रमोपक्रमं विषमकालेऽप्यस्मिन् चौरचरटप्रचारप्रचुरेऽपि मार्गे नगरमार्गं इव निःशङ्काः श्रीपूज्या  
बृजद्रीस्थाने पादावधारयाश्चक्रुः । तत्र च साधुछजलविपुलकुलगगनतलसमलङ्करणसहस्रकिरणकल्पेन सा०मोखदेव-  
सुश्रावकेण सर्वश्रीविधिसमुदायसहितेन चाहमानवंशमानससरीराजहंससमानस्वयाचाप्रदाननिवर्हिणप्रधानराज० श्रीउ-  
दयसिंहप्रमुखराजलोकनागरिकलोकसम्मुखानयनेन महाप्रभावनापुरःसरप्रवेशकमहामहोत्सवशक्रे ।

११८. तत्तत्रैव वर्षे राज०श्रीउदयसिंहमहाप्रसादमासाद्य साधुराजमोखदेवेन साधुराजसिंहतनय-सा०पूर्णसिंह-  
सा०धनसिंहादिसकलस्वकीयकुटुम्बसहितेन श्रीअर्जुदाचलादितीर्थयात्रां कर्तुं श्रीपूज्या विज्ञापयामासिरे । श्रीपूज्यैश्च  
ज्ञानध्यानविधानसमयकृतसर्वस्वपूर्वजयुगप्रधानपरम्परावदातैर्निर्दिष्टमिति परिभाष्य श्रीतीर्थयात्रामहत्प्रभावनाङ्गं श्री-  
संम्यक्तबनिर्मलतानिदानं सुश्रावकाणां कर्तव्यैवेति तद्विधाने समादेशः प्रादापि । ततश्च श्रीसपादलक्षीय-श्रीश्रीमालीय-  
सा०बीजा-सा०देपाल-सा०जिनदेव-सा०साङ्गाप्रमुखस्वपक्ष-परपक्षश्रावकसङ्घकुटुम्बपत्रिकाप्रदानेन, मार्गे च सा०मूल-  
राज-सा०पद्मसिंहाभ्यां सर्वसङ्घस्य शुद्धौ क्रियमाणायां समाकार्यं, चैत्रशुक्लपौर्णिदिने आदित्यवारे श्रीपूज्यानां पार्श्वे  
श्रीतीर्थयात्रायोग्यनूतनकारितश्रीदेवालये श्रीशान्तिनाथत्रिम्बस्व संस्थापनावासक्षेपः साधुमोखदेवेन कारयामासे । ततो-  
ऽष्टाङ्किकमहोत्सवान् महाप्रभावनया विधाय चैत्रशुक्लपूर्णिमायां श्रीवृजडीवास्तव्य-सा०काला-सा०कीरतसिंह-सा०  
होता-सा०मोजाप्रमुखश्रीविधिसंघ-मं०ऊदाप्रमुखान्यश्रावकसंघमेलापकेन श्रीदेवालयप्रचलनसूहृत् जज्ञे । श्रीपूज्या  
अपि श्रीलक्ष्मिनिधानमहोपाध्याय-वा०अमृतचन्द्रगणिप्रमुखसुनिमतल्लिकापञ्चदश-श्रीजयद्विमहत्तराप्रमुखसाध्यपट-  
कपरिवृताः श्रीसङ्घेन सह श्रीतीर्थयात्रायां प्रचेतुः ।

११९. ततः श्रीवृजद्रीसङ्घः श्रीसपादलक्षीयसङ्घेन सह मिलित्वा श्रीनाणातीर्थे समायौ । तत्र च सा०धराप्रमुख-  
श्रावकशुन्दस्त्रीकृतश्रीन्द्रपदादिनिर्माणेन महतीं प्रभावनां विधाय, श्रीमोखदेवप्रमुखश्रीसङ्घः श्रीमहावीरमहाप्रसादे  
रूप्यटङ्क शत २ द्रव्यं सफलीचकार । ततः श्रीपूज्याः शुभशुद्धैः प्रोत्साह्यमानाः समस्तश्रीविधिसङ्घेनाहमहामिकया  
वरिवस्वयमानाः श्रीअर्जुदाचलालङ्कारसकललोकमनोपहारविज्ञानविधानसारश्रीविमलविहार-श्रीलृग्गिगविहार श्रीतेजसिंह-  
विहारमूलालङ्कारश्रीनाभेय-श्रीनेमीश्वरप्रमुखश्रीतीर्थकरवारं भावसारं नमथक्रुः । तत्र च सा०मोखदेवप्रमुखश्रीविधिसङ्घेन  
श्रीशक्रपदामात्यपदादिपदनिर्माणमहाध्वजारोपणावारितसत्रादिमहामहोत्सवपरम्परां विरचयता रूप्यटङ्कशत ५ प्रमाणं  
द्रविणं सफलीचक्रे । ततः श्रीप्रह्लादनपुरस्तूपालङ्कारश्रीमज्जिनपतिस्त्रिसुगप्रधानमूर्तिं सुदृस्थलाग्रामे श्रीपूज्याः सकलस-  
ङ्घसमन्विताः प्रणोमूः । ततः श्रीजीरापल्लथां जाग्रत्प्रभावकमलासनाथश्रीपार्श्वनाथं श्रीपूज्याः श्रीसङ्घसमन्विताः प्रणमन्ति  
स । तत्र च श्रीसङ्घेन श्रीशक्रपदादिमहोत्सवान् विधाय रूप्यटङ्कशत १५० कृतार्थीकृतम् । ततः स्थानात् प्रस्थाय श्रीसङ्घः  
श्रीचन्द्रावल्यां सकलसङ्घपादावधारणं विदधे । तत्र च श्रीसङ्घस्य साधुज्ञाञ्जण-मं०कृपाप्रमुखनागरिकसुश्रावकलोकैर्न  
श्रीसाधर्मिकवास्तव्यश्रीसङ्घपूजादिविधानेन बहुमानप्रदानं प्रचक्रे । श्रीसङ्घेन च तत्रापीन्द्रपदादिविधानेन श्रीपुरादि-  
देवप्रासादे रूप्यटङ्कशत २ कृतार्थयामासे । ततोऽपि प्रस्थाय श्रीअरासने श्रीनेमीश्वरप्रमुखपञ्चतीर्थां श्रीपूज्याः श्रीसङ्घेन  
सह नमन्ति स । तत्रापि श्रीसङ्घेन पूर्ववच्छक्रपदादिनिर्माणेन रूप्यटङ्कशत १५० सफलं निर्ममे । ततश्च श्रीतारङ्गके  
श्रीकृमारपालभूपालकीर्तनं श्रीअजितस्वामिनं श्रीसङ्घः प्रणनाम । तत्र च विशेषतरं श्रीसङ्घेन श्रीशक्रपदादिनिर्माणेन  
रूप्यटङ्कशते २ सफले विदधाते । ततो व्याघ्रव्य श्रीसङ्घः श्रीत्रिशुद्धमंके समागम् । तत्र च मं०साङ्गापुत्ररत्न-मं०-

मण्डलिक-मं० वयरसिंह-सा० नेमा-सा० कुमारपाल-सा० महीपालप्रमुखत्रिशङ्कभकसङ्गेन महाराजश्रीमहीपालाङ्गज-महाराजश्रीरामदेवविज्ञपतेन कृत्वा, तदीयनिरोपमासाद्य निःस्त्रानेषु वाद्यमानेषु सविस्तरतः श्रीसङ्घस्य नगरप्रवेशक्रम-हामहोत्सवश्चक्र । श्रीपूज्यैश्च सर्वचतुर्विधसङ्घसमन्वितैः सवित्तरा सर्वप्रासादेषु चैत्यप्रपाटी विदधे । श्रीसङ्घश्च श्रीशक्रपदादिनिर्माणेन रूप्यटङ्कशत १५० श्रीपार्श्वनाथप्रासादे कृतार्थीचकार ।

१२०. ततः प्रतिदिक्प्रसर्पत्प्रतिनिनादश्रीपूज्यनिष्प्रतिमप्रतिभैवभावदिगुणगणसंभवयशोवादसमाकर्णनेन संजातकौतुकसमाजः श्रीरामदेवमहाराजः सा० मोखदेव-मं० मण्डलिकाप्रे प्रतिपादयामास-‘युष्मद्गुरुणां लघुवयसामपि महान् प्रज्ञाप्रकर्षः श्रूयते । अतस्तदवलोकनार्थमहं तत्रागमिष्यामि; अथवा तान् मम पार्श्वे समानयत’ । ततः सा० मोखदेव-मं० मण्डलिकाभ्यां श्रीपूज्या महताऽऽग्रहेण विज्ञप्सन्ते स्म । ततस्तदाग्रहाच्छ्रीपूज्याः श्रीलब्धिनिधानमहोपाध्यायादि-साधुपरिवृताः श्रीरामदेवमहाराजसभायां पादा अवधारितवन्तः । श्रीरामदेवमहाराजः श्रीपूज्यान् समागच्छतोऽवलोक्य स्वकीयासनात् समुत्थाय श्रीपूज्यपादान् ननाम । श्रीपूज्योपवेशनार्थं चतुष्पिकां मोचयामास च । श्रीपूज्यैश्चाशीर्वादः प्रादायि । तत्र चोपविष्टेन श्रीसारङ्गदेवमहाराजव्यासेन खोपज्ञं काव्यं व्याख्यायि । तत्काव्ये च श्रीलब्धिनि-नमहोपाध्यायैः क्रियापदे कूटं निरकास्यत । ततः श्रीरामश्चित्ते चमत्कृतः । पुनः पुनः सभायां वमाण-‘अहो ! अनीपासुपाध्यायानां जाग्रत्समग्रशास्त्ररहस्यानां महाभट्टवद्वाक्पडुता, वेनास्माकमपि सभायां व्यासवचने कूटं निष्कासितम्’ । ततः सर्वाऽपि राजपर्वत् मस्तकधुनेन ताण्डवं नाटयन्ती श्रीपूज्यराजश्रीमदुपाध्यायमिश्रगुणवर्णनपरा जज्ञे । ततः श्रीपूज्यैः श्रीराममहाराजवर्णनं तात्कालिकयार्यया विदधे । तथा हि-

विहितं सुवर्णंभारङ्गलोभिनाऽपि त्वयाऽद्भुतं राम ! ।

यत्ते लङ्कापुरुषेण ननु वदे श्रीर्वरा सीता ॥

[९३]

ततः सर्वाऽपि सभा चमत्कृता । ततः श्रीरामेण श्रीसिद्धसेनप्रमुखाचार्यान् समाकार्य, तत्प्रत्यक्षं श्रीपूज्यपार्श्वोत् कायस्थकथितं विकटाक्षरं काव्यमलेख्यत । तत्र श्रीपूज्यैर्नूतनदृष्टराजसभायामपि धाष्टर्गशास्त्रिभिवारमेकं वाचयि-स्रोत्सुंस्य च मुखे नाममालामनवच्छिन्नवाण्या गुणयत् सर्वकं समालिख्यत । लोकश्च सर्वाऽपि श्रीपूज्यानां संमुखो बभूव । ततः पुनरप्येकस्यैकस्य श्लोकस्य प्रत्येकमेकमेकमधरमाचार्य-व्यास कायस्थपार्श्वोत्पित्वा श्रीपूज्यैरुत्सु-सितम् । एवं द्वितीयवारं तृतीयवारमित्यादि यावत् श्लोकत्रयं सम्पूर्णमजनिष्ट । ततः श्रीपूज्यैर्निष्प्रतिमप्रज्ञापोषविदो-पशास्त्रिभिः सम्पूर्णश्लोकत्रयं पट्टकेऽलेखि । तेन च मुकमंणा विश्वत्रयेऽपि स्वकीयश्लोकराजहंसः सेलनार्थमप्रेषि । ततः सर्वाऽपि राजसभा-‘अद्यापि त्रिपमकलिकालविलुप्तसकलकलात्स्वपि लोकेषु श्रीजैनशासने विलोच्यन्तेऽतिशा-यिकलाकलापकलिताः श्रीस्ररिवराः’-इति श्रीपूज्यगुणगणवर्णनपरा जज्ञे । श्रीपूज्याश्च सराजराजसभाचेतयमत्कारं समुत्पाद्य श्रीसङ्घे पादावधारयाञ्चक्रुः ।

१२१. तत्रथन्द्रावत्यादिमार्गेण श्रीचतुर्विधसङ्घेन वरितस्वमानाः श्रीपूज्या वृजडीस्थाने पादावधारयामासुः । तत्र च निर्व्यूढश्रीसङ्घप्राग्भारेण निर्निदानस्वर्णरूप्यवस्त्राश्चप्रमुखवस्तुपुतिानमहादानप्रदानपवित्रीकृतामेयसकीयस्वाप-तेयसारेण सङ्घपुरुषसाधुमोखदेवसुधावकवरेण श्रीउदयसिंहमहाराजप्रमुखराजलोकनागरिकलोकसंमुखप्रागमनेन..... वाद्यमानेषु सर्वेष्वपि वाद्येषु श्रीसङ्घसहितश्रीदेवालयस्य प्रवेशक्रमहामहोत्सवो विरचयामासे । श्रीपूज्याश्च सपरिवारा-स्त्र चतुर्मासी चक्रुः ॥

॥ समाप्तिमगमदत्रेयं गुर्वावली ॥

# वृद्धाचार्यप्रबन्धावलिः ।

## १.-श्रीवर्द्धमानसूरिप्रबन्धः ।

\*

अथ वृद्धाचार्याणां प्रबन्धाः संक्षेपेण कथ्यन्ते-

१. अहमया कयाई सिरिवद्धमाणसूरिआयरिया अरन्नचारिगच्छनायया सिरिउजोयणसरिपट्टधारिणो गामाणु-  
गामं दूञ्जमाणा अप्पडिबंभेण विहारेण विहरमाणा अब्बुयगिरितलहड्डीए कासदहगामे समागया । तयपंतरे विमल-  
दंडनायगो पोत्ताडवंसमंडणो देसभागं उग्गाहमाणो सोवि तत्थेव आगओ । अब्बुयगिरिसिहरं चडिओ । सव्वओ  
पव्वयं पासिचा पमुइओ चित्ते चित्तेइ-‘अत्थ जिणपासायं करेमि’ । ताव अचलेसरदुग्गवासिणो जोगी-जंगम-तावस-  
सन्नासि-माहणप्पमुहा दुद्धा मिच्छत्तिणो मिलिऊण विमलसाहुं दंडनायगं समीवं आदत्ता । एवं वयासी-‘भो विमल !  
तुम्हाणं इत्थ तित्थं नरिथि । अम्हाणं तित्थं कुलपरंपरायातं वड्डइ । अओ इहेव तव जिणपासायं काउं न देमि’ । तो  
विमलो विल्लखो जाओ । अब्बुयगिरितलहड्डीए कासदहगामे समागओ । जत्थ वद्धमाणसूरी समोसड्डो तत्थेव । गुरुं  
विहिणा वंदिऊण एवं वयासी-‘भगवन् ! इहेव पच्चए अम्हाणं तित्थं जिणपडिमारुवं वड्डइ त्ति नो वा ?’ । तओ गुरुणा  
भणियं-‘वच्छ ! देवयाआराहणेण सव्वं जाणिज्जइ । छउमत्था अरुहा कइं जाणंति’ । तओ तेण विमलेण पत्थणा कया ।  
किं बहुणा वद्धमाणसूरीहिं छम्मासीतवं कयं । तओ धरणिंदो आमओ । गुरुणा कहियं-‘भो धरणिंदा ! धरिमंतअधि-  
ट्टायया चउसत्तिं देवया संति । ताण मज्जे एगोवि नागओ, न य किंचि कहियं, किं कारणं ?’-धरणिंदेणुत्तं-‘भगवन् !  
तुम्हाणं धरिमंतस्स अक्खरं वीसरियं । असुद्धभावाओ देवया नागच्छंति । अहं तवबलेण आगओ’ । गुरुणा उत्तं-  
‘भो महाभाग ! पुव्वं धरिमंतं सुद्धं करेहि । पच्छा अन्नं कज्जे कहिस्सामि’त्ति । धरणिंदेणुत्तं-‘भगवन् ! मम सत्ती नत्थि  
धरिमंतमखरस्स सुद्धसुद्धं काउं तित्थंकरं विणा’ । तओ धरिणा धरिमंतस्स गोलओ धरणिंदस्स समप्पिओ । तेण  
महाविदेहखिचे सीमंधरसामिपासे नीओ । तित्थंकरेण धरिमंतो सुद्धो कओ । तओ धरणिंदेण धरिमंतस्स गोलओ  
सूरीण समप्पिओ । तओ वारत्तपधरिमंतसमरणेण सव्वे अहिट्टायया देवा पच्चक्खसीभूया । तओ गुरुणा पुट्टा-‘विमल-  
दंडनायगो अम्हाणं पुच्छइ-‘अब्बुयगिरिसिहारे जिणपडिमारुवं तित्थं अच्छइ णवा’ । तओ तेहि भणियं-‘अब्बुयादे-  
वीपासायवामभागे अदुबुदआदिनाहस्स पडिमा वड्डइ । अखंडक्खयसत्थियस्स उवरि चउसरपुप्फमाला जत्थ दीसइ,  
तत्थ रणिणयव्वं’ । इय देवयावयणं मुच्चा गुरुणा विमलसाहुस्स पुरओ कहियं । तेण तहेव कयं । पडिमा निगया ।  
विमलेण सव्वे पासंडिणो आहूया । दिट्ठा जिणपडिमा । सामवयणा जाया । तओ पासायं काउमारद्धं विमलेण ।  
तओ पासंडेहिं भणियं-‘अम्हाणं भूमिं पूरिऊण दव्वं देहि’ । तओ विमलेण भूमिं दव्वेहिं पूरिऊण दव्वं दिन्नं । तओ  
पासायं । वद्धमाणसूरीहिं तित्थं प[य]डियं णवणपुयाइयं सव्वं कयं । तओ गयकालेण मिच्छत्तिणो तस्माधीणा  
जाया । तओ बावन्नजिणालओ सोवण्णकलसदंडधयसहिओ पासाओ निम्मविओ विमलेण । अट्टारसकोडी तेवन्नलक्ख-  
संखो दहो लग्गो । अज्जवि अरंडो पासाओ दीसइ ॥ इय वद्धमाणधरिण्यवंधो समतो ॥

जायइ । पच्छा अभयदेवसूरिपोसहसालाए गओ । दिट्ठो सुविहियचूडामणिनिग्गंथो आपरिओ । तस्स सपासे दिक्खा गहिया । क्रमेण जोगवाहाविऊण गीयत्थो कओ । सब्वसंचअवभत्थणासओ एगारह सड सतसट्ठे वरिसि अभयदेवसूरिणा सूरिमंतो दिन्नो जिणवल्लहसरि इइ से नामं विहियं । सब्वत्थ विहरइ विहियपक्खथापगो सुविहियचक्खूडामणी । संवेगपरायणो विहरतो मेइणि मेदपाडदेसे चित्तकूडदुग्गे संपत्तो । तओ मिच्छत्तवहुलो लोओ जिणधम्मं कोवि न पडिवजेइ । तओ सरी चामुंडादेवीपासाए ठिओ । तओ रयणीसमए चामुंडा आगया । कंषियं पासायं । गुरुणं उवसग्गं काउमहात्ता । सूरिणा सूरिमंतवलेण खीलिया वसीरूया । छागाहजीनवहवलि छंडावियं । जिणसासणस्स पभावणा जाया । देवया भणियं—‘मम नामेण गच्छनामं वुणह, जहा संतुट्ठा महायं करेमि तुम्हं’ । गुरुणा तहेव कयं । सब्वे लोया बोहिया । सम्मत्तं दिवं ।

५. अन्नं च—जिणवल्लहसूरिसमीवे एगो सागरो साहारण इइ नामो निद्धणो धम्मिओ चिट्ठ । गुरुणा तस्स दसकोडिदच्चस्स परिगहो दिन्नो । रायपहाणपुत्तेण हसियं लोगममकसं । एसो दरिदी गिहे गिहे भोगणं करेइ । एयस्स दसकोडिदच्चपरिगहं पसह । गुरणो वि तारिसा । तओ गुरुणा उचं—‘ओ पहाणपुत्त नो हसियव्वं एयस्स । एसो तन मत्थयाओ [क]क्कर उचारिस्सइ चि कट्टु । अन्वया गुरुयणाओ साधारणसागणेण पंचसयमयणसगडाणि गहियाणि । तम्मज्जे उतरि मयणं मज्जे सुखं । विविय धणट्ठो जाओ । रायपहाणपुत्तो रत्ता दंढिओ, बंधिओ । दच्चं नत्थि तस्स सिरे कक्कर दिन्नं । साहारणसागणेण कोडिदच्चं दाउण छोडाप्रिओ । जिणपासायं कारियं चित्तकूडनगरे । जिणवल्लहसूरिणा पडियं । सेतुजे संघादियो जाओ । साहारणसागरो देवगुरुययमत्तो परमसुमागो ।

अन्नं च — वाग्दडेसे दससहस्रेहाणि सिरिमालायं पडिबोहियाणि जिणवल्लहसूरिणा । पिडाविसुद्धिपगरणं च रइयं ॥ इति जिनवल्लहसूरिप्रवचनः ॥४॥

### ५.-श्रीजिनदत्तसूरिप्रवचनः ।

६. जिणवल्लहसूरिपट्टे जुगप्पहाणा जिणदत्तसूरिणो अणहिलपुरपत्तणे विहरिया । तत्थ सिरिनागदेवो नामसागरो परिवसइ । तस्स संसओ जाओ जुगप्पहाणस्स । सब्वे साहुणो अभिमाणसणेण नियनियगच्छे अप्पाणं आयरियं जुगप्पहाणत्तं वपंति । सम्मं न नजइ फेगावि । तओ नागदेवमागओ गिरनपरच्चए अविनादेवीसिहरे गंतुण अट्ठमं तवं कयं । अंधिका पच्चक्खीभूया । तस्स हत्थे अस्सरा लिहिया । एवं वयामी—‘ओ नागदेवसागगा ! तुह चित्तं जुगप्पहाणस्स ससओ अत्थि । गच्छइ णं देवाणुष्पिया तुमं अणहिलपुरपत्तणं । सच्चाए पोमहसालाए जुलमीगच्छठियाणं आयरियाणं दारमह नियदत्थं । जो हत्थक्कराणि वाएइ सो जुगप्पहाणो नायच्चो’ । तओ देवायणणेण नागदेवो तत्थ गओ । सच्चाए पोमहसालाए आयरियाणं नियदत्थं दरिमियं, न कोवि वाएइ । तओ सो सागओ उरतरगच्छादिरस्स जिणदत्तसूरिणो पोमहसालाए गओ । वंदिओ सरी दिट्ठो हत्थो । सूरिणा मोणं कयं । महाणुभाया नियणुणयुत्तिं न कुच्चंति, लज्जति य । तओ सूरिणा तस्म समणोनामगस्म हत्थे वामक्खेवो कओ । गुरुण आणमनसाओ सीसेण इइ अस्सराणि वाइयाणि—

दासातुदाम्सा इव सन्वदेवा यदीयपादाञ्जतले लुठन्ति ।

मरुत्थलीकल्पतरुः स जीयाद् युगप्रधानो जिनदत्तसूरिः ॥१॥

तओ नागदेवेण निस्ससएण तिपयादिणीररेमाणो वारमात्तचवंदणं वंदिओ । सब्वविक्खाओ जाओ ।

७. अन्वया जिणदत्तसूरि अन्नयमेरदुग्गं पइ विहरिओ । तत्थ चउमट्ठिजोगिणीपीटं । जया जिणउत्तवरी इत्थ चिट्ठिस्सइ, तथा अम्हाणं प्यामवतो न भविस्सइ ति कट्टु, जोगिणीहिं विचित्तिऊण चउमट्ठिमारियास्सं काउण

वक्त्राणमञ्जे समागया । दुद्धा देवीओ छलणत्थं । तओ धरिणा धरिमंतधिद्वायगवसेण खीलिया थंभिया । उट्टिउं न सक्ता । तओ दयावसेण मुक्ता । अनुन्ने वायावंधो कओ । जत्थ अम्हे न तत्थ तुम्हे । अहंउपीठे तुमे न गंतंवं । पढं एणं उजेणीपीठं । वीयं दिह्णीपीठं । तहयं अजयमेरदुग्गे पीठं । अद्धं भरवच्छे । जोगिणीहि भणियं—‘भो भट्टारगा । जो तुम्ह सीसो तुम्हं पट्टे सो अम्हाणं पीठे न विहरइ । जइ विहरइ तथा वध-वंधादिकट्टं सहइ’—त्ति नियमो जहा जिण-हंसधरी । तओ जिणदत्तधरीहि तह त्ति कयं । तओ आयरिया सिधुमंडले विहरिया । तत्थ इगलक्वासीइसहस्साणि ओसवालाणं गेहाणि पडिबोहियाणि । तओ उच्चनगरे गया । तत्थ मिच्छदिट्ठी हि एगो माहणो छुहोअरणो रोगघत्थो सुयमाणो जिणालए मुक्को मडओ । तओ संघेहिं जिणदत्तधरी चिन्नत्तो—‘भगवन् ! माहणेहिं दुट्टत्तं विहियं । किं किजइ ?’ । तओ गुरुणा परकायप्पवसेविज्जाए जिनालयाओ मडयं माहणं सजीवं काऊण नारायणपासाए खित्तं । माहणा सचित्ता जाया । गुरुसमीचे आगया माहणं दट्ठूण चरणे पडिया । पुणरवि गुरुणा मडयं सजीवं काऊण सयमेव मसाणभूमीए गंतूण पडिओ । जिणसासणस्स महिमा कया । सत्वे माहणा सावया जाया । मिच्छत्तं परिहरियं । एवं जेसलमेर—राहडमेर—सम्मणवाहण—भरवट्टपमुहनगराणि विहरिऊण ठाणे ठाणे पभावं काऊण पंचनदे पत्ता । जत्थ पंच नईओ मिलियाओ । सोमरो नाम जक्खो पडिबोहियो । जया जिणवल्लहधरी सगं गओ तथा अट्टायरिया गच्छावासे । एगो आयरिओ पुव्वदिसाए रुदओलीनगरे जिणसेउरधरि इइ नामेण भट्टारगो रुदपल्लीगच्छाहियो जाओ । जिणवल्लहधरिपदे अन्ने सत्तायरिया जालउरनगरंमि मिलिऊण मंतं इइ कयं । समगसंघगच्छपरिवारिया वीयं भट्टारगं करिस्सामि, जिणवल्लहधरिपट्टे । तओ दक्खिणदेशे देवगिरिनगरे जिणदत्तगणी चउमासी टिओ अत्थि । तं सपभावगं गीयत्थं पट्टजुगं जाणिऊण संघेहिं आहओ । पट्टठावणा दो मुहुत्ता गणिया । तओ संघपत्थणावसाओ जिणदत्तगणी चलिओ । मालवदेशे उजेणीनयरीए आगओ विहरंतो । तंमि अवसरे जिणवल्लहद्वयगुरुस्स कचोलापरियस्स अंतकालो वहइ । तओ कचोलायरिएण जिणदत्तगणिपासाओ आराहणा गहिया । सुहस्राणेण मओ । सोहम्मे कपे सुरो जाओ । जिणदत्तगणी अग्गे चलिओ । जीहरणिनामनगरउज्जाणे मुण्णदेशालए टिओ । तत्थ पडिकमणं काउमारद्धं । तत्थ कचोलायरियस्स जीवो देवो उदंडपयंडपवणलहरीहिं खुब्भमाणो पयडीभूओ । गुरुणा उच्चं—‘कोसि ?’ । तेषुत्तं—‘अहं तुहप्पसायाओ देवत्तं पावियो’ । तओ तेषु जिणदत्तगणीणं सत्त वरा दिन्ना । तंजहा—तुह संघमञ्जे एगो सद्धो महद्धिओ होही, गामे वा नगरे वा.—इय पढमवरो । १। तुह गच्छे संजईणं रिउपुक्कं न हविस्मइ—वीओ वरो । २। तुह नामेण विज्जुलिया न पडिस्मइ—तओ वरो । ३। तुह नामेण आंधीवचूलाइ परिभयो टलिस्मइ—चउत्थो वरो । ४। अग्गिथंभो पंचमो । ५। सैन्यजलथंभो छट्ठो । ६। सत्पविसो न पहविस्मइ—सत्तमो वरो । ७। अत्तं च पढममुहुत्ते पट्टे मा उवविससि, तुच्छाऊ भविस्मसि । वीयमुहुत्ते तु जुगप्पहाणजिणसामणप्पभावगो भविस्मइ (०सि) । तुह गच्छे दत्तसत्तसाहणो सव्वगणिप्पमुहा, धम्मदेववाणापरियाइ पयत्था । मत्तमया साहुणीणं संपया भविस्सामि । इइ वपणं कदिऊण देवो अदिट्ठो जाओ । तओ नणी वीयमुहुत्ते जालउरदुग्गे एगारहमयइगुणहचरे वरिसं जिणदत्तधरी पट्टे ठवियो सव्वसंघेहिं । जारिसो जाओ । पुणो विहरंतो अजयमेरदुग्गे पत्तो । पडिकमणमञ्जे विज्जु उत्तोयं करेमाणायंभिया । जिणदत्तधरी सव्वाउयं पालत्ता सगं गओ । तत्थेअ अजवि धुंओ वट्टइ ॥ इति संक्षेपेण जिणदत्तधरिप्रवन्धः ॥५॥

### ६.—श्री जिनचन्द्रसूरिप्रवन्धः ।

८. जिणदत्तधरिपट्टे जिणचंदधरी मणियालो जाओ । तस्स भालपले नरमणी दीपइ । मो नि जेमलमेर-दुग्गाओ दिह्णीनयरवासिसंघेण आहओ । तओ धरिणा संघस्स लेहो पेमिओ—अम्हाणं तत्थ गइ जिणदत्तधरीणं

जोगिनीपीठे विहारो निसिद्धो तेहिं । तत्रो दिह्लीपुरसंघस्त अन्वत्थणावसेण जिणचंदसूरी आगओ जोगिनीपीठे । पवेसमहोच्चवमज्जे जोगिनीहिं छलियो मओ । अज्जवि पुरातनदिह्लीमज्जे तस्स थुंभो अच्छइ । संघो तस्स जचा-कम्मं कुणइ ॥ इतिजिनचन्द्रसूरिप्रबन्धः ॥६॥

### ७.-जिनपतिसूरिप्रबन्धः ।

९. जिणचंदसूरिपट्टे सिरिजिणपतिसूरी हुत्था । सो वि चारवरिसवइठिओ पट्टे ठावियो । विहरंती आसीनगरे समागओ । संघेहिं पवेसमहोच्चओ कओ महावित्थरेण । पुणो विंघपइड्डाकारावणमारद्धं संघेहिं । तयणरे एगो विजा-सिद्धो जोगी आगओ भिक्खइ । विग्गचित्तो संघो कोवि तस्स भिक्खं न देइ । तओ सो रुट्ठो । मूलनायगविंघो कीलियो, गओ । पइड्डालग्गवेलाए सवोवि संघो उट्टावेउं लग्गो परं न उट्टेइ विंघो । तओ संघो चिंताउंरो जाओ । जोगिणं पिच्छंति, कत्थवि न लट्ठो । तथा साहुणीणं मज्जे जा महत्तरी अज्जिया सा आपरियं वंदित्ता एवं वृत्ता समाणा-‘मगवन् ! संघो हसइ, अम्हाणं भट्टारगो चालो तारिसी विजा नत्थि, किं किजइ’ । तओ जिणपतिसूरी सीहासणाओ अब्भुट्टेइ, अब्भुट्टेइत्ता सूरिमैतेण विंघस्स मत्थए वासक्खेओ कओ । तक्कालं एणेण सावगेण उट्टावियो विंघो । विंघपइड्डामहूसवो जाओ । खरयरगच्छे जयजयसद्दो उच्छलियो । अन्नं च-रायसभाए छत्तीसवादा जिया । जिनपति-सूरिणा पुणो खरयरगच्छसमापारी उद्धरिया । महापभावो जाओ । जिणवछइसूरिकयस्स संघपट्टयपगरणस्स टीका जेण कया । इति जिनपतिसूरिप्रबन्धः ॥७॥

### ८.-जिनेश्वरसूरिप्रबन्धः ।

१०. जिनपतिसूरिपट्टे नेमिचन्द्रभंडारी जिणेसरसूरीणो (?) पिया संजाओ । तस्स दो सीसा संजाया । एगो सिरि-मालो जिनसिंहसूरी । बीओ जोसवालो जिणप्पवोहसूरी । अन्नया जिणेसरसूरी पट्टपुरे नियपोसहसालाए उवविट्ठो संतो सूरिस्स दंडगो अकम्हा तटतडिचित्तं सद्दं काउण दुहाखंडो संजाओ । तओ सूरिणा भणियं-‘भो सीसा ! एस सद्दो कुओ संजाओ ?’ । अवलोइउण सीसेहिं कहियं-‘सामि ! तुम्ह हत्थदंडओ दुहा संजाओ । तओ चितियं आपरिएण-‘मम पच्छा दो गच्छा होहंति । तओ सयमेव नियहत्थे गच्छं करिस्सामि’ । इत्थेव पत्थावे सिरिमालसंघेहिं मिलिउण चितियं-इत्थ देसे कोई गुरू नागच्छइ । पयलह गुरुसयासे गुरुं आपेमो । मिलिउण सयलसंघो गुरुनमीवं गओ । वंदिउण आपरियं विन्नं सयलसंघेहिं-‘भो सामि ! अम्ह देसे कोवि गुरू नागच्छइ । तओ अम्हे किं करेमो । गुरुं विना सामग्गी न हवइ’ । तेण गुरुणा पुच्चनिमित्तं नाउण जिणसिंघगणी लाटणुवाउत्तो सिरिमालवंसुचमवो नियपट्टे ठावियो । नामधेयं कर्यं जिनसिंघसूरि ति । कहियं-‘एए सावया तुम्ह मए समप्पिया । गच्छइ संघसद्दियो’ । तओ वंदिउण गुरुं सावयसद्दियो जिनसिंघसूरी समागओ । सच्चमिरिमालसंघेहिं कहियं-अज्जप्पभिइ एम मम धम्माय-रियो । अओ दो गच्छा संजाया । थारससयअसीए संवच्छरे पट्टपुरे नयरे जिणेसरसूरिणा जिनसिंघसूरी कओ । पउमावईमंतो उवएसिओ । केवइ वरिसेहिं जिनेसरसूरी देवल्लोयं गओ ॥८॥

### ९.-जिनसिंघसूरिप्रबन्धः ।

११. जिनेसरसूरिपट्टे जिनसिंघसूरी संजाओ । पउमावईमंतसाहणत्पत्तरे तिचं झाएइ । श्राणावसाणे पउमावइए भणियं-‘तुह छम्मासाउ वट्टइ’ । तओ सूरिणा भणियं-‘मम सीमाणं पघक्खरीभूया । कइउ मम पट्टे को होई ?’ तओ पोमावइए भणियं-‘गच्छइ मोहिलवाडीए नयरीए तांभोगोत्तपवित्तकारगो महाधरनामगो महइओ मावगो अच्छइ । तप्पुत्तो रयणपालो । तस्स अज्जसिंहदेवीउपरं मुहटपाल इइ नामधेओ सबलक्खणसंपपो, तुह पट्टे जिणपइसूरी

नामभट्टारगो जिणसासणस्स पभावगो होही । इय वयणं मुचा जिनसिंघसूरी तत्थ गओ । महया महोच्छवेण साव-  
गेण पुरप्पवेसो कओ । पच्छा महाधरसिद्धिगिहे गओ सूरी । दट्टण आपरियं सत्तट्टपयं सम्मुहं गच्छड । वंदिऊण  
आसणे निमंतिओ-‘भगवन् ! ममोअरि महप्पसाओ तुमे कओ जेण मम गिहे समागया । परं आगमणप्पयोयणं  
वयह’ । तओ गुरुणा भणियं-‘भो महाणुभान ! तुम्ह गिहे सीसनिमिच्चं समागओहं । मम एणं पुत्तं नियरह’ । तओ  
तेण तह चि पडिवण्णं । तओ तेण अत्ते पुत्ता संसकारं काऊण वत्थादिणा आणीया । कहियं-‘एयस्स मज्जे जो  
तुम्हाणं रोयइ तं गिण्हह’ । गुरुणा भणियं-‘एए पुत्ता दीहाउया तुम्ह गिहे चिट्ठंतु । परं जो मुहडपालो बालो तं वि-  
यरह’ । तहेन कयं, निहरानिओ, सुमुहुत्ते दिमिस्सओ य । तेरहसयड्ढीसावरिसे दिक्कं सिक्कं दाऊण पउमाअईमंतो  
समप्पिओ । कमेण गीयत्थचूडामणी संजाओ । तेरहसयड्ढकतालवरिसे किटिनाणानगरे जिणसिंघसूरिणा सुमुहुत्ते  
नियपट्टे थप्पिओ जिणप्पहसूरी । जिणसिंघसूरी देवलोकं गओ । इति जिणसिंघसूरिप्रश्नः ॥९॥

### १०.-जिनप्रभसूरिप्रश्नः ।

१२. अहुणा जिणपहसूरिपवंधो भणइ-इओ य जिनसिंघसूरिपदे जिणपहसूरी संजाओ । तस्म पुव्वपुण्णवसा पउमाअई  
पचक्खा संजाया । एगया पउमाअई पुच्छिया सूरीहिं-‘कहसु भगवइ ! मम कत्थ नयरे उच्चई भविस्सइ’ । तओ पउ-  
मावइए लरियं-‘तुम्ह विहारो जोगिनीपीठे डीलीनयरे महुच्छओ भविस्सइ, तत्थ तुम्हे गच्छह’ । तओ गुरुणा विहारो  
कओ । कमेण जोगिणीपुरे [स]मागओ वाहि वा(सा)हापुरे उच्चिओ । एगया धरी पियारभूमिं गओ संतो, तत्थ  
अणारिया मिच्छादिट्ठिणो पराभं काउमारदं लेट्टुमाईहिं । तओ गुरुहिं भणियं-‘पउमाअइ ! सुट्ट महुच्छओ संजाओ ।  
तओ पउमाअईए तस्स वहगस्स लेट्टुमाईहिं तस्सेन पूया कया । ते अणारिया पलायमाणा महम्मदमाहिणो समीवे  
गया । कहियं सूरि[इ]यर । तओ चमक्कियत्तिओ पुच्छेड-‘कत्थ सो अत्थि पुरिसो ?’ तेहिं निवेइयं-‘वाहिं एएसे दिट्ठो  
अन्हेहिं । तो पहाणपुरिमा आइइ-‘गच्छह तुम्हे, तं आपेह इत्थ, जहा तं पस्सामि’ । तओ ते गंतुण गुरुसमीवे एवं निवे-  
इयं-‘आगच्छह भो सामि ! अह पडुत्तमीने । तुमे पयलह’ । तओ आपरिया पउल्लिदुनारे गंतुण ठिया । भिचेहिं गंतुण  
निवेइयं । जान ते साहिणो निवेययंवि, तान सूरी[हिं] सीसाण कहियं-‘अहं कुंभयासणं करोमि । जया माहिं नमामाच्छड  
तया तुम्हेहिं कहियवं-एत्त मम गुरु । तओ सो कहिस्सइ-जारिमो आसि तारिसं वुणह । तओ तुम्हे अह्हरत्थं धरिऊण  
कंथे ठवेह’ । इय वुत्तण गुरु ब्राणनरिस्सओ । कुंभसमाणो संजाओ । तओ आगंतुण महम्मदमाहिं सीसं [जं]पइ-‘कत्थ  
तुज्ज गुरु ?’ । तेण कहियं ‘अगओ दीमइ तुम्हाणं’ । तओ साहिणा कहियं-‘भो ! जारिमो पुत्तिं आनि तारिसं वुणह’ ।  
तओ सीसेण वत्थं सरसं काऊण सज्जीरया । उट्ठिऊण सूरिणा आनीमा दिन्ना धम्मलाहम्म । तओ वहासंलाओ संजाओ  
दुन्हवि । तओ साहिणा लरियं-‘भो मामि ! अह पाणप्पिया बालादे राणी अच्छट । तस्म त्रितरो लग्गो आमि । न  
सा वत्थाणि गिण्हइ निपदेहे, न सुम्भूना त्रि वुणइ । तस्म तुम्हे पमिऊण मजीरुणह । मए मंतजंतचिगिच्छणा आहूया  
परं जं जं पासइ तं तं लेट्टु-लट्ठिया हणइ । अहुणा पगयां काऊण तुम्हे पामह’ । गुरुणा भणियं-‘तुम्हे गच्छड तस्म  
समीने, एवं निवेएह-तुम्हं ममीवे जिणप्पहसूरी समागच्छड’ । माहिं[वा] गंतुण कहियं तं वयणं । मोऊण महमा उट्ठिया ।  
कहियं-‘दामि ! आपेह वत्थं’ । तओ चेटीहिं वत्थं आणिऊण पहिगरियं । तओ माही चमवगिओ । आगंतुण गुग्ग-  
मीवे साहियं-‘आगच्छह तस्म ममीवे पामह तं’ । तओ गओ सूरी । तं दट्टण निवेइयं सूरीहिं-‘चि दट्ट ! इत्थ तुम इत्थ ?  
गच्छ तुमं अस्म वानाओ’ । तेण निवेइयं-‘कहं गच्छामि अहं, सुट्टु गिहं लद्ध’ । गुरुणा भणियं-‘अत्तत्थ गिहं नत्थि ?’  
तेण भणियं-‘नत्थि एयारिमो’ । तओ गुरुणा मेहनाओ रिचबालो आहूओ, कहियं-‘एयं दूरीवुणम्’ । तओ मेहनाएण  
सो त्रितरो गादं पीडिओ । तेण त्रितरेण एवं निवेइयं-‘अहं रुहाउमे मम त्रिचि भक्कं पयच्छह’ । ‘किं पयच्छामि ?’ ।

ततो कहियं तेण—‘मम हिंसाईणि पयच्छह’ । गुरुणा भणियं—‘मम अग्गे एवं मा भणह । अहं तुम्हाणं दडवंधणेण वंधामि’ । तत्रो स्वरिणा मंतो जविओ । तत्रो कहियं—‘सामि ! तुमं सबजीवदयापालगो ममं कहं पीडेहि’ । स्वरिणा भणियं—‘गच्छ इत्थ ठाणाओ’ । तेण कहियं—‘किंचिचि ममं पयच्छह’ । तत्रो भणियं—‘किं पयच्छामि ?’ । धियगुड-सहियं चुन्नं पयच्छह मम’ । तत्रो साहिणा कहियं पयच्छामि । गुरुहिं भणियं—‘कहं जाणामि तुमं गओ ?’ । कहियं तेण—‘मम गच्छंतस्स अयुगपिप्पलस्स साहा पडिस्सइ, तत्रो जाणिजाहि’ । तत्रो रयणीसमए तं चेव जायं । पभाए सज्जीजाया बालादेराणी । दट्टण साहिणो म[हा]हरिसो जाओ । निवेइयं तस्स—‘पिए तुमं कत्थ आसि जओ न एस महाणुभागो आगओ हुंतो’ । तत्रो एवं सोऊण भणियं तीई—‘सामि ! एस मम पियासारिसो, जया एस महप्पा आगच्छइ तुम्हापासे तया तुमं एयस्स आगइसागई करिस्ससु, अट्टासणे निवेसेह’ । तत्रो तेण तह चि पडिवणं । एस राया गुरुसमीवे गच्छइ । गुरुं नियगिहे आणेइ । अट्टासणं दलइ । एवं सुहंसुहेणं वचइ कालो । तत्रो सच्चपासंडाण पवेसो जाओ ।

१३. इत्थ पत्थावे वाणारसीओ समागओ राघवचेयणो वंभणो चउदसविजापारगो मंतजंतजाणओ । सो आगंतूण मिलिओ भूवं । साहिणा बहुमाणो कओ । सो निचमेव आगच्छइ रायसमीवे । एगया पत्थावे सहा उवविट्ठा । स्वरि-राघवचेयणपमुहा क्हाविणोपं चिट्ठति । तत्रो राघवचेयणेण चितियं दुट्टसहावं एयं जिणप्पहस्सरिं दोसवंतं काऊण निवारयामि इत्थ ठाणाओ । एवं चित्तिऊण साहिहत्थाओ अंगुलीयं विजात्रलेण अवहरिऊण जिणप्पहस्सरियहर-णमच्छे पक्खित्तं, जहा स्वरि न जाणइ । तत्रो पउमावईए निवेइयं स्वरिस्स । तुम्हाणं तक्कीदाउकामो राघवचेयणो । साहिपासाओ मुद्दारयणं गहिऊण तुम्ह रयहरणमच्छे ठविओ । सावहाणा हवह तुम्मे । तत्रो स्वरिणा तं मुद्दारयणं गहिऊण राघवचेयणस्स सीसवत्थे पक्खित्तो जहा सो न जाणइ । तत्रो महम्मदसाहि पासइ, मुद्दारयणं नत्थि । पच्छा अग्गओ पासइ । न पासइ तं मुद्दारयणं । साहिणा निवेइयं—‘इत्थ मम मुद्दारयणं आसि, केण गहियं ?’ । तत्रो राघ-वेण निवेइयं—‘साहि ! एयस्स स्वरिसमीवे अच्छइ’ । स्वरिं पइ साहि मग्गिंतं लग्गो । स्वरिणा भणियं—‘साहि एयस्स समीवे अच्छइ’ । तेण नियवरयाणि दंसियाणि । स्वरिणा भणियं—‘साहि अस्स सीसे अच्छइ’ । तत्रो मुद्दाज्वलोइया । गहियं साहिणा । कहियं राघवचेयणस्स—‘धम्मोसि णं तुमं सच्चवाई । सयं गहिऊण जिणपहस्सरिस्स दूसणं देसि’ । तत्रो साममुहो संजाओ । नियगिहं पचो ।

१४. अन्नया चउसट्ठिजोगिणी सावियारुवं काऊण स्वरिसमीवे छलणत्थमागया । ता सामाइयं गहिऊण वक्खाणं नियुपंति । पउमावइए निवेइयं स्वरिस्स—‘तुम्ह छलणत्थं एयाओ चउसट्ठिजोगिणीओ समागयाओ’ । स्वरिहिं अव-लोइयाओ ताओ । पासंति अणमिसनयणं स्वरिगयदिट्ठीओ वक्खाणरसलुद्धाओ । तत्रो स्वरिहिं कीलियाओ ताओ सहाओ । उवएसपच्छा सच्चं सावया सावियाओ वंदिय नियगिहे पचाओ । ताओ आमणाओ जओ उवविट्ठति तत्रो आसणसहियं लग्गं पासंति । पासिचा पुणरवि उवविट्ठाओ । पुणरवि स्वरिहिं भणियं—‘साविया ! रिंसिणो विया-रभूमि-विहारभूमिबेला संजाया । तुम्मे वंदह’ । तत्रो तेहि भणियं—‘सामि ! अम्हे तुम्ह छलणत्थमागया । परं तुम्मे अम्हे छलिया । इणह पसायं, मोयह अम्हाणं’ । स्वरिणा भणियं—‘जइ मम वाया दलइ तत्रो मुचामि नत्तदा’ । ‘वपद का वाया ?’ । ‘जइ मम मच्छाहिबहणो तुम्ह जोगिणीपीठे वचंति तेमिं तुम्मे न उवद्वं कुणह, तत्रो मुंचामि’ । तेहि तह चि पडिवचं । ताओ उकीलियाओ नियनियटाणं गयाओ । तत्रो आचरिपा सच्चत्थं गच्छंति । न उवद्वो जायइ तस्स । ताओ नियवाचावट्ठाओ चिट्ठति ।

१५. अन्नया सहाउवविट्ठो स्वरि । गुरासाणाओ मविओ एगो कलंदरो समागओ । तेण आगंतूण नियट्ठइ उचारैऊण गपणे रिनियाओ । कहियं महम्मदसाहिणो—‘माहि ! सो कोवि अत्थि तुम्ह महाए, जो एयं उचारंइ ?’

साहिणा महा अवलोड्या । तत्रो स्री महम्मदसाहिं पइ एवं वयासी-‘पस्तह राया जं मए एयस्त वायवं’ । तत्रो सरिहिं आगासे रयहरणं रिबिओ । गंतूण तस्म बुल्लहस्त मत्थए पाडियाओ । तत्रो तेण कलंदरेण पुणरवि एगाए इत्थीए जलघडयमाणीयमाणं सीसे आगासे थंमियं अंतलिक्खे । कहियं साहिस्स । पुणरवि स्रीहिं तं घडयं भंजिऊण जलं कुंभायारं कयं । साहिणा भणियं-‘जलस्स कणफुमियं कुणह’ । तेण तदेव कयं । कलंदरस्स अहंकारो गओ । पुणरवि सहोवविट्ठेण साहिणा भणियं-‘अज मे महोवविट्ठा जाणया कहसु, पभाए केण मग्गेण अहं वचामि रेवाडीए ?’ । तत्रो सबेहिं नियनियबुद्धीए चित्तिऊण लिट्ठिऊण य दिन्ने चिट्ठीए माहिस्स । माहिणा भणियं-‘सुरि ! तुम्हमवि दलह’ । सरिणा पि नियबुद्धीए चिट्ठी दत्ता । तत्रो म्हाओ नेऊण नियउत्तरिए वट्ठाओ । साहिणा चित्तियं-‘जहा एए सबे असच्चवाइणो हंति तहा करेमि । एवं चित्तिऊण वंदर(ण ?) उरजाओ भंजिऊण निग्गओ । गंतूणं वाहिं कीडा कया । एगट्ठाणोउगिडा सरिपमुहा सबे आह्या । कहियं च तेमि-‘वायह नियनियलिदियं’ । तेहिं सबेहिं नियनियलिदियं वाइयं । सरिस्स कहियं-‘नियलेहं वायह’ । तत्रो वाइयं आयसिएण-‘वंदण(र ?) उरजाओ भंजिऊण कीडं काऊण वडपायवम्म अहे विस्सामं काही’-एवं निरुणिऊण चमवरिओ साही-‘भो एम आयरिओ परमेमरमारियो । एयस्स सेपं देवानि कुणंति’ । तत्रो साहिणा भणियं-‘जिणप्पसुरि ! एम वटो सीयच्छाओ मणोहरो तहा करेह जहा मम मह गच्छ’ । तदेव कयं । तत्रो पंचकोमाणंउर सरिणा भणियं-‘साहि ! एयं तं विमोड’ । जहा नियटाणं गच्छ’ । माहिणा वित्तजणं कयं तस्म रुक्कम्म ।

१६. अन्नया कत्तणापुरस्स महारीरो विच्छेहिं नेऊण मादिपोलिदुवारं पाटिओ अहांमुहं । तस्सोउरि लोया आवंति जंति । तत्रो जिणपहसुरी ममागच्छ’ । पामइ तउररथं पटिमं । मउंने गंतूण माहिस्स निवेइयं स्रीहिं-‘माहिं एयं पत्थयामि तुम्ह ममीं, जइ दलह’ । तत्रो माहिणा भणियं-‘मग्गह जं देमि’ । तत्रो पत्तोलिदुवाट्टिओ मरिगओ महारीरो । तत्रो माहिणा नियममीपे आणारिओ महारीरो । जओ तं पामइ अच्चुपपरं चिगहं । सरिं पइ एवं भणइ-‘भो दाहामि तुम्हाणं’ । तत्रो स्रीहिं भणियं-‘अम्हाणं आसमणं निरन्थयं जायं’ । तत्रो माहिणा पदियं-‘जइ एयं मुहं चुल्लवेह तथा दाहामि’ । स्रीहिं भणियं-‘जइ एअस्स पूयासवारं कुणह तत्रो भामइ’ । माहिणा तटाकयं । पुओउगरणं काऊण हथं जौडिऊण सणइ-‘उरिय पमायं वयह’ । तत्रो टाटिणहथं पमारिऊण एयं भणइ पदारीगे-  
विजयतां जिनमासनसुज्जलं, विजयतां भुषाधिपदद्वयम् ।

विजयतां भुवि नाहि महम्मदो, विजयतां गुम्भरिजिणप्रभः ॥१॥

तत्रो गुग्गुहाओ अथं आरिऊण तुट्ठो माहां-‘भामइ एयस्स किं ट्ठायि ?’ । स्रीहिं भणियं-‘माहि ! एस देवो गुग्गुहट्ठेहिं सुग्ग’ । तत्रो माहिणा भणियं-‘भुवि नामं दिन्नं, मग्ग-माउटो’ । ने मायाया पागकूटं नेऊण धुवो माहंनि मया । गुलतापिण तम्म पागाओ वागारिओ । गधरचेयणसंभत्तौ जिओ । गुलतापण्यं वग्गुदियायण रापरचेयणग्ग मांसे टारिओ । संभ्रमणं टग्गियं । पुत्तो गुग्गुहो मेतुजे नेऊण संपाटिणो कओ । गयणिकरुतो दुदेहिं वरिमारिओ । अमावनिनिहीउ पुत्तिनाहिओ वया ।

गंदेलपुरे नयरे तेरस्सए चउत्ताले । जंगलया मित्रभत्ता उचिया जिणमागणे धम्मं ॥१॥

१६. तेमिं च मरुचं मधइ-एगास गेडेनरान्तुणा विन्दुमया टयं ममजिउं गुग्गुहाउरवट्टा इणमाना विट्ठेति । वातर वृणंतामं वहुया वानग अत्था । मुटो वहुपणो टिओ । तम्म महुग्गुट्टे मेवया अणुदियाया । तत्रो मउंने कागिऊण विचियिणं लग्गा । तोन्वि मज्जकग्गा विन्नाया । केहिं च गुग्गुहाउर मउरररानं मणे । वेरं पुण सं परिचनुं अमत्ता तं वेव ववट्टामाना टिया । तयो जिनपहसुरं पत्तमारंउरपणा पटिपोटिओ जंगलमुत्तो ॥

॥ इति श्रीजिनप्रभनूरिप्रबन्धः ॥१०॥

## खरतरंगच्छगुर्वावलीगतविशेषनाम्नां सूचिः ।

अकलङ्कदेव सूत्रि ३४, ३६  
 अचल [ ठक्कुराज ] ६५-६८, ८१  
 अचलचित्त [ मुनि ] ५१  
 अचला [ ठ० ] ६७  
 अचलेसर [ दुर्गा ] ८९  
 अजयमेरु [ नगर-दुर्गा ] १६, १९,  
 अजयमेरु ] २०, २४, २५, ३३,  
 ३४, ४४, ८४, ९१, ९२  
 अजित [ मुनि ] ३४  
 अजित [ महं० ] ५२  
 अजितश्री [ साध्वी ] २३  
 अजितसेन [ मुनि ] ४९  
 अणहिल पाटक [ नगर ] ३४, ४३  
 अणहिलपुर पत्तण ,, ९१  
 अणहिल पत्तण ,, १४  
 अणहिलपुर पट्टण ,, ९०  
 अतिव्रत [ अधिष्ठापक देव ] २२  
 अनन्तलक्ष्मी [ साध्वी ] ५२  
 अनहिल पत्तन २, ८  
 अनेकान्तजयपताका [ मन्थ ] १०, ३४  
 अपभ्रंश भाषा ३१  
 अपराजिता [ देवता ] ७  
 अञ्जुय गिरि ८९  
 अञ्जुया देवी ८९  
 अभयकुमार [ मंत्रीश्वर ] ७५  
 अभयकुमार [ सा० ] ३४  
 अभयचन्द्र [ मुनि ] २०  
 अभयचन्द्र [ सा० ] ५२, ५३,  
 ५४, ५९, ६०, ७२, ७७  
 अभयचन्द्र गणि ४९

अभयड [ दण्डनायक ] ३९, ४०,  
 ४२, ४३  
 अभयतिलक गणि [ उपा० ] ४९, ५१  
 अभयदेव [ न्याय-मन्थ ] १०, ३०  
 अभयदेव [ सूत्रि ] १, ५, ७, ८, ९,  
 १४, ३६, ७३, ७८,  
 ८२, ९०, ९१  
 अभयमति [ साध्वी ] २४  
 अभयशेखर [ मुनि ] ६०  
 अभयसागर [ क्षुल्लक ] ६८  
 अभयसूत्रि ६  
 अभोहर [ देश ] १  
 अविकादेवी [ सिंहर ] ९१  
 अमरकौर्ति [ क्षुल्लक ] ८१  
 अमरकौर्ति गणि ४९  
 अमरप्रभ [ मुनि ] ६५  
 अमररत्न [ मुनि ] ५९  
 अमृतकौर्ति गणि ४९  
 अमृतचन्द्र [ मुनि ] ६१  
 अमृतचन्द्र गणि [ वा० ] ६६, ८६, ८७  
 अमृतमूर्ति [ मुनि ] ४९  
 अमृतश्री [ साध्वी ] ६०  
 अम्बिका [ अधिष्ठायिका ] १७, २४,  
 ५१, ६३, ७२, ७६, ७७  
 अयोध्या [ नगरी ] ६०  
 अरसिंह [ राजपुत्र ] ५६  
 अणोरान [ नृप ] १६  
 अर्जुन [ गिरि ] ५, ५७, ६०, ६१  
 अर्जुनाचल [ तीर्थ ] ९०  
 अर्हदत्त गणि ४९

अत्यवदीन [ सुरनाण ] ६७  
 अशोकचन्द्र [ मुनि ] ५  
 अशोकचन्द्र गणि १९  
 अशोकचन्द्राचार्य १४  
 अश्वराज [ ठ० ] ४९  
 अहौर [ सा० ] ५०  
 आगमवृद्धि [ साध्वी ] ५२  
 आचारनिधि [ मुनि ] ५१  
 आजड [ सा० ] ५१  
 आटा [ मा० ] ५३  
 आदित्यपाटक [ नगर ] ८६  
 आनन्द [ सा० ] ७५  
 आनन्दमूर्ति [ मुनि ] ५७  
 आनन्दश्री [ महत्तरा ] ४४  
 आना [ सा० ] ७७  
 आशुल [ ठ० ] ४४  
 आम्बड [ सेनापति ] २३  
 आम्बा [ सा० ] ५०, ७३, ८२, ८४, ८६  
 आम्बा [ श्राविका ] ८५  
 आर्यमहागिरि [ सूत्रि ] ७८  
 आर्यरक्षित [ सूत्रि ] ५६  
 आराधण, न [ महातीर्थ ] ७१, ९७  
 आर्यसुहस्ति सूत्रि ६६, ७३, ७८,  
 ८१, ८२  
 आर्य्यक [ म्र्य ] ७४  
 आशा [ सा० ] ८४  
 आशापडी [ ग्राम ] ५, ३८, ३९,  
 ६०, ७८  
 आशापडीय [ संघ ] ७०, ७१, ८०  
 आशापटनी [ साध्वी ] ६४

आशिका [ नगरी ]	२०	उज्जयिनी [ नगरी ] १९, ५०, ५१	कक्करिठ [ राजप्रधान ]	२४	
आशीदुर्ग	८	उज्जोनी [ नगरी ] ९०, ९२	कञ्चोलापरिअ	९०, ९२	
आशीढा [ ग्राम ]	८७	उज्जोनी पीढ	९२	कटुक [ सा० ]	८६
आसनाग [ सा० ]	५१	उज्जोपण सूरि	८९	कडुया [सा०] ७३, ७५, ७९, ८२	
आसमति [ साची ]	२४, ४४	उदयकर्णी [ ठ० ]	७९	कडुयारी [ ग्राम ]	६६
आसदेव [ सा० ]	१९	उदयकीर्ति [ मुनि ]	४९	कणपोढ [ ग्राम ]	४७
आसधर [ ठ० ]	१६, १७	उदयगिरि [ हस्तिनाम ]	३०	कथानककोश [ ग्रन्थ ]	५
आसधर [ सा० ]	१६	उदयचन्द्र [ मुनि ]	६१	कनककलश [ मुनि ]	५१
आसपाळ [ ठ० ]	७१	उदयदेव [ ठ० ]	५७	कनककीर्ति [ मुनि ]	५१
आसपाळ [ सा० ]	५७, ५९	उदयपाळ [ सा० ]	६५	कनकगिरि [ पर्वत ]	५१
आसपाळ [ श्रे० ]	५७	उदयमूर्ति [ क्षुल्लक ]	८२	कनकचन्द्र [ मुनि ]	४९
आस्तराज [ राणक ]	४४	उदयश्री [ गणिनी ]	४९	कनकश्री [ क्षुल्लिका ]	८६
आसा [ भाण० ]	६३	उदयसार [ क्षुल्लक ]	७७	कनकावली [ गणिनी ]	४९
आसिका (आशिका) २३-२५, ६५		उदयसिंह [ राजप्रधान ]	८७	कन्दली [ ग्रन्थ ]	१०, ३९
	६६, ७२	उदयसिंह [ राजा ]	५०, ५१, ८७, ८८	कन्यागापुर	४६
आसी दुर्ग } [ संघ ] ९, ९३		उद्वंद्विहार [ स्थान ]	६०	कन्यानयन [ ग्राम ] २४, ६५, ६६,	
आसी नगर }		उद्योतनाचार्य	१		६८, ७२
आहुणसिंह [ सा० ]	५३	उद्वरण [ वार्द्धिक सा० ] ४०, ४३,		कन्यानयनीय [ संघ ]	६८
आह्लाक [ सा० ]	५६		५१, ८०	कपर्दि [ दिं ] यक्ष	५३, ७२
इन्द्रपुर [ नगर ]	२०	उपदेशमाला [ ग्रन्थ ]	१३, ६७	कमलश्री [ क्षुल्लिका ]	८०
इसल [ मा० ]	५३	उपशमचित्त [ मुनि ]	५१	कमलश्री [ गणिनी ]	४९
ईश्वर [ सा० ]	६८	ऊकेश [ गच्छ ]	२५	कमलदम्भी [ साची ]	६४
उच्चकीय [संघ] ७३, ८०-८२, ८४		ऊकेश [ वंश ]	६७	कमलाकर गणि	८२
	९२	ऊदा [ न० ]	८७	करडिहटी [ वसति ]	४, ७
उच्चनगर }		ऊदा [ सा० ]	५३	करहेटक [ ग्राम ]	६०
उच्चानगर }	१९, २०, २३,	ऊदाक [ सा० ]	५१	कणदेव [ राजा ]	५८
उच्चानगरी }	३४, ७५, ८१	ऊदाक [ सा० ]	५१	कर्पटकगणित्य [ ग्राम ]	९
उच्चापुर }		ऊधरण [ सा० ]	६३	कर्णराज [ प्रधान ]	५६
उच्चापुरी }	६४, ६९, ८४	ऋद्धिसुन्दरी [ साची ]	५१	कर्णशिक्षा [ ग्रन्थ ]	४६
उच्चापुरीय [ संघ ] ५२, ५८, ६४,		ऋषभदत्त [ मुनि ]	२०	कर्णसिंह [ सा० ]	८६
	६५, ७७	एकलदम्भी [ साची ]	५२	कलंडर [ फकीर ]	९६
उज्जयन्त [ तीर्थ ] ५, १७, ३४,		ओषधिसुक्ति [ ग्रन्थ ]	४०	कन्याणक्तुकि [ गणिनी ]	५४
३९, ४९, ५३, ५५, ६२,		ओसताल [ ज्ञाति ]	९२, ९३	कन्याणकलदा गणि	४९
६३, ७२, ८५		कश्मात्त [ मण्डलेश्वर ] २५-२७,		कन्याणक्तुकि [ प्र० ]	५५
उज्जयन्त तल्लट्टिका	६२, ७५		२९, ३०, ३३	कन्याणनिधि [ मुनि ]	५१

कल्याणमति [ महत्तरा ]	५	कुमुदचन्द्र [ मुनि ]	४९, ५२	क्यासपुर [ ग्राम ]	६५, ७३, ८३,
कल्याणश्री [ साची ]	४४	कुमुदलक्ष्मी [ साची ]	५८		८४, ८६
काकिन्दी [ नगरी ]	६०	कुम्भरपाल [ सा० ]	६६	क्यासपुरीय [ संघ ]	८२, ८३
काण्डा [ सा० ]	७२	कुलचन्द्र [ मुनि ]	४४	स्त्रियकुण्ड [ ग्राम ]	६०
कादम्बरी [ ग्रन्थ ]	२८, ३९	कुलचन्द्र [ सा० ]	२१, २२, ५३,	क्षपण ( न ) क	३, १४
कामदेव [ सा० ]	७५		६२, ६३, ७३	क्षमाचन्द्र [ मुनि ]	४९
काला [ राज प्रधान ]	२४	कुलतिलक [ मुनि ]	४९	क्षान्तिनिवि [ साची ]	५२
काला [ सा० ]	६५, ६६, ७२—	कुलधर [ मन्त्रीधर ]	८०	क्षेत्रपाल [ देव ]	७२
	७४, ७६, ८७	कुलधर [ मह० ]	४४, ४९	क्षेत्रसिंह [ प्रधान ]	५६
काव्यप्रकाश [ ग्रन्थ ]	३९, ४०	कुलधर [ सा० ]	८६	क्षेमकीर्ति [ मुनि ]	५५
कापस्य [ जाति ]	८८	कुलधर्मा [ साची ]	८२	क्षेमन्धर [ गोष्ठिक ]	५५
काश्मीरीय [ पण्डित ]	४४	कुलभूषण [ मुनि ]	५२	क्षेमन्धर [ सा० ]	२०, ३८, ३९,
कासहद [ नगर ]	३६	कुलश्री [ गणिनी ]	४९		४०, ४२, ४३, ५१, ६३
कासहद [ ग्राम ]	८९	कुशलकीर्ति [ मुनि ]	५९, ६५	क्षेमन्धर [ पंचढली सा० ]	७२
कियासपुर [ ग्राम ]	८२	कुशलकीर्ति गणि	६८	क्षेमसिंह [ सा० ]	५०, ५४, ५५,
किरणवली [ ग्रन्थ ]	१०, ३९	कुशलचन्द्र गणि	४९		५९, ७७
किदिवाणा [ ग्राम ]	९४	कुशलश्री [ प्र० गणिनी ]	५५	खड्गारगढ	७५, ७६
कीकट [ सा० ]	७३	कुहियप [ ग्राम ]	४४	खंडेलपुर	९६
कीका [ सा० ]	८५	कृपा [ मं० ]	८७	खंडेलवाल [ गौत्र ]	९६
कीरत्तसिंह [ सा० ]	८७	कूर्चपुरीय [ संघ ]	८	खदिरालुका [ ग्राम ]	५९
कीर्तिकलश गणि	४९	केल्हण [ राणक ]	४४	खमाइति नयर	९०
कीर्तिचन्द्र [ मुनि ]	४४, ४७	केल्हण [ सा० ]	५०	खरतर [ गच्छ ]	३४, ३६, ३९,
कीर्तिमण्डल [ मुनि ]	५२	केल्हा [ मं० ]	७३		४७, ४८, ८२-८४,
कुतंबदीन [ पातसाहि ]	६७	केवलप्रमा [ ग० प्रवर्तिनी ]	५४, ६४		९०, ९१
कुतंबदीन [ सुरवाण ]	६६	केवलश्री [ साची ]	४४	खरयर [ गच्छ ]	९०, ९३
कुमर [ सा० ]	५६	केशव [ सा० ]	६१	खाट्ट [ ग्राम ]	७२
कुमर [ मं० ]	७७	कोड्डिका [ स्थान ]	६२	खामराज [ दो० ]	७९
कुमरपाल [ ठ० ]	६६	कोमल [ सा० ]	८३, ८४	खोमड [ सा० ]	५१, ७७
कुमरसिंह [ ठ० ]	६५, ७०	कोमल [ संघ ]	५६	खोमसिंह [ व्यय० ]	८३
कुमरसिंह [ सा० ]	८३	कोमलक [ सा० ]	८३	खीवड [ सा० ]	७१, ७७
कुम्भा [ मंत्री ]	६५	कोरण्टक [ ग्राम ]	७३	खुरासाण [ देश ]	९५
कुमारपाल [ मंत्री ]	६१	कोशवाणक [ ग्राम ]	} ६५, ६६, ६८ ७३, ७६	खेटनगर	३४
कुमारपाल [ राजा ]	१९, ७०, ८१	कोशवाणा ,,		खेटनगर	८१
कुमारपाल [ सा० ]	५०-५२, ५५,	कोसवाणा ,,		खेतछदेवी	९३
	५९, ८८	कोशाम्बी [ नगरी ]		६०	खेतसिंह [ सा० ]

खेतसिंह [ सा० ]	६७, ६८, ७१, ७२, ८६	गूर्जरीय [ संघ ]	४३	चारित्रतिलक [ मुनि ]	५९
गच्छनीति [ मुनि ]	५५	गृहचन्द्र [ सा० ]	२१	चारित्रमति [ गणिनी ]	४९
गच्छमृद्धि [ साध्वी ]	५१	गोहाक [ सं० ]	८७	चारित्रमाला [ गणिनी ]	४९
गज [ भा० ]	६१	गोधा [ सा० ]	८७	चारित्रान्न [ मुनि ]	४९
गजकीर्ति [ मुनि ]	५०	गोपाल [ सा० ]	६५, ७२-७४, ८०, ८२	चारित्रलक्ष्मी [ साध्वी ]	५९
गजेन्द्रबल [ मुनि ]	५२	गोष्ठक [ सा० ]	२०	चारित्रनल्लभ [ मुनि ]	५०
गणदेव [ मुनि ]	३४	गोसल [ सा० ]	७३-७६, ८६	चारित्रसुन्दरि [ गणिनी ]	४९
गणदेव [ सा० ]	१२, ५२, ५८	गौतमस्वामी [ गणधर ]	२६, ४८, ४९, ५६, ७७, ८१, ८२	चारित्रसुन्दरी [ क्षुल्लिक ]	७७
गणधरसप्ततिका [ ग्रन्थ ]	१८	ग्यासदीन [ पातसाहि ]	७२, ७७	चारित्रशेखर [ मुनि ]	५२
गणपद [ ग्राम ]	२०	धोचा बेलाकुल	७७	चारुदत्त [ मुनि ]	६४
गतमोह [ मुनि ]	५०	चउसहि जोगिणी पीठ	९१	चाहड [ प्रधान ]	६०
गयधर [ सा० ]	२०	चक ( व ? ) रहडी	५६	चाहड [ सा० ]	५५, ५९, ६३, ७३, ८०, ८२, ८६
गाङ्गा [ सा० ]	७३	चञ्चरी [ ग्रन्थ ]	१८	चाहमान [ कुल ]	६८, ८६, ८७
गिरनार [ पर्वत ]	९१	चन्दनमूर्ति [ क्षुल्लिक ]	६४	चित्तसमाधि [ साध्वी ]	५२
गिरिनार [ तीर्थ ]	६२	चन्दनसुन्दरी [ गणिनी ]	४९, ५८	चित्तकूड दुर्ग	९१
गीर्वाण भाषा	४१	चन्द्रकीर्ति गणि	५०	चित्रकूट [ दुर्ग ]	१०, १२-१५, १९, २०, ४९, ५६, ६९
गुडहा [ ग्राम ]	७३, ७९, ८०	चन्द्र [ कुल ]	६९, ७१	चित्रकूटीय प्रशस्ति [ ग्रन्थ ]	४६
गुणकीर्ति [ मुनि ]	४५	चन्द्र [ सा० ]	६३	चूडामणि [ ज्योतिर्मन्य ]	८
गुणचन्द्र गणि	१८, २३, २४	चण्डा [ मंत्री ]	५९	चौरसिदानक [ ग्राम ]	२१
गुणचन्द्र [ वसाय सा० ]	४९	चण्डिकामठ	१०	छजल [ सा० ]	७३, ७५, ७७, ८७
गुणधर [ मुनि ]	२३	चन्द्रतिलक [ उपाध्याय ]	५०, ५२, ५४	छाहा [ व्य० ]	७७
गुणधर [ सा० ]	५३, ७०	चन्द्रप्रभ [ मुनि ]	४४	छाहड [ भा० ]	५९
गुणभद्र गणि	२०, ४४	चरणमति [ साध्वी ]	२४	छोतम [ सा० ]	७२
गुणवर्धन [ मुनि ]	२०	चन्द्रमाला [ गणिनी ]	४९	जगचन्द्र [ मुनि ]	५८
गुणशील [ मुनि ]	२३, ४४	चन्द्रमूर्ति [ क्षुल्लिक ]	५८	जगचन्द्र गणि	६५
गुणशेखर [ मुनि ]	५०, ५१	चन्द्रश्री [ महेश्वर ]	५८	जगदेव [ प्रतीहार ]	३४, ४३
गुणश्री [ साध्वी ]	२०, २४	चन्द्रश्री [ साध्वी ]	४४	जगद्वर [ सा० ]	४४, ४९, ५१, ७१
गुणसागर [ मुनि ]	४९	चन्द्रानती [ नगरी ]	३४, ८७, ८८	जगमति [ साध्वी ]	४७
गुणसेन [ मुनि ]	४९	चाचिग [ सा० ]	८३	जगसिंह [ भा० ]	५९
गुजर [ देश ]	९०	चाचिगदेव [ राजा ]	५१	जगदसीह [ सा० ]	७१, ७६
गूर्जर [ देश ]	८४	चामुंडादेवी	९१	जगसीह [ राजपुत्र ]	४९
गूर्जरा [ देश ]	१, ४, ३४, ३६, ३८, ३९, ४३, ५७, ६४, ७०, ७१, ७३, ७८	चारित्रकीर्ति [ मुनि ]	५५	जगश्री [ साध्वी ]	२०
		चारित्रगीरि [ मुनि ]	४९		

जगद्वि [ मुनि ]	२०	जयहंस [ सा० ]	६१	जिनचंद्राचार्य	१
जंगल [ गोत्र ]	९६	जया [ देवता ]	७	जिनदत्त [ सूरि ]	१, १६, १८-२४,
जग्या माहण	९०	जवणपाल [ सा० ]	७२-७४		२७, ४०, ४२, ४३, ५०,
जटी	३	जवनपाल [ ठ० ]	६६, ६०, ७९		५१, ५६, ५८, ६४, ६६,
जद्वड [ सा० ]	८३	जसोधवल [ सा० ]	५२		७२, ७३, ७७, ७८, ८२
जनार्दन गौड [ पंडित ]	२५, २६	जालकर [ नगर-दुर्गा ]	९२	जिनदत्ताचार्य	१९
जाम्बूस्वामी	३, ७७	जावळिपुर [ नगर ]	६, ४४, ४७ -५२, ५४, ५५, ५८-	जिनदास [ सूरि ]	४४
जयचन्द्र [ मुनि ]	१९, ८६		६१, ६३, ६५, ७३, ७७, ७९, ८०	जिनदेव [ सा० ]	८७
जयतश्री [ मंत्रिणी ]	७०	जावळिपुरीय [ संघ ]	५७, ५८, ६१, ६४, ७०, ८०	जिनदेव गणि	२३
जयता [ सा० ]	७६	जाहेडामाम	५६	जिनवर्म [ मुनि ]	२३
जयसिंह [ विद् ]	२१	जाह्ण [ सा० ]	६३, ६९, ७१, ७३, ७५, ७७, ८०, ८५	जिनपति [ सूरि ]	७०, १, २०, २३-२५, २९, ३२-३५, ३८, ३९, ४१, ४४, ४६- ५०, ७५, ८१, ८२, ८४, ८७
जयसिंहमण [ स्तोत्र ]	६, २०	जिणचंद्र सूरि [ मणियाल ]	९०, ९२, ९३	जिनपत्र [ सूरि ]	८५, ८६
जयदत्त [ मुनि ]	१८	जिणदत्त गणि	९२	जिनपाल [ मुनि ]	२३
जयदेव [ रुद्रःशाख ]	१०, ३९	जिणदत्त सूरि	९१, ९२	जिनपाल गणि	४४
जयदेव [ सा० ]	५३	जिणनाग [ मुनि ]	३४	जिनपालोपाध्याय	४५-५०
जयदेवाचार्य	१७, १८, २३	जिणपद्म सूरि	४६, ९३-९६	जिनप्रबोध [ सूरि ]	५४, ५५, ५७, ५९, ७१, ७२, ७७
जयधर्म गणि	७७	जिणपति सूरि	९३	जिनप्रभाचार्य	१७
जयधर्म [ महोपाध्याय ]	७७, ८५	जिणप्यगोह सूरि	९३	जिनप्रिय [ मुनि ]	२३
जयन्ती [ देवता ]	८	जिणवल्लभ सूरि	९०, ९३	जिनप्रियोपाध्याय	४४
जयप्रभा [ साध्वी ]	५४	जिणसिंघ गणि	९३, ९४	जिनबंधु [ मुनि ]	२३
जयप्रिय [ मुनि, कुण्डक ]	८५	जिणसेखर सूरि	९२	जिनमद [ मुनि ]	२०, ४४
जयमहारी [ कुण्डिका ]	५९	जिणहंस सूरि	९०, ९३	जिनमद सूरि	४४
जयमती [ साध्वी ]	२४	जिणोसर सूरि	७०, ७३, ७५- ७८, ८०-८७	जिनमत्ताचार्य	२३, २५
जयसिंह [ महारा ]	६४, ६६, ६९, ७४, ८७	जिनकुशल सूरि		जिनमत [ उपाध्याय ]	२४, २५, ३४
जयउग्रभी [ साध्वी ]	५१	जिनचक्रित ( चन्द्र ? ) गणि	१९	जिनमती [ साध्वी ]	१८, १९
जयवल्डम [ मुनि ]	५२	जिनचन्द्र [ सूरि ]	१, ५, ६, २०-२३, ५०, ५८-६०, ६३, ६४- ६८, ६९, ७०-७२, ७४- ७८, ८०, ८२, ८५	जिनमित्र [ मुनि ]	२३
जयवल्डम गणि	६२, ६३, ६६, ६८, ६९			जिनरक्षित [ सा० ]	१८
जयवीर [ मुनि ]	२०			जिनरक्षित [ मुनि ]	१८
जयसारा [ कुण्डक ]	७७			जिनरान सूरि	७१
जयसिंह [ मुनि ]	१९, ६०				
जयध्वन्दी [ साध्वी ]	६१				
जयसेन गणि	४९				

जिनरत्नाचार्य	४९, ५२, ५४, ५५, ५७	जीहरणि [ नगर ]	९२	टिछो नगर	९२, ९४
जिनरथ [ मुनि ]	२०	जेठू [ सा० ]	८३	टिछो देश	२, ४
जिनरथ [ वा० ]	२५	जेणू [ सा० ]	५५	टिछो पोंढ	९२
जिनवज्रम [ श्रेष्ठीपुत्र ]	८	जेसल [ मंत्री, ठ० ]	७०	टिछोपुर	९३
जिनवज्रम [ मुनि ]	८	जेसल [ सा० ]	६२, ७१, ७८	टिछो वादली	१
जिनवज्रम गणि [ वा० ]	९-१४	जेसलमेर [ दुग ]	९२	तग [ छा ] [ ग्राम ]	२०
जिनवज्रम सूरि १, १५-१७, ३६, ४६, ५२, ५६		जेसलमेरवीथ [ संव ]	६०, ८०, ८६	तपोमतीथ	५१
जिनशिष्य [ मुनि ]	२३	जेसलमेरू [ नगर ]	३४, ५२, ५८ ६१, ६३, ८१, ८६	तपःसिंह [ मुनि ]	६०
जिनशेखर [ मुनि ]	८, १६	जेत्रसिंह [ गो० ]	७०	तरुणकीर्ति [ कुञ्जक ]	६३
जिनशेखर [ उपाध्याय ]	१७, १८	जेत्रसिंह [ ठ० ]	७०	तरुणकीर्ति गणि [ पं० ]	८४
जिनश्री [ साध्वी ]	१९, ४४	जेत्रसिंह [ मह० ]	५०	तरुणप्रभाचार्य,	८४, ८५
जिनसंघ सूरि	९३	जेत्रसिंह [ राजा ]	६१	तर्कहट्ट [ विरुद ]	२१
जिनसागर [ मुनि ]	२३	जैथल [ द्रम ]	६६, ६७	सारङ्गक [ महातीर्थ ]	७१, ८२
जिनसिंह सूरि	९३	जोगिनी पोंढ	९३, ९४	सारण [ महातीर्थ ]	५२, ५५
जिनहित [ त्रा० ]	२३	जोगिणीपुर	९४	सारणगढ [ तीर्थ ]	५९
जिनहित [ उपाध्याय ]	४२, ४४, ४७, ४८, ४९	जोध [ सा० ]	६१	साहण [ सा० ]	६६, ७३
जिनाकर [ मुनि ]	२३	जोयला [ ग्राम ]	५७	साबा [ गोच ]	९३
जिनागर गणि	४०	ज्ञानदत्त [ मुनि ]	६४	सिलकूर्कोर्ति [ मुनि ]	५६
जिनेश्वर [ गणि, मुनि ]	१-३	ज्ञानमाला [ गणिनी ]	४९, ५०, ५५	सिलकप्रम गणि [ मुनि ]	४९
जिनेश्वर सूरि ४-६, १४, ४८- ५०, ५२-५६, ६२, ७५, ७८, ८२		ज्ञानलक्ष्मी [ साध्वी ]	६४	सिलकप्रम सूरि	३६-३८
जिनेन्द्र सूरि [ चैत्यवासी ]	८	ज्ञानश्री [ साध्वी ]	१९, ४४	सिलपथ [ ग्राम ]	६७
जिसधर [ सा० ]	५२	ज्ञाका [ श्रा० ]	७०	सिहण [ मंत्री ]	६०
जिसहड [ गो० ]	५७	ज्ञासा [ सा० ]	८६	सिहणा [ सा० ]	६३
जीरापट्टी [ ग्राम ]	८६, ८७	ज्ञाज्ञण [ सा० ]	५६, ६०, ६३, ८०, ८५-८७,	सिहणा [ साह ]	७०
जीमदेवाचार्य	१९	ज्ञाज्ञण [ शीहड, सा० ]	७६	तीनी ( ? ) [ श्राविका ]	५३
जीवहित [ मुनि ]	४९	ज्ञाज्ञा [ सा० ]	७८	सुरूपक [ देश ]	१७, १८
जीवानन्द [ उपाध्याय ]	१९	शुञ्जणू } [ ग्राम ]	६६, ७२	तेजपाठ [ सा० ]	५३, ६७-७७, ७९, ८०, ८६
जीवानन्द [ मुनि ]	५५	शुञ्जणू } [ ग्राम ]	५	तेजसिंह निहार	८७
जीवानन्द [ सा० ]	१८	टक्कर [ ग्राम ]	५	तेनःकीर्ति [ कुञ्जक ]	६३
जीविग [ सा० ]	५२	ढालामउ [ ग्राम ]	६५	तोडिय [ सा० ]	६२
		ढिण्डियणा [ ग्राम ]	५	तोडी [ सा० ]	६१
		ढिछी [ नगरी ]	२१, २२, २४, ३४, ५०	त्रिदशकीर्ति गणि	६०
				त्रिदशानन्द [ मुनि ]	५२
				त्रिसुनकीर्ति [ मुनि ]	६४

त्रिभुवनगिरि [ नगर ] १९, २०, ३४	देदा [ महं० ] ५२, ५३, ५५, ५९	देवसेन गणि ४९
[ त्रि ] भुवनहित [ मुनि ] ६५	देदा [ सा० ] ६३, ७२, ८३	देवशेखर [ मुनि ] ५०
त्रिभुवनानन्द [ मुनि ] ५२	देदाक [ महं० ] ५३	देहड [ छो० ] ५३
त्रिलोकनिधि [ मुनि ] ५१	देपाल [ ठ० ] ६६, ७२, ७४	देहड [ ठ० ] ६४
त्रिलोकहित [ मुनि ] ४९	देपाल [ सा० ] ७७, ८७	देहट [ वैद्य ] ५३
त्रिलोकानन्द [ मुनि ] ४९	देपाल गणि १८	देहडि [ वैद्य ] ५९
त्रिशङ्कमक [ ग्राम ] ७१, ८७, ८८	देवकीर्ति [ क्षुल्लक ] ८१	देवाचार्य [ धादी ] १९, ३८, ३९, ५७
त्रिशङ्कमकीय [ संघ ] ७१	देवकीर्ति गणि ४४	देवेन्द्र [ मुनि ] ४४
त्रिहुण ( ? ) पालही [ आश्रिका ] ५३	देवकुमार [ सा० ] ५३	देवेन्द्रदत्त [ मुनि ] ६४
थकण [ सा० ] ५२	देवगिरि [ नगर ] ६९, ९२	द्रमकपुर [ ग्राम ] ६७
थंनणय नयर ३५	देवगुरुमक [ मुनि ] ४९	द्रोणाचार्य ७
थालण [ सा० ] ६३	देवचन्द्र [ मुनि ] ४४	द्विवल्लक [ द्रम्म ] ७५, ७६, ७९
थिरचन्द्र [ पं०, मुनि ] १८, २५	देवतिलक [ मुनि ] ४९	धणपाल [ सा० ] ५३, ७७
थिरचन्द्र [ सा० ] ७१	देवधर [ सा० ] १८, १९	धणेश्वर [ सा० ] ४०
थिरदेव [ मुनि ] २४	देयनाग २०	धनचन्द्र [ सा० ] ५६
थिरदेव [ ठ० ] ६४	देवपत्तन [ नगर ] ५३	धनपाल [ सा० ] ५१-५३, ६०, ६३
थिरदेव [ सा० ] ४६, ६१	देवपत्तनीय [ संघ ] ५६	धनद यक्ष ५५
थेहड [ गोष्ठिक ] ५०	देवप्रम [ मुनि ] २४, ७०	धनदेव [ सा० ] १६, ५३, ८५
दक्खिण देस ९२	देवप्रभा [ सुल्लिका ] २४, ५८	धनशील [ मुनि ] २३
दर्शनहित [ मुनि ] ६५	देवप्रमोद [ मुनि ] ५०	धनसिंह [ सा० ] ८७
दशरूपक [ साहित्यग्रन्थ ] ३४	देवभद्र [ सुल्लक ] ७४, ७७	धनी [ भण० आश्रिका ] ६३
दरावैकालिक [ ग्रन्थ ] ३, ४०	देवभद्र [ मुनि ] ५, २०	धनु [ मं० ] ७०
दाश्रिक [ ग्राम ] ९६	देवभद्राचार्य ९, १४-१६	धनेश्वर [ मुनि ] ५
दाश्रिक [ ग्राम ] ४४	देवमूर्ति [ पं०, गणि ] ४९, ५१, ५२, ५९	धम्मदेव [ वा० ] ९२
दाहड [ सा० ] ५३	देवराज [ मंत्रीश्वर ] ६९	धरणेन्द्र [ देवता ] १
दिगम्बर २३, २४	देवराज [ सा० ] ७२, ७७, ८१	धर्मकलश [ मुनि ] ५८
दिदा [ राजप्रधान ] २४	देवराजपुर [ ग्राम ] ६४, ६५, ७७, ८१, ८२, ८४, ८५	धर्मकीर्ति [ मुनि ] ४४, ५९
दिनचर्या [ ग्रन्थ ] ६	देवराजपुरीय [ संघ ] ७३, ८०, ८१	धर्मचन्द्र [ मुनि ] २३
दिवाकराचार्य ५९, ७१	देवराजपुरीय [ मुनि ] ५९	धर्मतिलक [ मुनि ] ४९
दुर्लभ [ भण० ] ६२, ६३	देवराजपुरीय [ मुनि ] ५९	धर्मतिलक गणि ५२
दुर्लभपाज [ महापाज ] २, ३	देवसिंह [ मं० ] ६४	धर्मदास गणि ६७
दुर्लभसमृद्धि [ साप्ती ] ६५	देवसिंह [ ठ० ] ६६, ६७	धर्मदेव [ मुनि ] ५, ४४
दुष्टहराय ( दुर्लभपाज ) ९०	देवमीह [ सा० ] ५७, ६३	धर्मदेव [ तपाप्पाय ] १४
दुस्मान [ मं० ] ६१	देवमुरि ३९	धर्मेशी [ प्र० महत्तर ] ४४
दुदधर्मा [ साप्ती ] ६३		

धर्मदेवी [ साध्वी ]	३४	नगरकोट्ट [ तीर्थ ]	५०	नाथु [ सा० ]	८३
धर्मपाल [ मुनि ]	२३	नगरकोटीय [ संघ ]	४४, ४५	नायन्धर [ भा० ]	५३
धर्मप्रभ [ मुनि ]	६५	नमिकीर्ति [ झुलक ]	८१	नारसद [ नगर ]	८६
धर्मप्रमा [ झुलिका ]	५८	नन्दन [ सा० ]	७३	नारिन्दा [ स्थान ]	६०
धर्ममति [ गणितनी ]	४९	नन्दिबर्धन [ मुनि ]	४९	निम्बा [ सा० ]	८६
धर्ममाळा [ ग० प्रवर्तिनी ]	६५	नन्दीश्वर [ तीर्थ ]	५०	नीम्बदेव [ सा० ]	५२, ५५, ७९
धर्ममाळा [ साध्वी ]	५५	नयनसिंह [ मंत्री ]	६१	नीवा [ सा० ]	७७
धर्ममित्र [ मुनि ]	२३	नयसागर [ झुलक ]	८६	नेव [ राजप्रधान ]	७२
धर्ममूर्ति [ गणि, मुनि ]	४९, ५१	नरचन्द्र [ मुनि ]	४४, ५९	नेमा [ सा० ]	८८
धर्मरुचि गणि	२४, ४४-४६	नरातिलक [ राजर्षि ]	६०	नेमिजुमार [ सा० ]	५२, ५८, ६१, ६५,
धर्मलक्ष्मी [ साध्वी ]	६४	नन्दन [ सा० ]	८२	नेमिचन्द्र [ नवलक्षक, सा० ]	६३
धर्मशील गणि	३४	नरपति [ झुलक ]	२३	नेमिचन्द्र [ भा० सा० ]	४४, ९३
धर्मश्री [ साध्वी ]	३४	नरपति [ सा० ]	५१	नेमिचन्द्र [ मुनि ]	४४
धर्मसागर [ गणि, मुनि ]	२३, २४	नरपालपुर [ ग्राम ]	२०	नेमिचन्द्र [ सा० ]	७९
धर्मसिंह [ सा० ]	७२, ७७	नरपाल [ श्रेष्ठी ]	८४	नेमिचन्द्र [ मुनि ]	५६
धर्मसुन्दरी [ झुलिका ]	७७	नरपाल [ सा० ]	८२	नेमिचन्द्र [ साधु ]	५२
धर्मसुन्दरी [ गणितनी ]	४९, ५१	नरभट [ ग्राम ]	६५, ६६, ६८, ७२	नेमिचन्द्र [ मुनि ]	५६
धर्मोत्तर [ मुनि ]	४९	नरवर [ ग्राम ]	१३	नेमिचन्द्र [ साध्वी ]	५२
धवलक [ नगर ]	१४	नरवर्म [ राजा ]	१३	न्यायकन्दली [ ग्रन्थ ]	२०
धाटी [ ग्राम ]	४४	नरसमुद्र [ पत्तन ]	७०	न्यायकीर्ति [ झुलक ]	८१
धानपाठी [ ग्राम ]	२४	नरसिंह [ भण० ]	६३, ७१	न्यायचन्द्र गणि	४९
धान्यल [ सा० ]	५१	नरानयन [ नगर ]	२५	न्यायसहायक [ ग्रन्थ ]	७१
धान्यल [ सौवर्गिक, सा० ]	५५, ५६	नरदेवप्रभ [ मुनि ]	६५	न्यायलक्ष्मी [ साध्वी ]	५१
धान्यु [ सा० ]	६४	नवलक्षक [ कुल ]	६०	न्यायावतार [ ग्रन्थ ]	३४
धान्यूका [ नगर ]	७९	नवहर [ ग्राम ]	१९	पञ्चमसिंह [ ठ० ]	७०
धामइना [ ग्राम ]	६६, ६८, ७२	नवहा [ ग्राम ]	६६, ७२	पञ्चमार्द्ध [ देवी ]	९३, ९४, ९५
धारसिंह [ सा० ]	५१	नवाङ्गुलि [ ग्रन्थ ]	६, ९	पञ्चनद [ देश ]	९२
धार [ नगरी ]	१३, १८, १९, ४४	नागदत्त [ वा० ]	२०	पद्माशरीय [ चैत्य ]	२, ३
धारपुरी ,,	२०	नागदेव [ सा० ]	८६, ९१	पद्मकल्प [ ग्रन्थ ]	४०
धीणा [ सा० ]	७१-७३, ७५, ७६	नागद्वह [ ग्राम ]	४४	पञ्जिका [ ग्रन्थ ]	१८
धीणिग [ सा० ]	८३	नागपुर [ नगर ]	१३, १४, १६, १९, ६३-६६, ७३	पञ्जिकाप्रबोध [ ग्रन्थ ]	५७
धीषाक [ सा० ]	५०	नागपुरीय [ संघ ]	६०, ६५	पतिपाण ( ? )	५३
धीन्याक [ सा० ]	५३	नागचन्द्र [ मंत्री ]	६१	पत्तन [ नगर ]	२, ६, ७, १०, १४, १६, १९, ४४, ४९, ५२,
धीर [ सा० ]	८३	नाणा [ तीर्थ ]	८७		
धुसुर [ सा० ]	८६				

६०, ६३-६५, ६९-७३, ७५-७७, ८१, ८६	पातिसाहि	६७	पूना [ सा० ]	६३, ७२
पतनीय [ संघ ] ६०, ६२, ७०- ७३, ७६, ७७, ८०	पारस [ सा० ]	५३	पूनाक [ सा० ]	५२
पद्म [ भा० ] ६३	पारुथ्य [ द्रम ] १३, २०, २४, ३४		पूनागी [ सा० ]	५१
पद्म [ भण० ] ७७	पार्श्वदेव गणि	२४	पूर्ण [ सा० ]	६१
पद्म [ भा० ] ६१	पालहउद्रा [ भ्राम ]	७	पूर्ण [ ठ० ]	६६
पद्म [ सा० ] ६६	पालहण [ सा० ] २१, २२, ५३		पूर्णकलश गणि	४५, ५१
पद्मकीर्ति [ मुनि ] ५६	पावापुरी [ नगरी ]	६०	पू ( ख ) णगिरि	५६
पद्मकीर्ति गणि ६६	पासट [ सा० ]	२४	पूर्णचन्द्र [ मुनि ]	२३, ४४
पद्मचन्द्र [ मुनि ] २३	पासवीर [ सा० ]	७३	पूर्णचन्द्र [ शिहड, सा० ]	६५, ८५
पद्मचन्द्राचार्य २०, २१	पासू [ सा० ]	५३	पूर्णचन्द्र [ सा० ]	७३, ७९
पद्मदेव [ मुनि ] ३४	पाहा [ ठ० ]	७०	पूर्णदेव गणि	२०, ४४
पद्मदेव गणि ४७, ५४, ५५	पाह्नी [ श्राविका ]	५३	पूर्णपाल [ सा० ]	५३, ५५, ७८
पद्मप्रम [ ऊ० ग० मुनि ] २५, ३३, ४४, ४७	पिंडविसुद्धि [ पगरण ]	९१	पूर्णमद्र गणि	४४
पद्ममूर्ति [ क्षुल्लक ] ८२, ८५	पिशाच [ भाषा ]	३१	पूर्णरथ [ मुनि ]	२३
पद्मरत्न [ मुनि ] ५९	पीपलाउली [ भ्राम ]	६२	पूर्णशेखर [ मुनि ]	५१
पद्मश्री [ क्षुल्लिका ] ६२	पुम्बखरणगोत्त	९०	पूर्णश्री [ साध्वी ]	१८, १९
पद्मसिंह [ सा० ] ५३, ८७	पुण्यकीर्ति गणि ६०, ६५, ७८		पूर्णश्री [ गणिनी ]	४९
पद्महंस [ सा० ] ६१	पुण्यचन्द्र [ मुनि ]	५९	पूर्णसिंह [ महं० ]	५४, ५७
पद्मा [ सा० ] ६३, ७२	पुण्यतिलक [ मुनि ]	५९	पूर्णसिंह [ सा० ]	५१, ८७
पद्माकर [ मुनि ] ५१	पुण्यदत्त [ मुनि ]	६४	पूर्णसामर [ मुनि ]	२३
पद्मावती [ देवी ] ४९	पुण्यप्रम [ मुनि ]	६५	पूर्णमा [ गच्छ ]	३४
पद्मावती [ साध्वी ] ५२	पुण्यप्रिय [ क्षुल्लक ]	८५	पूर्णनिनिरेन्द्र ( पृथ्वीराज )	२९
पद्म [ सा० ] ५१, ५३	पुण्यमाळा [ साध्वी ]	५५	पृथ्वीचंद्र [ राजा ]	४४-४६
परमकीर्ति [ क्षुल्लक ] ६२	पुण्यमूर्ति [ मुनि ]	५७	पृथ्वीराज [ राजा ]	२५-३३, ४३, ४७, ८४
परमानन्द [ मुनि ] ४९	पुण्यलक्ष्मी [ साध्वी ]	६४	पेघड [ सा० ]	५२, ७३
परशुरोर [ कोट ] [ भ्राम ] ८४	पुण्यसुन्दरी [ ग० प्रवर्तिनी ]	५८, ६५, ७४, ७८	पोरवाड [ वंस ]	८९
पङ्गी [ भ्राम ] १	सुर्ण [ भण० ]	६३	पीर्णमासिक [ गच्छ ]	३६
पञ्चपुर [ भ्राम ] ९३	सुष्करिणी [ भ्राम ]	४४	प्रतापकीर्ति [ क्षुल्लक ]	६३
पवित्रचित्त [ मुनि ] ५१	सुष्करी [ भ्राम ]	२३	प्रतापसिंह [ ठ० ]	६६, ८१
पाडला } [ भ्राम ] ६३, ७९	सुष्पमाळा [ साध्वी ]	५५	प्रतापसिंह [ सा० ]	८०, ८६
पाडला } [ भ्राम ] ६३, ७९	सुहविराय [ पृथ्वीराज, राजा ]	३३	प्रमुन्नसुरि	४३
पाणिनि [ भ्रम्य ] १०	पूतड [ सा० ]	६६	प्रमुन्नाचार्य २६, ३८-४३, ४६	
	पूतसी [ महं० ]	५३	प्रधानलक्ष्मी [ साध्वी ]	५२
	पूतपाल [ सा० ]	५५	प्रबोधचन्द्र गणि	४९, ५१

प्रबोधमूर्ति [ मुनि ]	४९	वालादे [ राज्ञी ]	९४, ९५	भावडापरिय [ गच्छ ]	१४
प्रबोधमूर्ति गणि	५४	वाहड [ देवगृह ]	१६	भाभदेन [ मुनि ]	४४, ४६
प्रबोधसमुद्र [ मुनि ]	५३	वाहड [ मा० ]	५६	भाभनातिलक [ मुनि ]	५१
प्रभाभती [ महत्तरा ]	४४	वाहड [ सा० ]	१४, ५९	भाभमूर्ति [ क्षुल्लक ]	८२
प्रमोदमूर्ति [ मुनि ]	४९	वाहडमेरु [ नगर ]	४९, ५१, ५६	भीम [ क्षेत्रपाल ]	५१
प्रमोदलक्ष्मी [ साध्वी ]	५१	वाहडमेरवीय [ सघ ]	६२	भीम [ सा० ]	५५, ८३
प्रमोदश्री [ गणिनी ]	४९, ५०	वाहला [ सा० ]	६०	भीमदेव [ राजा ]	३४, ४३
प्रसन्नचन्द्र [ मुनि ]	५	बुद्धिसदृदि [ ग० प्रवर्तिनी ]	५१, ५९, ६३, ६९	भीमसिंह [ राजा ]	२३, २४
प्रसन्नचन्द्र गणि	४९	बुद्धिसागर [ मुनि ]	५	भीमसिंह [ सा० ]	५३
प्रसन्नचन्द्राचार्य	९, १४	बुद्धिसागर गणि	४९	भीमपल्ली [ भ्राम ]	४४, ५०, ५१, ५६, ५९, ६०, ६२-६४, ६९-७१, ७३, ७७-७९, ८७
प्रल्हादन [ बृहत्तर ]	११	सुषुचन्द्र [ सा० ]	५२	भीमपल्लीय [सव]६०, ६२, ७१, ७९	
प्रल्हादनपुर [ नगर ]	४७, ४९-५२, ५४-५६, ५९, ६०, ६३, ८७	बुजडी [ भ्राम ]	८८	भीमा [ मा० ]	५९
प्रल्हादनपुरीय [ सघ ]	५०, ५२ ५७, ६०, ६२, ८०	बुजरी [ भ्राम ]	८७	भीमा [ सा० ]	६३, ७२
प्राकृत [ भाषा ]	२८, ३१	बृहद्धार [ भ्राम ]	४४, ४६	भीम्य [ सा० ]	७२
प्रियदर्शना [ साध्वी ]	५२	बोधक [ सा० ]	५१	मुषणाक [ सा० ]	५३
प्रियदर्शना [ गणिनी ]	६४, ६९	बोहिय [ सा ]	६०, ८६	सुनन [ सा० ]	५१
प्रियधर्मा [ साध्वी ]	६४	बोहित्य [ सा० ]	५०	सुननकीर्ति [ मुनि ]	५४
प्रीतिचन्द्र [ क्षुल्लक ]	५९	ब्रह्मचन्द्र गणि [ वा० ]	१८, १९	सुननचन्द्र गणि [ वा० ]	१९
फलवर्द्धिका [ नगरी ]	२४, २५, ३४, ६४-६६, ७२, ७६	ब्रह्मदेव [ मह० ]	५४	सुननतिलक [ मुनि ]	५९
फेरू [ ठ० ]	६६, ६७, ७२	ब्रह्मशाति [ यक्ष ]	५	सुननपाल [ सा० ]	४९, ५२
बज्रल [ सा० ]	७०	भङ्गणा [ मा० ]	६३	सुवनमूर्ति [ क्षुल्लक ]	६४
बन्धेरक [ भ्राम ]	२०, २३, २५, ६४	भङ्गसीह [ सा० ]	६०	सुवनलक्ष्मी [ साध्वी ]	५८
वरडिया [ नगर ]	६०	भद्रमूर्ति [ क्षुल्लक ]	८२	सुवनश्री [ गणिनी ]	४७
बद्धिसामपुर [ भ्राम ]	८२, ८३, ८४	भरत [ क्षेत्र ]	३९	सुवनममूर्दि [ साध्वी ]	६५
बद्धिसामपुरीय [ सघ ]	८२, ८३	भरत [ सा० ]	१६	सुवनसिंह [ मनी ]	६१
बहुगुण [ सा० ]	५३	भरतकीर्ति [ मुनि ]	५१	सुवनसुन्दरी [ साध्वी ]	५८
बहुचरित्र [ मुनि ]	५०	भरवच्छ [ नगर ]	९२	सुवनहित [ मुनि ]	६५
बहुदाक [ श्रावक ]	११	भरहपाल [ ठ० सा० ]	६२	श्रृगुकच्छ [ नगर ]	५५
बाचू [ सा० ]	६०	भवनपाल [ सा० ]	५०	भोखर [ सा० ]	१६
बालचन्द्र [ सा० ]	५१	भाडा [ सा० ]	६१	भोजराज [ म० ]	६१, ६४, ७७, ८०
		भादानक [ नगर ]	२८, ३३	भोजराज [ राजा ]	२९
		भाभह	१	भोजा [ ठ० ]	६६
		भाभड [ सा० ]	५१	भोजा [ सा० ]	७२, ७४, ८७

भोजाक [ वसा० ]	५१	मलिक	७४	मानदेव [ सा० ]	२३, २४
भोलक [ सा० ]	५३	मल्लदेव [ महामाल्य ]	५७	मानक [ सा० ]	६४
मङ्गलकलश [ मुनि ]	५६	महण [ सा० ]	५६	मानभद्र गणि	४४
मङ्गलनिधि [ साध्वी ]	५२	महणपाल [ व्यव० ]	७८	मारव	३६
मङ्गलमति [ गणिनी ]	४९	महणसिंह [ मंत्री ]	५५	मारुवन्ना [ देश ]	६५
मङ्गलमति [ साध्वी ]	४४	महणसिंह [ सा० ]	६४, ७२-७६	मालदेव [ राणाक ]	६८
मङ्गलश्री [ साध्वी ]	४७	महणसीढ [ सा० ]	६३	मालदेव [ सा० ]	७७
मण्डलिक [ मं० ]	८८	महणा [ सा० ]	६६	मालव [ देस ]	९०, ९२
मण्डलिक [ राजा ]	५१	महम्मदसाहि	९४-९६	मालव्य [ देश ]	४३
मण्डलिक [ व्यव० ]	७८	महाधर [ सा० ]	८३, ९३	माहला [ सा० ]	६४
मतिचन्द्र [ मुनि ]	५९	महाधर [ सिद्धि ]	९४	मीलगण ( सीलण ? )	
मतिप्रभ [ क्षुल्लक ]	८०	महावन [ देश ]	२०	[ दण्डाधिपति ]	५१
मतिदल्मी [ साध्वी ]	६४	महाविदेह [ क्षेत्र ]	५, ७, ८९	मुक्तावली गणिनी	४९
मथुरा [ तीर्थ ]	२०, ६६-६८	महावीर [ दिगंबर ]	४४	मुक्तिचन्द्रिका [ साध्वी ]	६०
मदन [ ठ० ]	६७	महावीरचरित [ प्रन्य ]	१५	मुक्तिदम्मी [ साध्वी ]	५९
मदनपाल [ राजा ]	२१, २२	महाश्री [ क्षुल्लिका ]	८६	मुक्तिबल्लभा [ साध्वी ]	५२
मनोदानन्द [ पं० ]	४४-४६	महाराज [ सा० ]	६६, ७३	मुक्तिश्री [ साध्वी ]	५९
मनोरथ [ का० ]	५३	महीपाल [ महाराज ]	८८	मुक्तिमुन्दरी [ साध्वी ]	५०
मन्त्रिदल्लुल ६५, ६६, ७०-७२, ७९, ८१		महीपाल [ सा० ]	८८	मुद्रस्थला [ ग्राम ]	८१
मन्दिरतिलक [ प्रासाद ]	५१	महीपालदेव [ राजा ]	७५	मुनिचन्द्र [ उपाध्याय ]	१९
मन्ना [ सा० ]	७७	महेन्द्र [ मुनि ]	४४	मुनिचन्द्र गणि	४४, ७०
सम्भवाहाण [ नगर ]	९२	माश्यड [ ग्राम ]	९	मुनिचन्द्र [ मुनि ]	५९
सम्मी [ सा० ]	८६	मागधी [ भाषा ]	३१	मुनिचन्द्राचार्य	११
सखट [ देश ]	९२	माघकाव्य [ ग्रन्थ ]	३५	मुनिवल्लभ [ मुनि ]	५६, ६०
सकौह [ नगर ] ८, ९, १३, २०, २३, ३४, ६५, ७३		माङ्गलउर [ नगर ]	७५	मुनिसिंह [ मुनि ]	६०
सकौह्रीय [ संघ ]	५८	माणचन्द्र [ मं० ]	६९	मुपारि [ नाटक ]	३९
सरुदेवी [ गणिनी ]	५	माणदेव [ सा० ]	३३	मृत्थराज [ म० ]	६९
सरुथल ३६, ४१, ६५		माणभद्र [ पं० मुनि ]	२४	मृत्तराज [ मन्त्री ]	६५
सहस्थली १६, ३९, ५८, ६४, ८१, ८२		माणभद्र गणि [ वा० ]	१९	मूलेदेव [ सा० ]	५१, ६०
मलयचन्द्र [ मुनि ]	४४	माणू [ सा० ]	८	मूलेराज [ सा० ]	५३, ८१
मलयसिंह [ मंत्री ]	७७	माण्डव्यपुर [ ग्राम ] ३४, ३६, ४४		मूटिय [ सा० ]	५१-५३, ५५
मलिकपुर [ ग्राम ]	८२	माण्डव्यपुरीय [ संघ ]	६०	मेवकुमार गणि	४९
		माधव [ मंत्री ]	५९	मेघनाद [ क्षेत्रपाल ]	४९
		मानचन्द्र गणि [ वा० ]	२५, ४४	मेघमूर्ति [ क्षुल्लक ]	८२
		मानदेव [ मुनि ]	४४	मेघसुन्दर [ क्षुल्लक ]	५८

मेडता [ ग्राम ]	६६, ६८, ७३	यशोमद्राचार्य	३४	राजचन्द्र [ पं०, मुनि ]	५९, ६५
मेदपाटीय [ संघ ]	५२	यशोधर [ मुनि ]	२४	राजचन्द्र [ सूरि ]	६८
मेदपाड [ देश ]	९१	यशोधवल [ गोष्ठिक ]	५५, ६३	राजतिलक गणि [ वा० ]	५५
मेरुकलश [ मुनि ]	५८	यशोधवल [ सा० ]	४९, ६५, ७१, ७७, ८५, ८६	राजदर्शन गणि [ वा० ]	५९, ७१
मेरू [ सा० ]	७३	यशोदामाला [ साध्वी ]	५५	राजदर्शन [ मुनि ]	५१
मेहनाअ [ खितपाळ ]	४४	या [ जा ] वालिपुर [ नगर ]	५१	राजदेव [ सा० ]	५१-५३, ७८
मेहर [ सा० ]	१६, ६६	युगमन्धरस्वामी	७	राजपुत्र [ भा० ]	५३
मेहा [ मं० ]	६६	योगिनीपुर [ नगर ]	२२, ५५, ६०, ६५, ६९, ७२, ७५, ७७, ७९,	राजललित [ मुनि ]	५०
मोकलसिंह [ सा० ]	६१, ६२	रत्न [ री० सा० ]	५२, ७६	राजशेखर [ मुनि ]	५१
मोख [ सा० ]	१६	रत्नकीर्ति गणि	४९	राजशेखर गणि	५८, ६०, ६१
मोखदेव [ सा० ]	७५, ७७, ८२, ८७, ८८	रत्नतिलक गणि	४९	राजशेखरार्चाय	६३, ७१
मोदमूर्ति [ कुष्ठक ]	८२	रत्ननिधान [ मुनि ]	५०	राजसिंह [ सा० ]	७०, ७३-७७, ८७
मोदमन्दिर [ मुनि ]	५०	रत्नपाळ [ ठ० ]	६०	राजा [ भा० ]	५३, ५७, ७२
मोल्हाक [ सा० ]	५०	रत्नपुर [ नगर ]	६०, ६३	राजाक [ भा० ]	५३
मोहण [ श्रेष्ठी ]	६२	रत्नपुरीय [ संघ ]	५७	राजाक [ सा० ]	५३
मोहण [ सा० ]	५७, ७०, ७३, ७४, ८३	रत्नप्रभ गणि	४९	राजीमती [ गणिनी ]	४९
मोहन [ सा० ]	५७, ६०	रत्नमञ्जरी [ कुष्ठिका ]	५९	राजू [ श्राधिका ]	५५
मोहविजय [ मुनि ]	५६	रत्नमञ्जरी [ गणिनी ]	६४	राजेन्द्रचन्द्राचार्य	६५, ६९, ७०
मोहा [ सा० ]	५७	रत्नमति [ साध्वी ]	४४	राजेन्द्राचार्य	७१
मोहिलवाडी [ ग्राम ]	९३	रत्नवृष्टि [ प्र०, गणिनी ]	५६, ६२	राणककोट [ ग्राम ]	८२
मोहला [ श्राधिका ]	५३	रत्नवृष्टि [ साध्वी ]	५१	राणकोट [ ग्राम ]	६३
यत्तिकलश [ मुनि ]	४९	रत्नश्री [ साध्वी ]	५९	राव [ ठ० ]	६६
यत्तिपाळ गणि [ पण्डित ]	२४	रत्नश्री [ प्रवर्तिनी ]	४४	राव [ सा० ]	७२
यमचन्द्र [ मुनि ]	३४	रत्नसुन्दर [ मुनि ]	६०	रामकीर्ति [ कुष्ठक ]	६२
यमदण्ड [ दिगम्बरवादी ]	४९	रत्नसुन्दरी [ साध्वी ]	५८	रामचन्द्र [ मुनि ]	४४
यमुना [ नदी ]	६७	रत्नाकर [ मुनि ]	५०	रामचन्द्र गणि [ सा० ]	१८, १९
यमुनापार [ प्रदेश ]	६६	रत्नावतार [ मुनि ]	५२	रामदेव [ महाराजा ]	८८
यशःकलश गणि	४९	रत्नावल [ गणिनी ]	४९	रामदेव [ मुनि ]	४४
यशःकीर्ति [ मुनि ]	६०	रयणपाळ [ रत्नपाळ ]	९३	रामदेव [ सा० ]	२५, ३२, ३३
यशःप्रभा [ साध्वी ]	५४	रयपति [ सा० ]	७२-७७, ८४,	रामदायनीय [ संघ ]	५७
यशश्चन्द्र [ मुनि ]	२०	राघवचैयन [ पण्डित ]	९५, ९६	रासल [ सा० ]	१६, २०, ४०
यशोमद्र [ कुष्ठक ]	७४, ७७	राज [ मंत्रीधर ]	७०	रामउ [ श्राधिका ]	५३
यशोमद्र [ मुनि ]	२०	राजगृह [ नगरी ]	६०, ६१, ८१	राहला [ श्रा० ]	४९
				रीहड [ वंदा ]	७५, ७६, ८५

रुणा [ ग्राम ]	६३, ६६	लन्धनिधान गणि	८४	वयरस्वामी	७३, ८२
रुणापुरी [ ग्राम ]	६४	लन्धनिधान महोपाध्याय	८५-८८	वरकीर्ति [ क्षुल्लक ]	६२
रुणापुरीय [ संघ ]	६०	लन्धिमाला [ साध्वी ]	५५	वरडिया [ ग्राम ]	५६
रुदथोली [ नगर ]	९२	लन्धिसुन्दर [ क्षुल्लक ]	५८	वरणाग गणि [ वा० ]	१९
रुदपाल [ सा० ]	६६, ६९, ७१, ७५, ७७, ७९, ८०	ललितकीर्ति [ क्षुल्लक ]	८१	वरदत्त [ मुनि ]	१८
रुदपल्ली [ गच्छ ]	९२	ललितप्रम [ मुनि ]	६५	वरदत्त गणि [ वा० ]	१९
रुदपल्ली [ ग्राम ]	१७, १८, २०, २१	ललितश्री [ क्षुल्लिका ]	८०	वर्धमान [ मुनि ]	१
रूदा [ सा० ]	६५	लवणखेटक [ नगर ]	४४, ८०	वर्धमान सूरी	१, ३, ५, ८२
रूपचन्द्र [ सा० ]	५१, ६१	लावण [ सा० ]	७३, ८२	वर्धमानचन्द्र [ मुनि ]	२०
रूपा [ सा० ]	७२, ८३, ८४	लावू [ सा० ]	६२	वर्धमानाचार्य	९
रूवाक [ सा० ]	५३	लाटहद [ ग्राम ]	८०	वश्याय [ गोत्र नाम ]	३४
रोहद [ ग्राम ]	६६, ६८	लाटणुवाड ,,	९३	वस्तुपाल [ महामात्य ]	४९, ६२, ७८
रोहण्ड [ कुल; वंश ? ]	७५	लाभनिधि [ मुनि ]	५०	वस्तुपाल [ सा० ]	७३
रोहंड [ सा० ]	७५	लावाहण [ ग्राम ]	८३	वागड [ देश ]	१२, १७-१९, ३४, ६०, ६५, ६६, ६८, ९१
लक्षणयडिका [ ग्रन्थ ]	१४	लावाहणीय [ संघ ]	८३	वागीश्वर [ पंडित ]	२५
लक्ष्मीकलश [ मुनि ]	५६	लाले [ श्रा० ]	२०	वागड [ देश ]	४४
लक्ष्मीकलश उपाध्याय	५५	लालावती कथा [ ग्रन्थ ]	५	वागडीय [ संघ ]	४४, ५०, ५२
लक्ष्मीकलश गणि	४९, ५१	लणसीह [ सा० ]	६३	वाग्भट मेरु [ ग्राम ]	५०, ८०, ८६
लक्ष्मीधर [ मां० ]	५७	लणा [ सा० ]	६६	वाग्भट मेरवीय [ संघ ]	५७, ८०
लक्ष्मीधर [ यशहरक, सा० ]	४४	लणाक [ भण० ]	६३	वाछिग [ सा० ]	१४
लक्ष्मीधर [ व्य० ]	४३, ४४	लणगिवाहिर [ मन्दिर ]	८७	वाणारसी [ नगरी ]	६०, ९५
लक्ष्मीधर [ सा० ]	४९, ८५	लणीबडी [ ग्राम ]	७२	वादली ( डिड्डी ? )	१, २०
लक्ष्मीनिधि [ महत्तरा ]	५०, ५२	लोहट [ ठ० ]	२१	वादस्थल [ ग्रन्थ ]	२६
लक्ष्मीनिवास [ मुनि ]	५२	लोहट [ सा० ]	७९	वादस्थान [ ग्रन्थ ]	२६
लक्ष्मीनिवास गणि	६१	लोहड [ सा० ]	२२	वाघू [ सा० ]	७९
लक्ष्मीमाळा [ गणिनी ]	८६	लोहदेव [ सा० ]	६०, ६४	वाघड [ ग्राम ]	६३, ७३, ७८
लक्ष्मीमाळा [ साध्वी ]	५५	वज्रस्वामी	६६, ७५, ७७, ७८	वाजक [ देश ]	७४
लक्ष्मीराज [ मुनि ]	५२	वटपद्रक [ नगर ]	६०	वास्तल [ सा० ]	१६, १८
लख (क्ष) ण [ रत्नाचार्य, सा० ]	७७	वत्यड [ सा० ]	५०	वा(वा)हडनेर [ नगर ]	९२
लखण [ सा० ]	६४, ८४	वदमाणसूरी	८९, ९०	विक्रमपुर [ नगर ]	१३, १८-२०, २३, २४, ३३, ३४, ४४, ५२, ५८
लखम [ सा० ]	६१	वदरहा [ ग्राम ]	५६	विक्रमपुरीय [ संघ ]	५८
लखमसिंह [ सा० ]	५९, ७३	वयजल [ सा० ]	५६, ७८	विगतदोष [ मुनि ]	५०
लखमा [ सा० ]	७९	वपारसिंह [ मं० ]	८८		
लन्धिकलश [ मुनि ]	५८	वपारसिंह [ सा० ]	६५, ६६, ८२		

विजय [ ठ०, सा० ]	४४	विमलचन्द्र [ सा० ]	५०, ५५	वीरभद्र [ मुनि ]	२०
विजयक [ ठ०, सा० ]	४५	विमलप्रज्ञ [ मुनि ]	५०	वीरभद्र गाणि	४५
विजयकीर्ति [ मुनि ]	४९	विमलप्रज्ञ [ उपाध्याय ]	५५	वीरवल्लभ [ मुनि ]	५०
विजयचन्द्र [ मुनि ]	४४	विमलविहार [ मन्दिर ]	८७	वीरसोखर [ मुनि ]	६०
विजयदेव सूरि	४९	विमलाचल [ तीर्थ ]	८४	वीरसुन्दरी [ साध्वी ]	५२
विजय [ प्रभ ] मुनि	४९	विवेकप्रभ [ मुनि ]	४९	वीरानन्द [ मुनि ]	५०
विजयमूर्ति [ कुल्लुक ]	८२	विवेकश्री [ साध्वी ]	४४	वीरहा [ मं० ]	६६
विजयरत्न [ मुनि ]	६०	विवेकश्री [ गणिनी ]	४९	वीसल [ सा० ]	६४
विजयवर्धन गाणि	४९	विवेकसमुद्र [ मुनि ]	४९	वृत्तप्रबोध [ ग्रन्थ ]	५७
विजयसिद्धि [ साध्वी ]	५२	विवेकसमुद्र [ उपाध्याय ]	६०	बृहद्ग्राम	६०
विजयसिंह [ ठ० ]	६५, ६६, ६९, ७०	विवेकसमुद्र गाणि	६८, ६९, ७९, ७१	वेला [ सा० ]	८३
विजया [ देवता ]	८	विवेकसमुद्र गणि	५२, ५७, ५९	व्रतधर्मा [ साध्वी ]	६३
विद्याचन्द्र [ गणि ]	४९	विश्वकीर्ति [ मुनि ]	६०	व्रतलक्ष्मी [ साध्वी ]	५२
विद्यानन्द [ पं० ]	५१	विहिपम्बल ( विधिपक्ष )	९१	व्रतश्री [ कुल्लिका ]	६२
विद्यापति [ पंडित ]	२५, २६, २८	वीकल [ सा० ]	८४	व्यवहार [ सूत्र-ग्रन्थ ]	४०
विद्यामति [ गणिनी ]	४९	वीकिल [ सा० ]	८२	व्याघ्रपुर [ नगर ]	१८, २४
विनयचन्द्र [ मुनि ]	२०	वीजड [ सा० ]	५३, ६१, ६२	शङ्खचरपुर [ तीर्थ ]	६०, ६३, ७४
विनयधर्मा [ साध्वी ]	८२	वीजा [ सा० ]	६०, ७२, ७६, ८७	शत्रुञ्जय [ महातीर्थ ]	१७, ३४, ३९, ४९, ५२, ५३, ५५, ६२, ६३, ७१, ७२, ७४-७९, ८५, ८७
विनयप्रभ [ कुल्लुक ]	८०	वीजाक [ सा० ]	५१	शत्रुञ्जयतलहट्टिका	७४, ७९
विनयभद्र [ वा० ]	२४	वीजापुर [ नगर ]	४९, ५१, ५३, ५५, ५७, ५९, ६२, ६३, ७०, ७१	शम्भागा [ ग्राम ]	६
विनयमति [ गणिनी ]	४९	वीजापुरीय [ संघ ]	५९, ६०, ७१, ८०	शम्भानयन [ ग्राम ]	५८-६५, ८०, ८१
विनयमाळा [ गणिनी ]	४९	वीर [ सा० ]	७९	शम्भानयनीय [ संघ ]	५७, ६२, ८०
विनयकृचि गणि	९४	वीरकशल [ गाणि ]	४९	शारङ्गद गणि	४९
विनयशाल [ मुनि ]	२०	वीरचन्द्र [ मुनि ]	२३, ६१	शान्तनपुर	५१
विनयसमुद्र [ मुनि ]	५३	वीरजय [ मुनि ]	२०	शान्तमति [ साध्वी ]	४४
विनयसागर [ मुनि ]	२३	वीरपाणा [ देवावाहक ]	४२	शान्तमूर्ति [ मुनि ]	५२
विनयसिद्धि [ साध्वी ]	५२	वीरतिलक [ गणि ]	४९	शान्तिग [ था० ]	५१
विनयसुन्दर [ कुल्लुक ]	५८	वीरदेव [ मुनि ]	२३	शिवर [ रागक ]	८६
विनयानन्द गाणि	४४	वीरदेव [ सा० ]	७०, ७१, ७७-७९, ८६, ८७	शिरखिज [ ग्राम ]	७८
विन्ध्यादित्य [ मन्त्री ]	५७	वीरधवल [ सा० ]	५३	शिवराज [ सा० ]	७२
विद्युधराज [ मुनि ]	५१	वीरपाळ [ सा० ]	३२	शीतलदेव [ राजा ]	६१
विमल [ मुनि ]	५	वीरप्रभ गणि	४, ४६-४८	शीतधर्मा [ साध्वी ]	८२
विमल [ दंडनायक ]	८९	वीरप्रिय [ मुनि ]	५२	शीचभद्र [ मुनि ]	१८
विमलचन्द्र गणि	८८, १९, ४७			शीचभद्र गणि [ वा० ]	१९

शौलमञ्जरी [ क्षुद्रिका ]	५९	संघपट्टय [ पगरण ]	९३	सहजा [ सा० ]	५०, ७९
शौलमाला [ गणिनी ]	४९	सघप्रमोद [ मुनि ]	४९	सहणपाल [ नंत्रा ]	५९
शौलरत्न [ मुनि ]	४९	संघभक्त [ मुनि ]	५१	सहदेव [ मुनि ]	५, ४४
शौलसमृद्धि [ साध्वी ]	६५	संघहितोपाध्याय	४९	सहदेव [ वैद्य ]	४३
शौलसागर [ मुनि ]	२२, ३४	सङ्क [ सा० ]	१०	साऊ [ श्राविका ]	२४
शौलसुन्दरी [ गणिनी ]	४९	सण्हिया [ सा० ]	१८, १९	सागरपाट [ नगर ]	२०-२३, २५
शुभचन्द्र [ मुनि ]	८६	सत्यपुर [ ग्राम ]	६३, ७७, ८०, ८६	सागण [ सा० ]	५३
शरसेनी [ भाषा ]	३१	सत्यपुरीय [ संघ ]	६०, ८०	सागण [ मं० ]	८७
शैरीपक [ तीर्थ ]	६२, ७८, ७९	सत्यमाला [ गणिनी ]	४९	सागा [ सा० ]	८७
श्याम [ सा० ]	६४	सं ( रु ? ) द्र [ राजा ]	८७	साढळ [ सा० ]	२३, ५१, ६३, ७७
श्यामळ [ सा० ]	७१, ८७	सपादलक्ष [ देश ]	६४, ६५, ७३	सातसिंह [ सा० ]	८६
श्रीकलश [ मुनि ]	५६	सपादलक्ष्मीय [ संघ ]	४३, ६१, ८७	साधारण [ बळ० ]	५०
श्रीकुमार	४९	समरसिंह [ राजा ]	५६	साधारण [ सा० ]	९०, १५, ९१
श्रीचन्द्र [ मुनि ]	२४	समाधिशेखर [ मुनि ]	५०	साधुभक्त [ मुनि ]	५०
श्रीचन्द्र [ सा० ]	५६	समुद्गार [ श्रा० ]	५६	सामन्त [ महं० ]	५३
श्रीतिलक [ उपाध्याय ]	५४	समेतशिवर [ तीर्थ ]	५९, ६१	सामन्तसिंह [ राजा ]	५९, ८७
श्रीदेवी [ साध्वी ]	२४	समेत [ तीर्थ ]	५०	सामळ [ दो० ]	७९
श्रीपति [ सा० ]	५२, ५३, ७३	सम्प्रति [ राजा ]	७०, ७८	सामळ [ सा० ]	६०, ६३, ७०, ७३, ७७, ७९, ८४
श्रीप्रम [ मुनि ]	४४	संयमश्री [ साध्वी ]	४४	सारङ्गदेव [ महाराज ]	५७, ८८
श्रीमती [ साध्वी ]	१८, १९	सरस्वती [ देवी ]	५१	सारमूर्ति [ लुळुक ]	६४
श्रीमाल [ बुळ ]	५५, ६३-६६, ६८, ७०, ७२, ७३, ७५, ७७, ७९, ८६	सरसरतीश्री [ साध्वी ]	२०	साळाक [ प्रतीहार ]	५३
श्रीमाल [ ज्ञाति ]	६०	सरस्सई [ नदी ]	९०	सानदेव [ सा० ]	५१
श्रीमाल [ नगर ]	४९, ५०	सर्वज्ञभक्त [ मुनि ]	४९	साहारण [ सागण ]	९१
श्रीमाल [ वंश ]	४३	सर्देव [ मुनि ]	५	साहळि [ सा० ]	५०
श्रीमालीय [ संघ ]	६०, ६६, ७२, ८०, ८७	सर्देव गणि	१४	सितपट	१४
श्रीमालपुरीय [ संघ ]	५७	सर्देव सूरि	४४, ४७, ४८	सिद्धकौर्ति गणि	४९
श्रीवस्त [ ठ० ]	६८	सर्देवाचार्य	२४	सिद्धसेन [ आचार्य ]	८८
श्रीणिक [ राजा ]	७०	सर्वराज [ मुनि ]	५२	सिद्धसेन [ मुनि ]	४४
श्रीपट्ट	११, १३, २६, ३०	सर्वराजगणि [ वा० ]	५९, ७१	सिद्धान्त यक्ष	५२
श्रीसाध्वर	२५, ६७, ८३	सलखण [ पुर ]	५३	सिन्धु [ देश ]	६५, ७३, ८१, ८२, ८४, ८५
श्रीसाम्बराचार्य	२४	सलखण [ सा० ]	६०-६२, ७९	सिन्धुमण्डळ	६४, ८१, ९२
पां ( सा ) ङासराय [ ग्राम ]	६८	सलखणसिंह [ मन्त्री ]	७७, ८०	सिरिमाळ [ नगर ]	९१, ९३
सकळ [ नगर ]	४९	संवेगंगशाळा [ ग्रन्थ ]	६	सिरियाणक [ ग्राम ]	६१
सकळदित [ मुनि ]	५१	सव्यगणि ( सर्वगणि )	९२	सिञ्जारवाहण	८४
संघपट्ट [ ग्रन्थ ]	४६	संरट्ट [ भाषा ]	३१, ४०, ४१	सीधपुर [ नगर ]	९०
		सहजपाल [ सा० ]	७१	सीमन्परस्ताना	७
		सहजपाळ [ साकरिया ]	५३		

सीहा [ सा० ]	६०, ६१	सोमर [ यक्ष ]	९२	हर्षप्रभा [ साध्या ]	५४
सीवा [ सा० ]	७३	सोमल [ सा० ]	५६	हर्षमूर्ति [ कुल्लुक ]	८२
सुखकीर्ति [ कुल्लुक ]	५९	सोमसुन्दर [ कुल्लुक ]	५८	हर्षसुन्दरी [ साध्या ]	५८
सुखकीर्ति गणि	७८	सोमसुन्दर गणि	६२	हस्तिनागपुर	६०, ६६, ६७
सुधर्मस्वामी	३, १७, ७७, ८२	सोमाक [ का० ]	५३	हालाक [ सा० ]	६०
सुधाकलश [ मुनि ]	५६, ६०	सोमेश्वर [ राजा ]	५९	हाँसिल [ ठ० ]	६३
सुन्दरमति [ साध्या ]	४४	सौम्यमूर्ति [ मुनि ]	५१	हाँसिल [ वै० ]	५३
सुबुद्धिराज [ मुनि ]	५२	स्तम्भतीर्थ ६०, ६२, ६९, ७७,		हिन्दुक हिन्दुक [ जाति ] ६६, ७४,	
सुबुद्धिराज गणि	६०	७८, ७९		७८, ८०, ८१, ८२	
सुमति [ मुनि ]	५	स्तम्भतीर्थीय [ सघ ] ५२, ५६, ७०		हीरमूर्ति [ कुल्लुक ]	६४
सुमतिकीर्ति [ मुनि ]	५९	स्तम्भनक [ पुर, महातीर्थ ] ६, १७,		हीरल [ सा० ]	५३
सुमति गणि	४४-७७	३९, ४९, ५१, ५५, ७८, ८६		हीरा [ त्रे० ]	५०
सुमत्तिसार [ कुल्लुक ]	७७	स्थान [ ठाणग, सूज ]	७	हीराक [ गोष्ठिक ]	५०
सुमट [ सा० ]	६१, ६५, ७०	स्थिरकीर्ति [ मुनि ]	५४	हीराकर [ मुनि ]	५२
सुरराज [ सा० ]	६६, ७९	स्थिरकीर्ति गणि [ आ० ]	५९	हुलमसिंह [ आ० ]	७७
सुरत्राय	६८, ७२	स्थिरचन्द्र [ मुनि ]	१८	हेम [ सा० ]	५०
सुरा [ सा० ]	८७	स्थिरचन्द्र गणि [ वा० ]	१९	हेमचन्द्र [ सा० ]	५५
सुराष्ट्र [ देश ]	६२, ७५, ७६	स्थिरपाल [ गोष्ठिक ]	६३	हेमतिलक [ मुनि ]	५६
सुवर्णगिरी [ पर्वत ]	५२, ५५	स्थूलमद्र	७७	हेमतिलक गणि	६०, ६२
सुडडपाल	९३, ९४	स्याद्वादरत्नाकर [ ग्रन्थ ]	८५	हेमदेवी [ गणिनी ]	२०
सूटा [ सा० ]	७८	स्वर्णगिरी [ पर्वत ] ५१, ५४, ५९		हेमपर्वत [ मुनि ]	५०
सूरप्रभ [ मुनि ]	४४, ४७	हम्भीरपत्तन [ नगर ]	१६	हेमप्रभ [ मुनि ]	४९
सूरप्रभ [ उपाध्याय ]	४९	हम्भीरपत्तनीय [ सघ ]	१३	हेमप्रभ गणि	५६
सुराचार्य	२, ३	हरिचन्द्र [ सा० ]	५५	हेमप्रभा [ साध्या ]	५४
सेढी [ नदी ]	६, ९०	हरिपाल [ ठ० ]	४३	हेमभूपण [ मुनि ]	५२
सेढ [ ठ० ]	६५, ६६	हरिपाल [ राणक ]	८६	हेमभूपण गणि	६१, ६९, ७०
सेतुज [ महातीर्थ ]	९१, ९६	हरिपाल [ सा० ] ५०-५५, ६४,		हेममूर्ति [ कुल्लुक ]	८२
सेयवर [ त्रैताम्बर ]	९०	७३, ८०, ८२-८६		हेमराज [ सा० ]	६०
सोम [ मन्त्री ]	५१	हरिपाल [ सा०री, सार्थवाह ] ६५		हेमल [ रोहण्ड, सा० ] ७३, ७५, ८५	
सोम [ राजा ]	५८	हरिप्रभ [ कुल्लुक ]	८०	हेमलक्ष्मी [ साध्या ]	६०
सोमकीर्ति [ कुल्लुक ]	८१	हरिभद्र [ मुनि ]	५	हेमश्री [ गणिनी ]	४९
सोमचन्द्र [ प० ]	५, १४, १५	हरिभद्र स्त्रि	३८	हेमसेन [ मुनि ]	५३
सोमचन्द्र [ मुनि ]	६५	हरिराज [ ठ० ]	६८	हेमसेन गणि	६९
सोमचन्द्र गणि	१६	हरिसिंह [ मुनि ]	५	हेमाक [ आ० ]	५५
सोमदेव [ मुनि ]	३४	हरिसिंहाचार्य	१५, १६, १९	हेमावटी [ गणिनी ]	४९
सोमदेव [ सा० ]	४३, ८६	हर् [ दलिक, सा० ] ५५, ७२, ७५		हेमप्यारण [ ग्रन्थ ] ३९, ७१	
सोमपञ्ज [ जटाधर ]	१, २	हर्षचन्द्र [ मुनि ]	८६	दोता [ सा० ]	८७
सोमप्रभ [ कुल्लुक ]	८०	हर्षदेव [ मुनि ]	४९		
सोमप्रभ [ मुनि ]	४४				

# गुर्वावलीगतनृपति-मन्त्रि-दण्डनायकादि-सत्ताधारिजनानां नाम्नां पृथक् सूचिः ।

अचल [ ठकुरराज ] ६५-६८, ८१	कुलवर [ महं० ] ४४, ४९	देवराज [ मंत्रीश्वर ] ६९
अचला [ ठ० ] ६७	केलहण [ राणक ] ४४	देवसिंह [ मं० ] ६४
अजित [ महं० ] ५२	केल्हा [ मं० ] ७३	देवसिंह [ ठ० ] ६६, ६७
अभयकुमार [ मंत्रीश्वर ] ७५	क्षेत्रसिंह [ प्रधान ] ५६	देहड [ ठ० ] ६४
अभयड [ दण्डनायक ] ३९, ४०, ४२, ४३	खांभराज [ दो० ] ७९	नयनसिंह [ मंत्री ] ६१
अरसिंह [ राजपुत्र ] ५६	खेतसिंह [ भां० ] ५९	नरवर्म [ नृपति ] १३
अर्णोराज [ नृपति ] १६	गज [ भां० ] ६१	नरसिंह [ भण० ] ६३, ७१
अलावदीन [ सुरग्राण ] ६७	गेहक [ मं० ] ८१	नाणचन्द्र [ मंत्री ] ६१
अश्वराज [ ठ० ] ४९	ग्यासदीन [ पातसाहि ] ७२, ७७	नावन्धर [ भां० ] ५३
आटा [ भां० ] ५३	चण्ड [ मंत्री ] ५९	नेव [ राजप्रधान ] ७२
आमुल [ ठ० ] ४४	चांचिगदेव [ नृपति ] ५१	नेमिचन्द्र [ भां० ] ४४, ९३
आम्बड [ सेनापति ] २३	चाहड [ प्रधान ] ६०	पडमसिंह [ ठ० ] ७०
आसधर [ ठ० ] १६, १७	छाहड [ भां० ] ५९	पद्म [ भां० ] ६१
आसपाल [ ठ० ] ७१	जगदेव [ प्रतीहार ] ३४, ४३	पाहा [ ठ० ] ७०
आसराज [ राणक ] ४४	जगसिंह [ भां० ] ५९	पुहविराय ( पृथ्वीराज ) [ नृपति ] ३३
उदयकर्ण [ ठ० ] ७९	जगसिंह [ भां० ] ४९	पूनसी [ महं० ] ५३
उदयसिंह [ राजप्रधान ] ८७	जवनपाल [ ठ० ] ६०, ६६ ७९	पूर्ण [ ठ० ] ६६
उदयसिंह [ नृपति ] ५०, ५१, ८७, ८८	जेसल [ मंत्री, ठ० ] ७०	पूर्णासिंह [ महं० ] ५४, ५७
फइमास [ मण्डलेश्वर ] २५-२७, २९, ३०, ३३	जैत्रसिंह [ ठ० ] ७०	पृथिवीनरेद्र ( पृथ्वीराज ) २९
फकरिड [ राजप्रधान ] २४	जैत्रसिंह [ महं० ] ५०	पृथ्वीचंद्र [ नृपति ] } ४४-४६
फर्णदेव [ नृपति ] ५८	जैत्रसिंह [ नृपति ] ६१	पृथ्वीराज [ ,, ] } २५-३३,
फर्णराज [ प्रधान ] ५६	तिहुण [ मंत्री ] ६०	४३, ४७, ८४
फाला [ राजप्रधान ] २४	थिरदेव [ ठ० ] ६४	प्रतापसिंह [ ठ० ] ६६, ८१
कुतबदीन [ पातसाहि ] } ६७	दिदा [ राजप्रधान ] २४	फेरु [ ठ० ] ६६, ६७, ७२
कुतबदीन [ सुरग्राण ] } ६६	दुर्लभ [ भण० ] ६२, ६३	वाहड [ भां० ] ५६
कुमार [ मं० ] ७७	दुर्लभराज } [ नृपति ] २, ३, ९०	मलदेव [ महं० ] ५४
कुमारपाल [ ठ० ] ६६	दुलहराय } [ नृपति ] २, ३, ९०	मउणा [ भां० ] ६३
कुमारसिंह [ ठ० ] ६५, ७०	दुस्साज [ मं० ] ६१	मरहपाल [ ठ० ] ६२
	देदा [ महं० ] ५२, ५३, ५५, ५९	मीमदेव [ नृपति ] ३४, ४३
	देदाक [ महं० ] ५३	मीमसिंह [ ,, ] २३, २४
	देपाल [ ठ० ] ६६, ७२, ७४	मीमा [ भां० ] ५९

सुरसिंह [ मंत्री ]	६१	रथपाल ( रत्नपाल )	९३	श्रीरत्न [ ठ० ]	६८
भोजराज [ म० ]	६१, ६४, ७७, ८०	राज [ मंत्रीवर ]	७०	श्रेणिक [ राजा ]	७०
भोजराज [ वृत्ति ]	२९	राजपुत्र [ भा० ]	५३	सं ( रु ? ) द्र [ राजा ]	८७
भोजा [ ठ० ]	६६	राजा [ भा० ]	५३, ५७, ७२	समरसिंह [ वृत्ति ]	५६
मण्डलिक [ वृत्ति ]	५१	राजाफ [ भा० ]	५३	सम्रति [ ,, ]	७०, ७८
मण्डलिक [ म० ]	८८	राज [ ठ० ]	६६	सखलगासिंह [ मंत्री ]	७७, ८०
मदन [ ठ० ]	६७	रामदेव [ वृत्ति ]	८८	सहणपाल [ मंत्री ]	५९
मदनपाल [ वृत्ति ]	२१, २२	रङ्गीधर [ भा० ]	५७	सागण [ म० ]	८७
मलयसिंह [ मंत्री ]	७७	रूणा [ मण० ]	६३, ७७	सामन्त [ मह० ]	५३
मल्लदेव [ महाभाष्य ]	५७	रूणा [ मण० ]	६३	सामन्तसिंह [ वृत्ति ]	५९, ८७
मल्लसिंह [ मंत्री ]	५५	रोहट [ ठ० ]	२१	सामल [ दो० ]	७९
महम्मदसाहि [ पातसाह ]	९४-९६	वयरसिंह [ म० ]	८८	सारङ्गदेव [ वृत्ति ]	५७, ८८
महीपाल [ वृत्ति ]	७५, ८८	वस्तुपाल [ महाभाष्य ]	४९, ६२, ७८	साळक [ प्रतीहार ]	५३
माधव [ मंत्री ]	५९	विजय [ ठ० ]	४४	सेहू [ ठ० ]	६५, ६६
मालदेव [ राणाक ]	६८	विजयक [ ठ० ]	४५	सोम [ मंत्री ]	५१
मीलगण ( सीलण ? )		विजयसिंह [ ठ० ]	६५, ६६, ६९, ७०	सोम [ वृत्ति ]	५८
[ दण्डाधिपति ]	५९	विज्यादित्य [ मंत्री ]	५७	सोमदेव [ ,, ]	५९
सूधराज [ म० ]	६९	विमल [ दण्डनायक ]	८९	हरिपाल [ ठ० ]	४३
सूधराज [ मन्त्री ]	६५	वीरदा [ म० ]	६६	हरिपाल [ राणाक ]	८६
मेहा [ म० ]	६६	शिरखर [ राणाक ]	८६	हरिराज [ ठ० ]	६८
रत्नपाल [ ठ० ]	६०	श्रीसखदेव [ वृत्ति ]	६१	हासिल [ ठ० ]	६३

## गुर्वावलीसमुपलब्धस्थलादिज्ञापकानां विशेषनाम्नां पृथक् सूचिः ।

अचलेसर [ दुर्ग ]	८९	उज्जयन्त [ तीर्थ ]	५, १७, ३४, ३९, ४९, ५३, ५५, ६२, ६३, ७२, ८५	क्षत्रियकुण्ड [ ,, ]	६०
अजयमेरु	[ नगर, दुर्ग ] १६, १९, २०, २४, २५	उज्जयन्त तलहट्टिका	६२, ७५	लङ्कारगढ ( दुर्ग )	७५, ७६
अजयमेरु	३३, ३४, ४४, ८४, ९१, ९२,	उज्जयिनी [ नगरी ]	१९, ५०, ५१	खंडेलपुर	९६
अणहिल पाटक	३४, ४३	उज्जैणी [ ,, ]	९०, ९२	खदिरालुका [ ग्राम ]	५९
अणहिलपुर पत्तण	९१	उज्जैणी [ पीठ ]	९२	खंभाइति [ नगर ]	९०
अणहिल पत्तण	१४	उईठविहार [ स्थान ]	६०	खाट्ट [ ग्राम ]	७२
अणहिलपुर पट्टण	९०	कडुगरी [ ग्राम ]	६६	खुपसाण [ देश ]	९५
अनहिल पत्तण	२, ८	कर्णपीठ [ ,, ]	४७	खेटनगर	३४
अम्बुधगिरि [ अर्जुनगिरि ]	८९	कन्नकगिरि [ पर्वत ]	५१	खेडनगर	८१
अंगोहर [ देश ]	१	कन्नापापुर [ ग्राम ]	४६	गणपद [ ग्राम ]	२०
अयोध्या [ नगरी ]	६०	कन्पलपन्न [ ग्राम ]	२४, ६५, ६६, ६८, ७२	गिरनार [ पर्वत ]	६२, ९१
अर्जुनगिरि	५, ५७, ६०, ६१	कारडिहटी [ वसति ]	४, ७	गुडहा [ ग्राम ]	७३, ७९, ८०
अर्जुनचल [ तीर्थ ]	९०	करहैटक [ ग्राम ]	६०	गुज्जर [ देश ]	९०
आदित्य पाटक [ नगर ]	८६	कर्पटकवाणिस्य [ ग्राम ]	९	गूर्जर [ ,, ]	८४
आरासण, -सन [ महातीर्थ ]	७१, ९७	कामिन्द्री [ नगरी ]	६०	गूर्जरा [ ,, ]	१, ४, ३४, ३६, ३८, ३९, ४३, ५७, ६४, ७०, ७१, ७२, ७८
आशापडो [ ग्राम ]	५, ३८, ३९, ६०, ७८	कासडद [ नगर ]	३६	घोवा वेळकुळ	७६
आशिका [ नगरी ]	२०	कासदह [ ग्राम ]	८९	चरसहि बोगिणी पीठ	९१
आशीदुर्ग	८	कियासपुर [ ,, ]	८२	चक ( ल ? ) रहटी	५६
आसोटा [ ग्राम ]	८७	किदिवाणा [ ,, ]	९४	घण्टिकामठ	१०
आसिका [ आशिका ]	२३-२५, ६५, ६६, ७२	कुक्षिय [ ,, ]	४४	चन्द्रावती [ नगरी ]	३४, ८७, ८८
इन्दपुर [ नगर ]	२०	कोटडिका [ स्थान ]	३२	चिचकूड दुर्गा	१०, १२-१५, १९, २०, ४९, ५६, ६९
उद्यनगर	} १९, २०, २३, ३४, ७५, ८१	कोरण्टक [ ग्राम ]	७३	चौरसिदानक [ ग्राम ]	२९
उद्यानगर		फोशनागक [ ग्राम ]	६५, ६६, ६८, ७३, ७६	जालउर [ नगर, दुर्ग ]	९२
उद्यानगरी		कोसनाथा	} ६०	जावालिपुर [ नगर ]	६, ४४, ४७-५२, ५४, ५५, ५८-६१, ६२, ६५, ७३, ७७, ७९, ८०
उद्यपुर	कौशाकी [ नगरी ]	६५, ७३, ८३, ८४, ८६		जाहेदाग्राम	५६
उद्यापुरी	६४, ६९, ८४	क्यासपुर [ ग्राम ]			

जीरापट्टी [ ग्राम ]	८६, ८७	द्रमकपुर [ ग्राम ]	६७	पावापुरी [ नगरी ]	६०
जीहरणि [ नगर ]	९२	धवलक [ नगर ]	१४	पीपलाउली [ ग्राम ]	६२
जेसलमेर [ दुर्ग ]	९२	धाटी [ ग्राम ]	४४	पुष्करिणी [ ,, ]	४४
जेसलमेरु [ नगर ]	३४, ५२, ५८, ६१, ६३, ८१, ८६	धानपाली [ ,, ]	२४	पुष्करी [ ,, ]	२३
जोगिणी पीढ	९३, ९४	धान्यूका [ नगर ]	७९	पू( स्व ) गीगिरी [ पर्वत ]	५६
जोगिणीपुर [ नगर ]	९४	धामइना [ ग्राम ]	६६, ६८, ७२	प्रह्लादलपुर [ नगर ]	४७, ४९-५२ ५४-५६, ५९, ६०, ६३, ८७
जोयळा [ ग्राम ]	५७	धारा [नगरी] १३, १८, १९, ४४		फलयर्दिका [ नगरी ]	२४, २५, ३४ ६४-६६, ७२, ७६
झुञ्झगू } [ ग्राम ]	६२, ७२	धारापुरी [ ,, ]	२०	वन्वेरक [ ग्राम ]	२०, २३, २५, ६४
झुञ्झगू }		नगरकोट [ तीर्थ ]	५०	वरडिया [ नगर ]	६०
टक्रउर [ ,, ]	५	नन्दाशर [ ,, ]	५०	वहिरामपुर [ ग्राम ]	८२, ८३, ८४
डालामउ [ ,, ]	६५	नरपालपुर [ ग्राम ]	२०	वाहडमेरु [ नगर ]	४९, ५१, ५६
डिण्डियाणा [ ,, ]	५	नरभट [ ,, ]	६५, ६६, ६८, ७२	बूजडी [ ग्राम ]	८८
डिडी [ नगरी ]	२१, २२, २४, ३४, ५०, ९२, ९४	नरवर [ ,, ]	१३	बूजद्री [ ,, ]	८७
डिडी देश	२, ४	नरसमुद्र [ पत्तन ]	७०	बूल्हानसही	७७
डिडी पीढ	९२	नरानयन [ नगर ]	२५	बृहद्द्वार [ ग्राम ]	४४, ४६
डिडीपुर	९३	नवहर [ ग्राम ]	१९	भरत [ क्षेत्र ]	३९
डिडी वा डली	१	नवहा [ ,, ]	६६, ७२	भरवच्छ [ नगर ]	९२
तग [ ला ] [ ग्राम ]	२०	नागाद्रह [ ,, ]	४४	भादानक [ ,, ]	२८, २३
तारङ्गक [ महातीर्थ ]	७१, ८२	नागपुर [ नगर ]	१३, १४, १६, १९, ६३-६६, ७३	मीमपट्टी [ ,, ]	४४, ५०, ५१, ५६, ५९, ६०, ६२-६४, ६९-७१, ७३, ७७-७९, ८७
तारण [ ,, ]	५२, ५५	नाणा [ तीर्थ ]	८१	मृगुकच्छ [ नगर ]	५५
तारणगढ [ ,, ]	५९	नारउम [ नगर ]	८६	मथुरा [ तीर्थ ]	२०, ६६-६८
तिल्लपथ [ ग्राम ]	६७	नारिन्दा [ स्थान ]	६०	मन्दिरतिलक [ प्रासाद ]	५१
तुरुष्क [ देश ]	१७, १८	पंचनद [ देश ]	९२	नम्यणवाहण [ नगर ]	९२
त्रिमुचनगिरी	१९, २०, ३४	पतिवाण ( ? )	५३	मरवट्ट [ देश ]	९२
त्रिशङ्गमक [ ग्राम ]	७१, ८७, ८८	पत्तन [ अणहिलपुर ]	२, ६, ७, १०, १४, १६, १९, ४४, ४९, ५२ ६०, ६३-६५, ६९-७३, ७५- ७७, ८१, ८६	मरकोट [ नगर ]	८, ९, १३, २०, २३, ३४, ६५, ७३
धंमणय ( धंमनक ) [ ,, ]	३५	परपुर [ कोट ] [ ग्राम ]	८४	मरुस्थल	३६, ४१, ६५
दक्षिण देस	९२	पल्ली [ ,, ]	१	मरुस्थली	१६, ३९, ५८, ६४, ८१, ८२
दारिक [ ग्राम ]	९६	परुपुर [ ,, ]	९३	मडिकपुर [ ग्राम ]	८२
दारिकरक [ ,, ]	४४	पाटला } [ ,, ]	६३, ७९	महानन [ देश ]	२०
देकगिरी [ नगर ]	६९, ९२	पाडळा }			
देवपत्तन [ ,, ]	५३	पान्हउदा [ ,, ]	७		
देवरात्रपुर [ ग्राम ]	६४, ६५, ७७, ८१, ८२, ८४, ८५				

महाविदेह [ क्षेत्र ]	५, ७, ८९	खणीवडी [ ,, ]	७२	शान्तनपुर	५१
माइयड [ ग्राम ]	९	वटपद्रक [ नगर ]	६०	शिरखिज [ ग्राम ]	७८
माङ्गलउर [ नगर ]	७५	वद्रदहा [ ग्राम ]	५६	शेरीपक [ तीर्थ ]	६२, ७८, ७९
माण्डव्यपुर [ ग्राम ]	३४, ३६, ४४	वरडिया [ ,, ]	५६	श्रीमाल [ नगर ]	४९, ५०
मारवना [ देश ]	६५	वागड [ देश ]	१२, १७-१९, ३४, ६०, ६५, ६६, ६८, ९१	पां ( खां ) डासराय [ ग्राम ]	६८
मालव [ ,, ]	९०, ९२	वाग्गड [ देश ]	४४	सकल [ नगर ]	४९
मालव्य [ ,, ]	४३	वाभटमेरु [ ग्राम ]	५०, ८०, ८६	सत्यपुर [ ग्राम ]	६३, ८०, ८६
मुद्रस्थल [ ग्राम ]	८१	वाणारसी [ नगरी ]	६०, ९५	सपादलक्ष [ देश ]	६४, ६५, ७३
मेढता [ ,, ]	६६, ६८, ७३	वादली ( दिड्डी ? )	१, २०	समेतशिखर [ तीर्थ ]	५९, ६१
मेदपाड [ देश ]	९१	वायड [ ग्राम ]	६३, ७३, ७८	संमेत [ ,, ]	५०
मोहिलवाडी [ ग्राम ]	९३	वालाक [ देश ]	७४	सरसई [ नदी ]	९०
यमुना [ नदी ]	६७	वा ( वा ) हडमेर [ नगर ]	९२	सलखण [ पुर ]	५३
यमुनापार [ प्रदेश ]	६६	विक्रमपुर [ नगर ]	१३, १८-२०, २३, २४, ३३, ३४, ४४, ५२, ५८	सागरपाट [ नगर ]	२०-२३, २५
या ( जा ) वालिपुर [ नगर ]	५१	विमलविहार [ मन्दिर ]	८१	सिन्धु [ देश ]	६५, ७३, ८१, ८२, ८४, ८५
योगिनीपुर [ नगर ]	२२, ५५, ६०, ६५, ६९, ७२, ७५, ७७, ७९	विमलाचल [ तीर्थ ]	८४	सिन्धुमुण्डल	६४, ८१, ९२
रत्नपुर [ नगर ]	६०, ६३	वीजापुर [ नगर ]	४९, ५१, ५३, ५५, ५७, ५९, ६२, ६३, ७०, ७१	सिरिमाळ [ नगर ]	९१, ९३
राजगृह [ नगरी ]	६०, ६१, ८१	वृहद्ग्राम	६०	सिरियाणक [ ग्राम ]	६१
राणककोट [ ग्राम ]	८२	व्याम्रपुर [ नगर ]	१८, २४	सिखारवाहण [ ,, ]	८४
राणकोट [ ,, ]	६३	शाङ्गेश्वरपुर [ तीर्थ ]	६०, ६३, ७४	सिचपुर [ नगर ]	९०
रुणा [ ग्राम ]	६३, ६६	शत्रुञ्जय [ महातीर्थ ]	१७, ३४, ३९, ४९, ५२, ५३, ५५, ६२, ६३, ७१, ७२, ७४-७९, ८५, ८७	सुराष्ट्र [ देश ]	६२, ७५, ७६
रुणापुरी [ ,, ]	६४	शत्रुञ्जय तलहटिका	७४, ७९	सुवर्णगिरी [ पर्वत ]	५२, ५५
रुद्रओडी [ नगर ]	९२	शम्भाणा [ ग्राम ]	६	सेढी [ नदी ]	६, ९०
रुद्रपल्ली [ गच्छ ]	९२	शम्यानयन [ ,, ]	५८-६५, ८०, ८१	सेत्तुज [ महातीर्थ ]	९१, ९६
रुद्रपल्ली [ ग्राम ]	१७, १८, २०, २१			स्तम्भतीर्थ	६०, ६२, ६९, ७७, ७८, ७९
रोहद [ ग्राम ]	६६, ६८			स्तम्भनकपुर [ महातीर्थ ]	६, १७, ३९, ४९, ५१, ५५, ७८, ८६
रवणखेटक [ नगर ]	४४, ८०			स्वर्णगिरी [ पर्वत ]	५१, ५४, ५९
ठाटहद [ ग्राम ]	८०			हम्भीरपत्तन [ नगर ]	१६
ठाडणुवाड [ ,, ]	९३			हस्तिनागपुर [ ,, ]	६०, ६६, ६७
ठारवाहण [ ,, ]	८३				

## गुर्वावलीस्थितानामवतरणरूपपद्यानामनुक्रमः ।

अश्वमि य काळमि	३९	तत्पुत्रिया अरहया	७४
अन्नं पगडं लेणं	३	तव दिव्यकाव्यदृष्टा	४७
अत्रोत्सूत्रजनक्रमः	९	तित्यपणामं काउं	७३
आचार्याः प्रतिज्ञा०	७	त्वदभिमुखमिव क्षिप्त०	४८
आययणं पि य दुविहं	५१	द्विगुरापि सद्बन्धोऽश्म	३५
आसीज्जनः कृतज्ञः	१२	धातुनिभक्तयनपेक्षम्	४७
इदमन्तरमुपपद्यते	१७	धैर्यं ते स विडोक्तताम्	५४
इन्द्रानुरोधवशतः	४८	नाणस्त दंसणस्त य	४१
ऊर्ध्वस्थितश्रोत्रारो०	३०	नास्तिकमतकृदमर०	४८
एतेषां चरितं किञ्च	१	पङ्कापहारनिखिले	६९
एवमिणं उवगरणं	४२	पञ्चैतानि पन्नित्राणि	२५
कयमल्लिणपत्तसंगह०	३३	परिसुद्धोभयपक्वं	३३
करतलधृतदीनास्ये	४८	पृथिवीनरेन्द्र । समुपाददे	२९
कोपादेकतलाघात०	४५	पृथ्वीराय ! पृथुप्रताप	३३
कौ दुर्गत्याविनाशिनी	१	प्राणा न हिंसा न	२५
चकर्त दन्तद्वयमर्जुनं शरैः—कीर्त्या	३०	प्राणान् हिंस्यात्	२६
चकर्त दन्तद्वयमर्जुनं शरैः—क्रमात्	२९	प्राणाणिकैराधुनिकैः	२३
चातुर्वर्ण्यमिदं मुदा	२२	बम्भ्रव्यन्ते तवैतास्त्रिमुन०	३२
चिरं चित्तोयाने	१२	बालाववोधेनायैव	५०
जत्य साहमिया—उत्तरगुण०	४१	बुद्धये शुद्धये ज्ञानबुद्धयै	५०
जत्य साहमिया—चरित्ता०	४२	बुधबुद्धि चक्रवाकी	४७
जत्य साहमिया—मूलगुण०	४१	ब्रह्मचारियतीना च	३
जत्य साहमिया—लिंगवैत०	४२	मगवंस्त्वयि दिवि	४८
जिनजननदिनस्नान	४८	भाग्यं तित्ययरोहिं	७
जिनपतिसूरे । भवता	४७	भवति नियतमेवासंयमः	४
जिनभवनं जिनत्रिम्बम्	११	भाव्यं भूवल्लये क्षयम्	६९
जो अवमन्नं संघं	७३	माथितप्रथितप्रतिवादि०	४७
जो चंदणेण बाहुं	६७	मयि सति कीटक्	४८
ज्ञानं मद्ददर्पहरम्	२३	मरिजा सह विजाए	८
उयोतिर्लक्षणतर्कमन्त्र०	६९	मरुदेवि नाम अजा	५
दिङ्गीनास्तन्यसाधु०	५०	मर्यादाभङ्गमतिस्मृत०	१२

भेदं मंस्था बहुपरिकरः	१६	निस्कर्जदन्तकान्तं	३०
यत्र तत्रैव गत्वाऽहम्	३८	विहितं सुवर्णसारङ्ग०	८८
यदपसरति मेघः कारणम्	४०	विहिसमहिगयसुयथो	३५
यः संसारनिरासलात्स०	७४	शत्रौ मित्रे तृणे क्षैणे	६७
यस्मिन्नस्तामितेऽखिलम्	६८	शब्दब्रह्म यदेकम्	४६
यस्यान्तर्बाहुगेहम्	२८	श्रिये कृतनतानन्दा—तव०	२
ये तुरगिपुत्रनिचतवयं (!)	६९	श्रिये कृतनतानन्दा—भवताम्	१७
रे दैव ! जगन्मातुः	४८	श्रीजिनवल्लभसूरिः	१
रे रे नृपाः ! श्रीनरवर्म०	१३	श्रीजिनशासनकानन०	४७
छद्मीस्तं स्वयमभ्युपैति	७४	सत्तर्कन्यायचर्चा	५
छलामविक्रमाक्रान्त०	२९	सा ते भवाऽनुसुप्रीता	२९
छलघशःसिताम्भोज !	२९	साहित्यं च निर्धकम्	२२
लोकभाषातुसारिण्यः	५०	सिरिसमणसंघ आसा	७३
वरकरवाला कुवलय०	२९	सुमेरौ निर्मेरैरपि सपदि	५४
वर्द्धमानं जिनं नत्वा	१	सुंदरजणसंसर्गी	४२
वामपदघातलभ्रे.	४८	स्वःश्रीविवाहकार्यम्	४८
विधा विवादाय धनं०	३०	हा ! हा ! श्रीमजिनपतिसूरे !	४८